वांदा वैसिल्युस्का की

अमर कृति

पृथ्वी और आकाश

अनुवादक

शमशेरबहादुर सिंह

दो शब्द

वैंदा वैसिल्युस्का की अमर कृति Rainbow का अनुवाद हम ठीक उस समय प्रकाशित कर रहे हैं जब हिटलरी बर्बरता का अन्त किया जा चुका है—इसमें विस्मय की बात तो हो सकती है, पर विश्व की अजेय जनता में अक्षुण्ण आस्था रखनेवालों को कभी भी अन्तिम फल के विषय में संशय नहीं हो सकता था। आज विश्व की वही स्वतन्त्रता-प्रेमी जनता देख रही है कि अपने पुरुषार्थ के बल पर उसने विश्व की सबसे बड़ी, सबसे नृशंस विभीषिका का सदैव के लिए अन्त कर दिया है। इससे बड़ी विजय की कल्पना दुष्कर है और आज इस उपन्यास को पाठकों के हाथों में देते हमें असीम हर्ष हो रहा है—पाठक पढ़कर तो देखें कि हिटलरी दरिन्दे कितनी रोमांचकारी जघन्यताओं के लिए ज़िम्मेदार हैं, कि वे मनुष्य के रूप में पशु से भी बहुत बड़े पशु हैं क्योंकि उनके पास हत्या करने और अत्याचार करने के ऐसे साधन मौजूद हैं जिनकी कल्पना भी किसी ने नहीं की थी। पर कितना भी बड़ा अत्याचार मनुष्य की जन्मजात स्वतन्त्रता का अपहरण करने में समर्थ नहीं हो सकेगा, यदि स्वतन्त्रता के ये रक्षक सामूहिक रूप से स्वतन्त्रता के लुटेरों के विरुद्ध मोर्चा लेने के लिए प्रस्तुत हो जायँ। यदि यह विश्वास—और इससे बड़ा कोई विश्वास नहीं है—जगाने में यह पुस्तक सफल हो सके तो इसने वह कार्य कर दिया है जिसका महत्व अतुलनीय है।

अनुवाद की सफलता के विषय में पाठकों का निर्णय ही अधिक प्रामाणिक होगा—हमारी कामना तो मात्र यह है कि वह हमारे पुराने अनुवादों की परम्परा को अक्षुण्ण रख सके।

१८–५–१६४५ श्रीपतराय।

पात्र

फ़ेडोसिया क्रावचुक : गाँव की स्त्री, जिसके घर में कप्तान वर्नर ज़बरदस्ती टिका हुआ था।

वास्या, वास्युट्का : फ़ेडोसिया क्रावचुक का मृत पुत्र।

कप्तान कुर्ट वर्नर : गाँव में जर्मन कमांडेण्ट।

पेलागेया राचेंको, पुस्या : कप्तान वर्नर की रखैल।

ओलेना कॉस्ट्युक : गर्भिणी स्त्री, छापेमार दस्ते की सदस्या।

जाउस : फ़ेल्डवावेल।

राश्के
फ़्रांज़ वोगल } जर्मन संतरी।

पाश्चुक : किसान, जिसे जर्मनों ने मार दिया था।

मिट्या लेवान्युक : फाँसी पर लटकाया हुआ एक किसान लड़का।

लेवान्युचिखा : उसकी मा।

वास्या माल्युक, माल्युचिखा, गाल्या : तीन बच्चों की मा।

मिशा, मिश्का, मिश्टुका : उम्र दस साल
साशा : उम्र आठ साल
ज़ीना } गालीना माल्युक के बच्चे।

येवडॉकिम, ओख़ाबो : बूढ़ा किसान
ओसिप ग्रोखाच : एक पाँव से लँगड़ा किसान
मलान्या विश्नेवा, मलाशा : गाँव की एक लड़की
शारिका : मलान्या की माँ
ओल्गा पलान्चुक : गाँव की एक लड़की
मारिया, चेचोर, चेचोरिखा : गाँव की एक स्त्री, तीन बच्चों की मा } जर्मनों की क़ैद में ज़मानती

नीना : उम्र तीन साल
ओस्का : उम्र पाँच साल
सोन्या : उम्र आठ साल } मारिया चेचोर के बच्चे।

ग्रोखाचिखा : ओस्सिप की पत्नी ।

लीडा, येव्फ्रोज़ीना, फ्रोज्या, फ्रोस्का : स्व-नियोजित अदालत की सदस्या — ग्रोखाचिखा की पुत्रियाँ

प्योटर गाप्लिक : जर्मनों द्वारा नियुक्त गाँव का मुखिया ।

अलेक्ज़ेंडर ऑव्से : 'सामूहिक खेत' का लँगड़ा साईस
गोरपीना टरपिलिखा : दादी-मा
नाटालिया लेमेश
पेलागेया, पुजिर, पुजिरीखा
— स्व-नियोजित अदालत के सदस्य

लोक्यूरिखा : गाँव की स्त्री जिसकी गाय जर्मन लोग चुरा ले गये थे ।

साव्का : उम्र दस साल
न्यूर्का
— उसके बच्चे

वान्युक, वान्युचिखा : गाँव की एक स्त्री ।

ग्रिशा : उसका बेटा, उम्र पाँच साल ।

कोवालचुक
विशेनकोवा
वान्युक
पेलचारिखा
मिज़िन्चिखा
सोन्या लिमान, सोंका
— गाँव की स्त्रियाँ ।

लेफ़्टिनेंट शालोव : लाल सेना के एक दस्ते का कमांडर ।

लेफ़्टिनेंट राचेको, सरगेई, सेरयोज़ा : पुस्या का पति ।

सारजंट सेरड्यूक
ज़ाव्यास
अलेक्सेई
वान्या
मिचेंको
— लाल सैनिक ।

पृथ्वी और आकाश

१

एक सड़क पूरब से पश्चिम को जाती थी और दूसरी उत्तर से दक्खिन को। ये सड़कें जहाँ एक नीची पहाड़ी पर मिलती थीं, वहाँ एक गाँव बस गया था। दोनों सड़कों के अगल-बगल एक दूसरे से सटी हुई झोपड़ियों की कतारों से एक चौमुखी शक्ल बन गई थी। बीच चौरस्ते के गिरजे का घंटाघर सबसे ऊपर निकला हुआ नज़र आता था। पहाड़ी के किनारे-किनारे, बर्फ़ और पाले से ढकी हुई एक नदी गहरे नाले से होकर मुड़ती हुई चली गई थी। एकाध जगह जहाँ बर्फ़ की मटीली-नीली पर्त में दरार थी, नीचे बहता हुआ पानी काला-काला चमकता दिखाई देता था।

एक स्त्री, दो बाल्टियाँ लटकाये, उन झोपड़ियों में एक में से निकली। उसकी धीमी, सधी हुई चाल के साथ-साथ दोनों लटकी हुई बाल्टियाँ बहँगी की झोंक से हिलती जाती थीं। आगे चलकर ढाल से नीचे वह उतरने लगी। फिसलन के रास्ते से वह बहुत सँभल-सँभलकर चल रही थी। बर्फ़ के ढूहों पर से आनेवाली सूर्य की चकाचौंध के कारण उसकी भवें तंग हो गईं। नदी के पास पहुँचकर उसने बाल्टियाँ बर्फ़ में सूराख़ के किनारे रख दीं और चारों तरफ़ एक दृष्टि डाली। कोई आस-पास नहीं। झोपड़ियाँ ख़ामोश, मानो बर्फ़ के लिहाफ़ में उनकी गर्दनें दबा दी गई हों। एक क्षण तक तो वह ज्यों की त्यों खड़ी रही और फिर वहीं बर्फ़ पर अपनी बाल्टियाँ छोड़कर, नदी के किनारे किनारे चलती हुई धीरे-धीरे बढ़ने लगी। फिर भी रह-रहकर वह गाँव की ओर अपनी परेशान निगाहें डालती जाती थी।

नदी अब एक और भी गहरे खाले में मुड़ गई थी, जहाँ घनी झाड़ियाँ थीं, जिनकी डालें गहरी बर्फ़ पड़ी होने के कारण मुश्किल से दीखती थीं। एक तंग रास्ता जो मुश्किल से नज़र आता था, इसी झाड़ी में होकर गया था। वह इसी रास्ते पर हो ली। झाड़ियों में अपना पथ ढूँढ़ती हुई ज्यों ही वह बढ़ी, बर्फ़ से लदी डालें लड़खड़ाईं; फिर ऊपर की डालें घूमकर उसके

मुँह पर लगीं। उसने पैनी पपड़ीली बर्फ़ से ढकी शाखों को हटाकर एक तरफ़ किया, जिससे वहाँ हलकी मुलायम बर्फ़ की एक बौछार-सी हो गई।

पगडंडी एकाएक ख़तम हो गई। वह स्त्री रुक गई और अपनी मुर्दा शीशे की-सी चमकती दृष्टि से आगे की ओर कुछ ढूँढ़ने लगी। चट्टानी दरारों, नीची पहाड़ियों और तंग नालों की वजह से भूमि यहाँ ऊँची-नीची थी। झाड़ियों के इक्के-दुक्के ठूँठ इधर-उधर खड़े थे। किन्तु वह इतने ध्यान से बर्फ़ के ढूहों को नहीं देख रही थी, न ही उन झाड़ियों को, जिनके ख़ूनी-गुलाबी से गुट्ठल, पतझड़ के बावजूद, अब भी बराय नाम बाक़ी रह गये थे।

दो क़दम वह और चली, फिर आहिस्ता से घुटनों के बल बैठ गई। वहीं पड़ा था वह। जमकर सख़्त हो गया था, और ऐसा कड़ा जैसा वायलिन का खिंचा तार। फिर भी जीते-जी जैसा वह था, उससे अब कहीं छोटा लगता था। उसका चेहरा, जैसे आबनूस की लकड़ी का किसी ने घड़कर डाल दिया हो। इसी चेहरे पर अटकी हुई उसकी आँखें फिरती रहीं, जिसके एक-एक नाक-नक्शे को वह इतनी अच्छी तरह जानती थी, किन्तु अब साथ ही साथ वह कैसा एक अजनबी का-सा चेहरा हो गया था। होंठ जमकर जड़-पत्थर हो गये थे। नथने फैल गये थे और पलकें पुतलियों के ऊपर और भी झुक आई थीं। पत्थर की मूर्ति का-सा शान्त भाव उसके चेहरे पर था। एक कनपटी के बिलकुल पास एक गोल सूराख़ मुँह खोले हुए था, जिसके किनारों पर जमा रक्त अप्राकृतिक-सी चमक लिये, गहरा सुर्ख़ था। जैसे काली सतह पर कोई ख़ूनी मुहर हो।

देखने से तो लगता था कि इस घाव से मृत्यु एकाएक ही नहीं हुई होगी। वह शायद उस समय भी जीवित था, जब दुश्मन उसके ऊपर से उसके कपड़े खींचकर उतार रहे थे। तब तक वह अवश्य जीवित अथवा गर्म था। यह मृत्यु का नहीं, बल्कि लुटेरे डाकुओं का हाथ था, जिसने उसकी टाँगें सीधी कर दी थीं और उसकी बाहों को खींचकर शरीर के बराबर मिला दिया था। लड़ाई के जिस दिन वह मारा गया था, बहुत सख़्त पाला भी पड़ रहा था, जिसने मरते हुओं को तुरन्त अपने पंजे में जकड़कर उनके जिस्म पत्थर कर दिये थे।

दुश्मन के लिए अकड़े हुए मुर्दे पर से कपड़ा उतारना सम्भव नहीं था। और लूटा तो उसे उन्होंने था ही। उसके जिस्म पर सिर्फ़ एक कमीज़ और अन्दर का जाँघिया ही वे छोड़ गये थे। उसके ओवरकोट को फाड़कर वे खींच ले गये थे। उसकी बिरजिस और बूट जूते निकाल लिये थे; यहाँ तक कि मोज़ों से भी उसके पाँव नंगे कर दिये थे। अन्दर का नीला पाजामा तो अब जैसे उसके शरीर का ही भाग था। ऐसा लगता था, मानो वह इस लकड़ी की-सी मूरत में ही बना हुआ हो, जिसे नीले रंग से रँग दिया गया था। कपड़े को खाल से अलग पहचानना अब इतना कठिन हो गया था। उसके मुर्दा काले चेहरे से भिन्न उसके नंगे पाँव पीली चाक मिट्टी के-से अमानव रंग के थे। एक पाँव पाले में अकड़कर फट गया था और हड्डी को खुला छोड़कर मुर्दा गोश्त इस तरह अलग हो गया था, जैसे जूते से उसका तला अलग हो जाता है। उस स्त्री ने अपना एक काँपता हुआ हाथ बढ़ाकर उसके जड़ काँधे को छुआ, कमीज़ के खुरदरे कपड़े और उसके नीचे जिस्म के पत्थर जैसे कड़ेपन को हाथ से महसूस किया।

'बेटे···'

वह रोई नहीं। केवल उसकी आँसुओं से रिक्त आँखें ताकती रहीं, देखती रहीं, अपने अन्दर खींचती रहीं उस दृश्य को। उसके बेटे का चेहरा काला था, जैसे लोहा। कनपटी के पास का गोल सूराख, फटा हुआ पाँव और वह इस बात का एकमात्र प्रमाण कि मरने से पहले कैसी यातना इस शरीर ने सहन की है—दरिंदों के पंजा की तरह बर्फ़ में घुसी हुई, मुड़ी हुई उसकी उँगलियाँ, उसकी अन्तिम तड़प और यातना की गवाह।

बहुत आहिस्ता से उस स्त्री ने उसके काले बालों के ऊपर से हवा से उड़कर गिरे हुए बर्फ़ को हाथ फेरकर एक तरफ़ किया। बालों का एक गुच्छा उसके माथे पर पड़ा हुआ था। उसे छूने के लिए वह अपना जी कड़ा नहीं कर पाती थी—बाल खुले हुए घाव से ऐसे चिपके हुए थे जैसे उसी में जम गये हों; जमे हुए रक्त ने उन्हें वहीं कस लिया था।

जब-जब भी वह यहाँ आई, उसकी इच्छा हुई कि बालों के उस गुच्छे को माथे पर से हटा दे। लेकिन वह उसे छूते हुए डरती थी। डरती थी कि

कहीं इससे वह जग न जाय। मानो उसके छूने से मरे हुए लड़के को पीड़ा होगी, घाव दुखेगा।

'बेटे...'

आप ही आप यंत्रवत् यह एक शब्द उसके पपड़ीले होंठ से निकल पड़ा, कि जैसे वह उसे सुन ही लेगा, कि जैसे अपनी उन भारी काली पलकों को ऊपर उठाकर वह अपनी प्यारी भूरी आँखों से उसे देखने ही लगेगा।

वह हिली-डुली नहीं, उसकी आँखें उस काले चेहरे पर ठहरी रहीं। वह ठण्ड भी अनुभव नहीं कर रही थी और न उसे इसी का ज्ञान था कि उसके घुटने सुन्न हो गये हैं। केवल वह बैठी निहारती भर रही।

नाले के ऊपर जो एकाकी पेड़ था, उस पर से एक कौआ उठकर उड़ा। हवा में अपने भारी पर मारते हुए उसने एक चक्कर लगाया और फिर एक झाड़ी के नीचे छिपे हुए कुछ चीथड़ों पर टूट पड़ा। गर्दन ऊँची करके उसने एक बार चारों ओर देखा। कपड़े पर जो गोलियों से छलनी हो रहा था, ज़ंग के-से ख़ून के दाग़ इधर-उधर लिथड़े थे। कुछ क्षण तो वह परिन्दा उसी तरह वहाँ बैठा रहा, अपनी गर्दन एक ओर को मोड़े, कि दुनिया जाने वह किसी गहरे विचार में खोया हुआ है। फिर उसने एक ठोंग मारी। ठक्। पाले की बर्फ़ अपना काम कर चुकी थी। जो कुछ भी एक महीने पहले यहाँ छूट गया था, सबको जमा कर उसने पत्थर कर दिया था।

वह स्त्री जैसे मृत्यु की गोद में अब तक स्थिर बैठी थी, चौंककर जागी।

'हिश्-श्-श...!'

कौआ बोझिल गति से वहाँ से उठा और बर्फ़ से ढके हुए मानव-शव से कुछ क़दम की दूरी पर जाकर बैठ गया।

'हिश्-श्-श...!'

उसने बर्फ़ का एक ढेला उठाकर उसकी तरफ़ मारा। कौआ कुछ दूर तक फुदकता हुआ गया, फिर धीरे-धीरे उड़कर उसी पेड़ पर अपनी जगह जा बैठा। उस स्त्री ने अपने घुटने सीधे किये और उठी, एक आह खींची, आख़िरी नज़र अपने बेटे को देखा और पगडंडी के रास्ते से मुड़ गई।

बर्फ़ की कुइयाँ से झुककर उसने थोड़ा पानी खींचा और ऊपर तक

भरी हुई बाल्टियों के बोझ से दोहरी होती धीरे-धीरे पहाड़ी के ढाल पर चढ़ने लगी। सूर्य आसमान पर काफ़ी ऊँचा चढ़ आया था, मगर बर्फ़ में उससे कोई अंतर नहीं पड़ा था। बर्फ़ नीली-सी लग रही थी, पर उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि सचमुच वह नीली ही थी, या उसकी आँखों को ही ऐसा लग रहा था, जो अभी-अभी अपने बेटे के फैले हुए जड़, चाक-से सफ़ेद डरावने पैरों का नीलापन देखकर लौटी थीं।

उसके घर के आगे ठंड से ठिठुरा हुआ संतरी इधर से उधर टहलकर पहरा दे रहा था। वह, अपने कंधों को उचकाता हुआ, अपने हाथों को बगल में दबाकर गर्माता, अपनी हथेली की कड़ी उँगलियों से अपने गालों को रगड़ता रहता था। फिर भी तीक्ष्ण पाला उसके नालदार जूतों और उसके ठंडे हरे-से ओवरकोट में घुसा जा रहा था, उसके पंजों को नखोचता और उसकी आँखों में अपने नाखून घुसाये दे रहा था। संतरी ध्यान से, घूरकर उस स्त्री की ओर देखने लगा, यद्यपि वह तभी से उससे परिचित था जब से कि अर्सा हुआ उसका रेजिमेंट इस गाँव में आया था। वह उसके पास से होकर इस तरह निकल गई जैसे उसको देखा ही नहीं। दरवाज़ा आवाज़ करता हुआ खुला और भाप का धुँआ बाहर निकला।

'इतनी देर तुमने क्यों लगाई? इस तरह रोज़-रोज़ तुम्हारे लिए मुझे इंतज़ार करना पड़े—यह मैं नहीं सह सकती!'

उसने कोई उत्तर नहीं दिया। होंठ भींचे हुए वह चूल्हे के पास आई, आग पर जो बर्तन चढ़ा हुआ था, उसमें थोड़ा पानी डाला। लकड़ी के प्रायः बुझे हुए अंगारों पर उसने कुछ लकड़ियाँ डाल दीं।

'एक गिलास पानी दो मुझे। प्यास लगी है।'

'बाल्टी में पानी रखा है। ले लो!' उसने तड़ाक से जवाब दिया।

अपने परों के लिहाफ़ के अंदर ही अंदर दूसरी स्त्री ग़ुस्से के मारे काँपने लगी।

'ठहरी रह, आने दो मेरे पति को, मैं उससे कहूँगी!'

उस स्त्री ने अपने कंधों को ज़रा झटका दिया। पति की भी एक ही रही!

उसने सूखी लकड़ियों को धीरे-धीरे अँगीठी के ऊपर चुनकर रखा। हाँ, इसी को भाग्य कहते हैं। तीन सौ किसानों के घर थे इस गाँव में, और हरेक घर से कोई न कोई लड़ाई में गया था। लेकिन एक उसी का लड़का नाले में नदी के पास पड़ा था, जिसे वहाँ पड़े हुए महीना भर हो भी चुका था, और उसको दफ़नाने तक की आज्ञा उसे नहीं मिल सकी थी। पूरे महीने भर वह उसी तरह वहाँ बर्फ़ में पड़ा रहा है, पाले ने उसके चेहरे को काला लोहे-सा कर दिया है, उसकी टाँगों को अकड़ाकर चैलों की तरह फाड़ दिया है और उसकी उँगलियों को नीला कर दिया है। और भी नौजवान वहाँ पड़े हुए थे, उनमें शत्रुओं की ओर के भी थे; किंतु वे बेटे, भाई, पति नहीं थे, वे इस गाँव से नहीं थे। उनमें एक वही अकेला इस गाँव का था। उसी के भाग्य में लिखा था यहाँ मरना, अपने ही गाँव और घर के पास, जहाँ से उसका घर कुल दो सौ क़दम की दूरी पर था। केवल उसी के भाग्य में यह देखना बदा था कि भूखे कौए किस तरह उसके बेटे की लाश पर मँडलाते रहते हैं। और फिर किसी और के घर में नहीं बल्कि उसी के घर में—मानो जान-बूझकर महज़ उसे चिढ़ाने और दिक करने के लिए यह भी होना था, कि एक जर्मन अफ़सर लाकर अपनी रखैल को वहाँ डाले। काश कि वह रखैल जर्मन जाति की होती, जो कहीं लाकर दूर से लाई हुई होती, विदेशी भाषा बोलनेवाली कोई अजनबी होती, उतनी ही घोर घृणा के योग्य, जितने ये हरे-हरे ओवरकोट डाटे हुए अफ़सर! मगर नहीं, परिस्थिति को और भी दारुण करने के लिए उस रखैल को भी यहीं की देशवासिनी होना था, जिसने अपने देश की लाज बेच दी थी, स्वयं अपने घरवालों, नातेदारों और अपने उस पति तक को छोड़ दिया था, जो लाल फ़ौज का एक कमांडर था, उन लोगों के विरुद्ध हो गई थी जिन्होंने इस गाँव के एक नाले के पास ही अपना रक्त बहाया था—उसने सबसे ग़द्दारी की थी। यह सोचकर ही उसका जी ऊब उठता था, उसका ख़ून पानी हो जाता था, कि उस औरत को उसी के घर में आश्रय मिलना था, जहाँ वह नर्म-नर्म परों के गद्दों पर लोटती थी और महारानी बनकर उसी के घर में ज़ोर-ज़ोर से हुक्म लगाती थी। उसे शर्म और हया नाम को नहीं थी; चलते फिरते, आते-जाते उसकी

दृष्टि लाज से नहीं झुकती थी। बड़े इत्मीनान और दीदा-दिलेरी से वह सड़क पर निकलती, बल्कि दूसरों से यह उम्मीद करती कि उसका हुक्म बजाने के लिए दौड़ें।

'तू ज़रा-सा और ठहर, ज़रा-सा और ठहर', उसने चूल्हे की तरफ़ मुँह करके धीरे से कहा; सोने के कमरे से जो गालियों की बौछार होती जा रही थी, उसकी तरफ़ उसका ज़रा भी ध्यान नहीं था। 'अरे, सब तेरे आगे आयेगा, अच्छी तरह तेरे आगे आयेगा। उस वक्त तू यही चाहेगी कि तू पैदा ही न हुई होती तो अच्छा था।'

उसने बाहर ड्योढ़ी में जल्दी-जल्दी आते हुए किसी के भारी क़दमों की आहट जब सुनी, तो आँख उठाकर भी नहीं देखा। बिना देखे ही वह समझ गई, कौन होगा। अलबत्ता, उसकी मुद्रा कठोर हो गई।

अफ़सर सोने के कमरे की तरफ़ चला गया। उसने चूल्हे के पास झुकी हुई स्त्री की ओर कोई ध्यान नहीं दिया।

'अरे, तुम अभी तक उठी नहीं?'

बिस्तर में पड़ी हुई स्त्री ने मान करते हुए अपने होंठ बिचका दिये।

'उठने से क्या होगा? तुम यहाँ तो कभी रहते नहीं...मुझे तो ऊब-ऊबकर रोना-सा आता रहता है। तुम तो चले जाते हो, और मेरी उस औरत के साथ दिन भर के लिए मरन हो जाती है। देख लेना, वह एक दिन मुझे ज़हर देकर रहेगी।'

वह बिस्तर के एक किनारे पर बैठ गया।

'पागलपन मत करो...तुम इस घर की मलकिन हो, समझीं? क्यों ऊबे तुम्हारा जी, आख़िर? ग्रामोफ़ोन बजाओ, तुम्हारे पास ढेरों तो रेकार्ड हैं। या पढ़ो। सच तो यह है कि मुझे एक भी ख़ाली मिनट मिलता है तो मैं उसे तुम्हारे ही साथ बिताता हूँ। यह लड़ाई है, तुम जानती हो.. हमेशा कुछ न कुछ आ ही पड़ता है।'

स्त्री ने एक आह भरी।

'बस एक ही बात, लड़ाई, लड़ाई...कम से कम तुम छुट्टी लेकर यहाँ से तो कहीं और मुझे ले ही जा सकते थे।'

अफ़सर ने अन्यमनस्क होकर कंधे हिलाये।

'पगली ! यह छुट्टी लेने का मौक़ा नहीं। और फिर अगर मैं तुम्हें अकेली जर्मनी भेज भी दूँ, तो तुम वहाँ क्या करोगी ? यहाँ एक साथ रहना ही ज़्यादा अच्छा है।'

उसने कुछ जवाब नहीं दिया। वह धीरे से उठी और कुर्सी पर से अपने कपड़े उठाने के लिए हाथ बढ़ाया। अफ़सर बिस्तर के कोने से उठकर बेंच पर बैठ गया, आँखें उसी पर केन्द्रित रहीं। हाँ, वह देखने में अच्छी लगती थी। नहीं तो वह इस तरह उसे अपने साथ तीन महीने तक टाँगे-टाँगे न फिरता। जिस क़िस्म की औरतों से वह परिचित था उनसे वह बिलकुल भिन्न थी, और यहाँ भी उसने जैसी औरतें देखी थीं, उन जैसी भी वह नहीं थी।

'सुनो, पूस्या, किसीने मुझे बताया कि इस गाँव की मास्टरनी तुम्हारी बहन होती है।'

मोज़ा उसके हाथ में लटका का लटका रह गया। कंधे पर उसने अपनी गर्दन इस तरह एक ओर को झुकाई, जैसे कोई बीमार बँदरिया झुकाये। निःसंदेह उस तरह करते समय वह बहुत आकर्षक लगती थी। एक नाज़ुक, अपार्थिव, छोटा-सा पालतू पशु।

अपने एक नन्हें से हाथ से उसने बाल कानों के पीछे किये। छोटे-छोटे हास्यास्पद कान थे, पतले-पतले, तिकोने-से, जो ऊपर की ओर नोकीले हो गये थे, जैसे जानवर के बच्चे के होते हैं। और उसके दाँत तिकोने-तिकोने थे; तीन महीने बाद आज पहली बार उसका ध्यान इस पर गया था। उनसे वह अपना निचला होंट काट रही थी।

'हाँ, तो ?'

उसने फिर अपने बालों को पीछे किया। लाक्षारंजित उसके हाथ के लाल-लाल तिकोने नाखून दरिंदों के ख़ूनी नाख़ूनों की तरह चमक रहे थे।

'हाँ, वह है मेरी बहन। तो फिर क्या हुआ ?'

'हम लोगों को अच्छी नज़र से नहीं देखती वह तुम्हारी बहन।'

पूस्या की काली-काली गोल-गोल आँखों से संदेह का भाव झलकने लगा।

'और...अ-अ...वह पसंद है तुम्हें ?'

वह खी-खी करके ज़ोर से अपनी रूखी हँसी हँस पड़ा।

'अरे नहीं ! तुम्हारा भी कहाँ ख़याल पहुँचा ! नीली आँखोंवाली मोटी औरतें मुझे पसंद नहीं आतीं। उसके मोटे-मोटे पैर तो बिलकुल...' वह कहने ही जा रहा था—जैसे मेरी बीवी के हैं, मगर ऐन मौक़े पर अपने को रोक लिया।

पूस्या ने अपने छोटे मगर सुडौल पाँवों पर एक इत्मीमान की दृष्टि डाली।

'हाँ, यह सच है, वह ज़रा मजबूत जिस्म की है ..'

'तुमने कभी नहीं बताया कि यहाँ तुम्हारी एक बहन भी रहती है।'

'मै क्यों बताती ? वह यहाँ रहती थी, मैं वहाँ। मुश्किल से कभी हमारा मिलना होता था। उसका स्वभाव मुझसे एक दम दूसरी तरह का है।'

विचार-मग्न होकर पूस्या ने अपनी एक छूटी हुई लट को ब्रुश करके पीछे किया। उसके नकली-इयरिंग चमक रहे थे।

'वह बच्चों को पढ़ाती रहती है, उसे काम ही काम लगे रहते हैं... और उससे उसे मिल क्या जाता है ? कुछ नहीं। उसे सब तरह संतोष है। सब चीज़ें उसे अच्छी लगती हैं।'

'यानी सीधे सादे लफ़्ज़ों में बोलशेविक ?'

'कौन जाने ..हो सकता है, शायद हो,' उसने अलसाहट से जवाब दिया और फिर सहसा उसका स्वर तेज़ उठा : 'क्यों तुम उसी के बारे में इतनी सब बातें पूछ रहे हो ? तुम तो कह रहे थे कि तुम्हें वह पसंद नहीं। फिर भी उसी के बारे में पूछे जा रहे हो।'

'मैं तो यों ही पूछ रहा था। अगर मुझे उसके अंदर दिलचस्पी है, तो वह इसलिए नहीं कि वह एक औरत है। तुम यक़ीन मानो, उसके औरत होने की वजह से नहीं।'

उसके स्वर में जो ख़ास संकेत था, उस पर पूस्या का ध्यान नहीं गया। वह बड़े एहतियात से अपने मोज़े पहनती रही, फिर सर पर रेशमी रूमाल का दामन खिसकाया। अफ़सर ने अपनी जेब से एक छोटा-सा पैकेट निकाला।

'यह लो, नन्हीं, मैं तो बस तुम्हें चाकलेट देने के लिए एक मिनट को तुम्हारे पास दौड़ा चला आया। अब मुझे जाना है। ढेरों काम मेरे सर पर हैं। शाम तक कामकाज में अपने को लगाये रहना। अब मुझे देरी नहीं होनी चाहिए।'

उस स्त्री ने रूखा-सा मुँह बना लिया।

'अकेले, अकेले, सारे दिन अकेले...आखिर कब यह लड़ाई ख़त्म होगी?'

'ख़त्म हो जायगी।'

'तुम्हारे लिए तो बातें ही बनाना आसान है..'

उसने लिपटा हुआ रंगीन काग़ज़ खोला और चाकलेट के अंदर अपने नोकीले दाँत गड़ा दिये; पूरे लंबे टुकड़े से तोड़कर नहीं लिया, उसी में दाँत से काटकर खाने लगी।

'ग्रामोफ़ोन पर रेकार्ड चढ़ा दो। खाना तुम्हारा यहीं तुम्हारे पास आ जाएगा। अच्छा, गुडबाई।'

उसने लापरवाही से उसको चूमा और बाहर चला गया। संतरी अभी तक मकान के आगे ज़ोर-ज़ोर से क़दम पटकता हुआ गश्त लगा रहा था, जिससे पैरों में गर्माहट आ जाय। अफ़सर को देखते ही एकदम फ़ौजी क़ायदे से सीधा तनकर खड़ा हो गया। कप्तान उसके बराबर से निकला और चौराहे की तरफ़ मुड़ गया। जिस बड़ी-सी इमारत में पहले ग्राम-पंचायत की बैठकें होती थीं, वह अब सिपाहियों, और ग़ैर-कमीशन अफ़सरों से भरी हुई थी। सबके सब सीधे तनकर खड़े हो गये और सबों ने सलामी दी। उसने बराय-नाम उनकी सलामी का जवाब दिया। कमरा नीले धुएँ के बादलों से धुँधला हो रहा था।

धक्का देकर अफ़सर ने उस कमरे का दरवाज़ा खोला जो अब उसका आफ़िस था।

'अंदर लाओ उस औरत को।'

वह मेज़ के पास जाकर बैठ गया और एक जम्हाई ली। पूस्या पर उसे ईर्ष्या हो रही थी जो बिस्तर में इस वक्त तक भी चैन से पड़ी रह सकती थी,

जब कि खुद उसे मुँह-अँधेरे ही बिस्तर छोड़ना पड़ता था ; और उस पर भी दिन भरके काम ख़त्म नहीं होते थे।

सिपाही एक स्त्री को लाये। उसने भेड़ की खाल की गर्म जाकट पहन रखी थी। उसके नीचे के वस्त्र भी काले थे। उसने अविश्वास की दृष्टि से उसको देखा।

'क्या यही है वह?'

'यही वह है।'

वह कुछ अस्वाभाविक ढङ्ग से अपने शरीर का भार सँभाले हुए मेज़ के सामने खड़ी थी। शाल के नीचे से उसके कुछ बाल जो कनपटी के पास सफ़ेद थे, बाहर निकले हुए थे। सामान्य-सा और दृढ़ उसका चेहरा था, जैसा एक मामूली किसान औरत का होता है।

'नाम।'

'ओलेना कॉस्ट्युक।'

वह एक पेन्सिल को अपनी उँगलियों के बीच में लिये हुए घुमाता रहा और सामने खड़ी स्त्री को ऊपर से नीचे तक देखता रहा। दो में से एक बात होगी : या तो सैनिकों से भूल हो गई है, या फिर उसकी ठोढ़ी की दृढ़ता और वे आँखें, जो सीधी उसकी तरफ़ देख रही थीं, बता रही थीं कि अब उसे एक लम्बी थका देनेवाली जिरह का सामना करना है।

'तुम छापेमारों के साथ थीं?'

न तो वह चौंकी, न उसने आश्चर्य प्रकट किया। अपनी आँखें बिना उसकी तरफ़ से हटाये उसने उत्तर दिया :

'मैं छापेमारों के साथ थी।'

'आह ' 'यह बात है, तो···' हठात् इस तैयार जवाब ने उसे हक्का-बक्का कर दिया। यन्त्रवत् वह सामने पड़े हुए काग़ज़ पर पेन्सिल से विचित्र-सी पत्तियों की मालाएँ बनाने लगा।

'और तुम गाँव में क्यों लौटकर आईं? और क्यों उन लोगों ने तुम्हें भेजा?'

'किसी ने मुझे नहीं भेजा। मैं आप आई।'

'अच्छा, तो तुम अपने आप आई···और क्यों आई तुम ?'

इस बार उसने उत्तर नहीं दिया। उसकी गहरी काली आँखें अफ़सर के पतले हड्डहे चेहरे पर जमी रहीं और उसकी मिटी-मिटी-सी बरौनियों के बीच में खुली हुई उसकी बेरौनक़ आँखों की तरफ़ सीधी घूरती रहीं।

'वेल ?'

वह कुछ नहीं बोली।

'यह कैसी बात है ? अभी तो तुम छापेमारों के साथ थीं और फिर एकाएक तुम अपने घर, अपने गाँव में आ जाती हो। यह क्या ढङ्ग है तुम लोगों का, वहाँ क्या—अनुशासन नहीं तुम लोगों के अन्दर ? मुनासिब तो यह है कि तुम सीधे-सीधे मुझे बता दो कि उन्होंने तुम्हें किस लिए भेजा।'

'मैं अपनी ही मर्ज़ी से आई। अब और मैं वहाँ नहीं रह सकती थी।'

'नहीं रह सकती थीं···मगर क्यों ?' उसकी उत्सुकता जगी। 'परिस्थिति बहुत ख़राब हो गई थी, एँ ? पिछले हमले में तुम्हारा कमाण्डर मारा गया था, मारा गया था न ? फिर वह जत्था तोड़ दिया गया, क्यों ?'

'मैं जत्थे के बारे में कुछ नहीं जानती। मैं अपने घर आ गई।'

'लेकिन इस तरह से एकाएक क्यों ?'

उसके होंठ तो हिले लेकिन कोई आवाज़ न निकली।

'क्या दिल से तुम्हें विश्वास हो गया था कि वह सब वाहियात, ग़ैरक़ानूनी काम था—महज़ डाकेज़नी ? और तुम इससे कोई वास्ता ही नहीं रखना चाहती थीं ?'

उसने अपना सिर हिलाया।

'नहीं···मैं वहाँ अब और रह ही नहीं सकती थी।'

'मगर क्यों नहीं ?'

कुछ कहने की उसने साफ़ कोशिश की। फिर उन बेरंग बरौनियों से घिरी उसकी चिपचिपाती पनिहायी आँखों की तरफ़ सीधे देखती हुई बोली :

'मैं बच्चा होने के लिए अपने घर आई···'

'क्या कहा ?'

'मैं बच्चा जनने···'

'तो यह बात थी…'

वह भद्दे ढङ्ग से खी-खी करके हँसा। उसकी आवाज़ से एक कँपकँपी-सी उसके पीठ में दौड़ गई।

'ठण्ड—ठण्ड लग रही है तुम्हें? यह कमरा तो गर्म है। तुम तो इस तरह गठरी बनी हुई हो जैसे बाहर पाले में खड़ी हो। अपनी शाल उतार डालो।'

आज्ञानुसार उसने अपना भारी मोटा शाल उतारकर बेंच पर रख दिया।

'कोट उतार डालो।'

वह एक क्षण के लिए झिझकी, फिर अपनी भारी जाकट के बटन खोलकर उसे भी उतार दिया। अफ़सर बहुत ध्यान से उसकी तरफ़ घूरता रहा। हाँ, निश्चय ही, यह उसका आख़िरी महीना था।

उसको साँस लेने में थकावट मालूम हो रही थी। वह समझ गया कि खड़ा रहने में उसको श्रम पड़ता है, इसीलिए जान-बूझकर वह उसके मामले को और भी लम्बा करने लगा; पेन्सिल को उँगलियों के बीच घुमाते हुए, और भी धीरे-धीरे, और देर कर-करके, उससे प्रश्न करने लगा।

उन सब प्रश्नों का जिनका उससे व्यक्तिगत सम्बन्ध था, वह तुरत का तुरत उत्तर देती गई। हाँ, वह विवाहिता थी। उसका पति लड़ाई में मर चुका था। बहुत अर्सा हुआ, तब क्रान्ति के पहले वह एक ज़मींदारी में काम करती थी। ज़मींदार का गेहूँ काटती थी, ज़मींदार की गौएँ दुहती थी। क्रान्ति के बाद से वह बराबर सामूहिक खेत में काम करती रही। छापेमार जत्था बनते ही वह उसमें शामिल हो गई थी, मगर अपनी हालत को छिपाये रही। जब अधिक चलना-फिरना उसके लिए कठिन हो गया और ज़च्चापने के दिन निकट आ गये, तब वह गाँव में वापिस चली आई। वह घर में शान्ति के साथ बच्चा जनना चाहती थी।

'अच्छा… शान्ति के साथ बच्चा जनना चाहती थीं…' उसने उसके शब्द दुहराये। 'तुमने पिछले हफ़्ते एक पुल बारूद से उड़ा दिया था?'

'उड़ा दिया था।'

'इसमें किसने तुम्हारी मदद की थी?'

'किसी ने नहीं। यह काम मैंने ख़ुद ही किया था।'

'झूठ बोल रही हो। हमें सब पता है इस बारे में—अच्छा यही होगा कि सीधे-सीधे बता दो।'

'किसी ने मदद नहीं दी थी। यह काम मैंने ख़ुद ही किया था।'

'अच्छी बात है। तो फिर छापेमार अब कहाँ हैं?'

वह चुप रही। शांतिपूर्वक उसकी गहरी काली आँखें अफ़सर के चेहरे की तरफ़ देखती रहीं। अफ़सर ने एक आह भरी। वही पुराना क़िस्सा। हठ-पूर्वक मौन, लम्बी, ख़त्म न होनेवाली जिरहें, सभी सम्भव उपायों का प्रयोग, और हमेशा की तरह सब निष्फल। वह जानता था, या तो ये लोग एकदम बातें करने लगते हैं, या फिर रत्ती भर बात के लिए भी कोई उनका मुँह नहीं खुलवा सकता था। इस बार शुरू-शुरू के जवाब से वह धोखे में आ गया था। लेकिन उसके चेहरे-मोहरे से उसने पहले पहल जो अन्दाज़ा लगाया था, वह बिलकुल सही था। उसकी ठोड़ी की दृढ़ और कठोर बनावट और उसके भिंचे हुए होंठों में आत्म-विश्वास की रेखा का मतलब साफ़ था। हाँ, वह अपने विषय में बातें करने को तैयार थी; लेकिन और दूसरे लोगों के बारे में एक शब्द भी नहीं।

'अच्छा, जब तुम गाँव में आईं, तो उससे पहले तुम कहाँ थीं?'

मौन। जिससे वह प्रश्न कर रहा था उसकी ओर न देखते हुए खीझ-कर वह अपनी पेंसिल से मेज़ को खुटखुटाने लगा। सहसा एक घोर, घिनौनी ऊब और हताश करनेवाली उकताहट से उसका मन भर गया। क्या इससे अच्छा यह नहीं होगा कि यह सब झंझट यहीं छोड़कर वह पूस्या के पास चला जाय? यह जिरह वह किसी और के सिपुर्द कर सकता था......लेकिन उस छापेमार जत्थे के बारे में, जिसने सारे ज़िले को हैरान कर रखा था, वह कम-से-कम कुछ तो उसके पेट से जैसे-तैसे निकाल ही लेना चाहता था। फिर, अपने मातहतों की बुद्धि पर उसे अधिक भरोसा नहीं था। अलावा इसके, उन्हें एक ऐसे दुभाषिये पर निर्भर रहना पड़ता, जिसे प्रांतीय भाषा का मामूली-सा ही ज्ञान था और वह कुछ अधिक चतुर भी नहीं था। स्वयं उसका इस भाषा पर धारा-प्रवाह अधिकार था, बल्कि अस्ल में दो भाषाओं पर—युक्रेनी

और रूसी। इस योग्यता में उसकी शिक्षा बिलकुल दूसरे ही तरह के कार्य के लिए हुई थी, फिर भी लड़ाई के समय उसका यह भाषा-ज्ञान बड़े काम का निकला। जो समय इनके सीखने में उसने बिताया था, वह व्यर्थ नहीं गया।

'अच्छा! तो बोलो, क्या कहना है तुम्हें? तुम्हारे कमांडर को लोग कर्ली कहकर पुकारते हैं, ठीक है न? लेकिन साफ़ ज़ाहिर है कि यह उसका रखा हुआ नाम है। उसका असली नाम क्या है?'

मौन। वह देख रहा था कि थकान के मारे उसकी हालत मुर्दा-सी हो रही है। पसीने की बूँदें उसकी कनपटियों पर, माथे पर, होठों के किनारों पर झलकने लगी थीं, उसके मुँह के दोनों तरफ़वाली सलवटें और गहरी हो गईं। उसके दोनों हाथ शिथिल होकर लटक रहे थे।

'तुम बोलोगी कि नहीं?'

सहसा उसे महसूस होने लगा कि वह स्वयं भी थक गया है। अख़! इससे कहीं अच्छा होता कि इस सब क़िस्से को छोड़-छाड़कर वह घर चला जाता। वह मन-ही-मन सोच रहा था कि सचमुच पूस्या बिस्तर से उठ गई होगी या नहीं, या कि उसकी अनुपस्थिति का फ़ायदा उठाकर वह फिर अपने लिहाफ़ में दुबक गई होगी!

लेकिन पूस्या सो नहीं रही थी। बड़ी देर तक वह अपनी पोशाक पहनती और अपने को शीशे में देखती रही। उसने ग्रामोफ़ोन पर रेकार्ड चढ़ा दिया, पर शीघ्र ही उन अति-परिचित लय के गानों से ऊब उठी। वह चाहती थी किसी से बोलना-चालना; लेकिन बोले-चाले तो किससे?

वह रसोईघर में पहुँची और वहाँ बाल्टी से लेकर पानी पिया। फ़ेडोसिया क्राव्चुक एक छोटे-से स्टूल पर बैठी आलू छील रही थी। पूस्या खिड़की के पास पड़ी हुई बेंच पर जाकर बैठ गई और आलू के उन छिलकों की ओर देखती रही जो उस स्त्री की उँगलियों के बीच में लंबी और पतली रिबन की पट्टियों की तरह गोल-गोल घूमकर नीचे रखी डलिया में गिर रहे थे।

'बेहद छोटे आलू हैं,' वह बोली।

फ़ेडोसिया ने उत्तर नहीं दिया।

'क्या ये हमेशा यहाँ ऐसे ही होते हैं?

मौन।

'तुम क्यों मुझे कभी जवाब नहीं देतीं ?'

उस स्त्री ने अपना सिर उठाया और उसकी तरफ़ ताका—उसकी दृष्टि कठोर, उपेक्षापूर्ण और निर्भय थी। वह पुनः अपने काम में झुक गई।

'कैसा मेरी तरफ़ देखती हो! तुम समझती हो कि मैं मनुष्य नहीं। दिन-दिन भर कोई एक बात भी मुझसे करनेवाला नहीं। आदमी की जान लेने के लिए यही काफ़ी है।'

उसे अपनी हालत पर अफ़सोस होने लगा, साथ-ही-साथ उसकी तबीअत मुर्झाने लगी और उसे ख़याल आया कि चाकलेट का कुछ हिस्सा उसे बचा रखना चाहिए था। जो कुछ भी कुर्ट उसके लिए लाता था, फ़ौरन् ही उसे चट कर जाने से वह कभी अपने को रोक न पाती थी।

एक आलू उछलकर बर्तन में गिर पड़ा। पानी के छींटे कच्चे फ़र्श पर बिखर गये।

'अपनी समझ से मैंने कभी तुम्हें कोई नुक़सान नहीं पहुँचाया है, पहुँचाया है क्या कभी ?'

अपनी तेज़ दृष्टि से भूरी आँखों ने बड़ी शीघ्रता के साथ उसका तात्पर्य भाँपा, लेकिन पूस्या को उत्तर कोई नहीं मिला।

'मैं हमेशा यहाँ अकेली पड़ी रहती हूँ।...बस एक मिनट को दौड़ा-दौड़ा आता है कुर्ट, फिर वैसे ही चला जाता है।...कोई नहीं जिसके साथ बातें करूँ, उठूँ-बैठूँ।...और बाहर पाला पड़ रहा है, निकलना ही असम्भव है। मैं तो यहाँ रहकर पागल हो जाऊँगी।...बस, ग्रामोफ़ोन के रेकार्ड ही बजाये जाओ। ये सारे रेकार्ड तो मुझे ज़बानी याद हैं। तुम्हें अच्छा लगता है ग्रामोफ़ोन ?'

क्रोध से उस स्त्री ने अपनी छोटी-छोटी मुट्ठियाँ इतनी ज़ोर से भींच लीं कि नाख़ून हथेली में गड़ गये।

'तुम मुझे जवाब क्यों नहीं देतीं ? मुझे हैज़े की छूत तो नहीं लगी हुई है, कि है लगी हुई ?

फ़ेडोसिया ने अपना सिर उठाया।

'तुम्हें हैज़े से भी बुरी चीज़ की छूत लगी हुई है, कहीं बुरी। तुम्हारी तो हैज़े की मौत से भी बुरी मौत होगी।'

पूस्या सन्नाटे में आ गई। उसका मुँह खुला का खुला रह गया। उसकी गोल-गोल आँखें और भी गोल होकर फैल गईं। उसे सचमुच कभी विश्वास नहीं हुआ था कि क्रावचुक कभी उससे बोलेगी। और सहसा वह बोल उठी थी, उस अर्थहीन मौन को तोड़ दिया था जो पूरे महीने भर तक चला था। और किस तरह बोली थी वह। क्या कर डालना चाहिए उसको—ज़ोर से चीख़े, कि जाय उसके पास और इतना मारे उसे कि वह रोने लगे, या उठकर वह अपने कमरे में जाय और जाकर एक सबसे अधिक चिल्लानेवाला, सबसे मज़े का रेकार्ड जो उसके पास था, चढ़ा दे। उसे स्वयं आश्चर्य था कि वह इनमें से कोई भी काम करने नहीं उठी।

'तुम आख़िर क्या चाहती हो मुझसे? फिर और मैं करती ही क्या? भूखों मर जाती? इंतज़ार में दिन काटती? किस बात के इंतज़ार में? ये लोग तो अब यहाँ बस ही गये हमेशा को। मुझे किसी तरह अपना कोई ठिकाना तो करना ही था।...मुद्दत हो गई, सेरयोज़ा तो कब का मर भी चुका होगा।... कुर्ट कुछ बुरा नहीं है, मैं जानती हूँ, बिलकुल भी बुरा आदमी नहीं, और ख़ास बात तो यह है कि अब मैं यहाँ और ज़्यादा रहना ही नहीं चाहती। और वह अपने साथ मुझे ड्रेस्डेन ले जायगा। यहाँ से वहाँ कहीं अच्छा है। यहाँ क्या थी मेरी जिंदगी? ओढ़ने-पहनने को कुछ नहीं था। एक-एक जोड़ी मोज़े के लिए जी परेशान रहता था। हमेशा यह डर कि कहीं फट न जायँ। तुम खुद जानती हो कैसा आसान है मोज़ों की नयी जोड़ी ख़रीदना!'

'देख लो, बस, यही तुम्हारा रूप है।...ठीक यही कह रही हूँ मैं।... मोज़े...! तुम्हारी बहन है। भली औरत है। मास्टरनी है। हर तरह जैसा आदमी को क़ायदे के साथ होना चाहिए, वैसी है। लेकिन तुम—मोज़े...बल्कि दर-असल जो तुम हो उस नाम से पुकारना भी मैं तुम्हें पसंद नहीं करती। और तुम्हारा कुर्ट कभी तुम्हें कहीं नहीं ले जायगा। वह तुम्हें छोड़कर एक तरफ़ करेगा जैसा कि ये लोग अपनी सभी रखेलियों के साथ करते हैं। अपने आप यहाँ से भागने के पहले ही वह तुम्हें कूड़े में फेंक जायगा। और भागना उसे

पड़ेगा ही, शर्त लगा लो। तुम जितने दिन मौज कर सकती हो, कर लो मौज, परवाह नहीं। सो लो मेरे परों के मुलायम गद्दों पर, अपने जर्मन मर्दुए के साथ। अब बहुत दिनों इस तरह तुम दोनों यहाँ नहीं बैठे रहोगे। बहुत दिनों तक नहीं। हमारे आदमी आयेंगे, और आकर चखायेंगे इसका मज़ा!'

पूस्या बेंच पर बैठी की बैठी सिकुड़ गई। इन शांत शब्दों ने उसपर कोड़ों की फटकार का काम किया। क्रोध में काँपते स्वर से किसी प्रकार ये शब्द उसके गले से निकले।

'अच्छी बात है, अच्छी बात है, मैं कहूँगी कुर्ट से, कि जब तुम पानी लेने जाती हो तो तुम्हें क्यों देर हो जाती है। जैसे ही वह आयेगा, उससे कहूँगी।'

वह स्त्री एकदम खड़ी हो गई। ताज़ा छिले हुए आलू फ़र्श पर बिखर पड़े। खटाक् से चाक़ू नीचे गिरा। उसका चेहरा पत्थर की तरह कठोर था। आगे को झुकी हुई, वह चलकर सीधी पहुँची पूस्या के सामने, जिसका मुँह भय से सफ़ेद पड़ गया था। उसने अपने पाँव बेंच के नीचे कर लिये थे, और दोनों हाथ उठाकर वक्ष पर रख लिये थे, मानो इस तरह उसकी रक्षा हो जायगी।

'तुम्हें कैसे मालूम हुआ, मैं कहाँ जाती हूँ? तुम्हें कैसे मालूम हुआ?'

पूस्या को तब ख़याल आया कि बाहर उसकी खिड़की के नीचे ही एक संतरी घूम-घूमकर पहरा दे रहा है, और उसको एक आवाज़ पुकारना ही काफ़ी होगा। इससे उसका जी सुस्थिर हो गया।

'मुझे जो कुछ भी मालूम होना चाहिए, सब मालूम है!'

'तू...!'

उसके जी में तो आया था कि वहीं गला पकड़कर उसका दम घोंट दे। उस छोटी-सी काली हस्ती को, एक गंदी, दुबकी हुई चुहिया-सी जो लग रही थी, उसको यहीं ख़त्म कर दे। लेकिन वह अपनी इस इच्छा को दबा गई। ऐसे कमज़ोर और नाज़ुक शरीर को छूने का विचार ही उसको इतना घृण्य लगा कि व्यक्त नहीं हो सकता। जैसे किसी रोगी और अपंग व्यक्ति को सामने देखकर एक स्वस्थ-चेतन मनुष्य का मन घृणा से भर उठता है। उसने थूक

दिया, तुरंत चूल्हे के पास अपने स्टूल पर वापिस आई और जल्दी-जल्दी आलू छीलने लगी। एक आलू का लंबा-सा छिलका फिर उसकी उँगलियों के बीच से निकल गया और बर्तन में से पानी फिर छप् से छलककर फ़र्श पर गिरा। और अपना सर उठाये हुए पूस्या अपने कमरे में ग्रामोफ़ोन बजाने चली गई। वह रेकार्ड छाँटने लगी। पहले तो वह कोई फड़कता हुआ रेकार्ड बजाना चाहती थी, जो बहुत ही फड़कता हुआ हो, पर अंत में उसका मन अपने से दुखी होने लगा। वह अपमान उसकी छाती पर बैठा हुआ था, उसने एक और ही रेकार्ड चढ़ा दिया।

फ़ेडोसिया बैठी आलू छीलती रही। उसे लगा कि उसका हृदय पत्थर का हो गया है। तो, वह जानती थी। वह जानती थी और अब ज़रूर अपने जर्मन मर्दुए से कह देगी। अब तक वह इस भेद को छिपाये हुए थी, जिसमें अवसर आने पर वह उसका उपयोग करे—जैसे साँप अपने ज़हर की थैली छिपाये रहता है। और अपना बदला लेने के लिए अब वह उससे कह देगी।

सोने के कमरे में एक मद्धिम पतली आवाज़ गा रही थी।

'प्रेम की आँच तपाये...'

अब क्या होगा? इसमें तो उसे संदेह नहीं था कि अफ़सर ज्यों का त्यों इस मामले को नहीं रहने देगा। पिछले संघर्ष में मरे हुओं को दफ़नाने की मनाही का हुक्म अभी तक जारी था। उन्हें पड़ा रहने दो, गाँव के पास नाले में;—उन पर आँधियाँ चलें, पाला पड़े, और कौए उन्हें खायँ! उन्हें उसी तरह नगे, लुटी हुई दशा में, वहीं पड़ा रहने दो, ताकि लोगों को शिक्षा मिले और वे आतंकित हों—यही जर्मन विजय का प्रतीक है। शुरू-शुरू में गाँववालों ने मृतकों को दफ़नाने की कोशिश की। मगर वे सफल नहीं हो पाये, क्योंकि नाले पर हमेशा पहरा रहता था। एक रात नवयुवक पाश्चुक, जहाँ पुल है वहाँ तक घिसट-घिसटकर पहुँचा, और उस रात से आज के दिन तक छाती में एक गोली, और बर्फ़ की एक ढेरी में अपना सिर रखे हुए वह भी औरों के साथ वहीं पड़ा रहा है। अस्तु, वहाँ अभी तक सब कुछ ज्यों का त्यों था। लोग समझ गये थे कि कुछ नहीं किया जा सकता।

लेकिन सारे गाँव में और किसी का भी बेटा वहाँ नहीं था। सिवाय

उसके और किसी का भी नहीं। तब इस गाँव से जो फ़ौज गुजरी थी, उसमें होना भी वास्या के ही भाग्य में था। कैसा आनंद का अवसर था वह भी!... एकाएक वह दौड़ा हुआ झोपड़ी में आया था, हँसता हुआ, मौजी, हमेशा की तरह। केवल क्षण भर के लिए था यह सब, केवल मात्र एक क्षण के लिए। और सुबह होते ही जर्मन आ गये थे, अचानक आकर घेर लिया था, और ऐन उसी दस्ते में था वास्या, जिसका, नाले के पास घेरकर उन्होंने सफ़ाया कर दिया था।

वह उसी दिन उसे वहाँ मिल गया था। उसका मन सीधा उसे उस स्थान पर ले गया, जहाँ वह पड़ा हुआ था। तब तक उसके प्राण निकल भी चुके थे, उसके कपड़े भी उतर चुके थे।

तब से एक महीना हुआ हर रोज़ वह वहीं अपने बेटे को देखने जाती रही है, जाकर देखती रही कैसे उसका शरीर सख़्त होता गया, कैसे उसमें परिवर्तन आते गये, कैसे पाले ने उसका चेहरा काला कर दिया, जैसे काला लोहा, और कैसे पाले ने उसके नंगे पाँव को फाड़ दिया। रोज़, बल्कि दिन में दो-दो बार, जब भी वह पानी लेने जाती, अपने मरे हुए बच्चे को जाकर देख लेती—अब तो वह अपने इस नियमित क्रम की आदी भी हो चुकी थी। मगर अब? अब क्या होगा?

'कोमल प्यार-दुलार के सपने तुम्हारे...' ग्रामोफ़ोन गा रहा था।

वह इस मामले को ऐसे का ऐसा ही नहीं रहने देगा, यों ही नहीं जाने देगा। अपने लिए उसे डर नहीं था। उसे डर अपने बच्चे के लिए था। अपने मरे हुए बच्चे के लिए, जो उस तरफ़ नाले में ख़त्म हो चुका था, जमकर पत्थर हो चुका था, अपने उस बच्चे के लिए, जिसकी कनपटी में गोली का सूराख़ था। यह ऐसा लगता था, मानो वह अब उसे दोबारा खोने जा रही है। वे लोग उसे उठा ले जायँगे, न जाने कहाँ किस गढ़े में उसे फेंक देंगे, उसे गालियाँ और लानतें देते हुए उसको अंग-भंग कर देंगे, उसको कुरूप बना देंगे—वे सब कुछ कर सकते थे, ओह बल्कि इससे अधिक भी सहज ही उनकी शक्ति में था।

'कोमल प्यार-दुलार के सपने तुम्हारे...'

इस ग्रामोफ़ोन से मन में असह्य खीज पैदा हो रही थी।

पूस्या अपने दिवा-स्वप्न देख रही थी और अबकी शायद दसवीं बार उसने उसी रेकार्ड को चढ़ाया था। ग्रामोफोन उस प्रेम का संगीत सुना रहा था जो बीत चुका है, उस आनंद का जो नहीं रह गया है, उन प्रेम-पत्रों का जो अर्थहीन हो गये हैं। चूल्हे के पास बैठी इस स्त्री के कारण भावों का अनुसरण करते हुए ग्रामोफ़ोन कोमल हृदय के बोल सुना रहा था। फेडोसिया क्रावचुक ने खुले चाक़ू को मुट्ठी में लेकर ज़ोर से भींच लिया, लेकिन उसे पीड़ का ज़रा भी अनुभव नहीं हुआ। जहाँ खाल कट गई थी, रक्त की एक बूँद वहाँ निकल आई। दामन के किनारे से उसने अपनी हथेली को पोंछ लिया।

'प्रेम की आँच सताये...'

वह क्या कर डाले? कैसे-क्या करे वह इसके लिए? उसे ऐसा मालूम होता था कि वास्या का जीवन उसे बचाना ही है किसी भीषण और क्रूर—स्वयं मृत्यु से अधिक क्रूर—परिस्थिति से उसे किसी प्रकार बचा लेना है। मगर वह कैसे संभव हो?

वह जानती थी कि उसे वहाँ से उठा लाना असंभव था। वह बर्फ़ के साथ ही जमकर कड़ा हो गया था, बर्फ़ की तहों ने उसे अपने अंदर जकड़ लिया था। केवल वसंत ऋतु की गर्मी ही इस हिम की शैया से उसको बंधन-मुक्त कर सकती थी। पर अगर यह भी हो जाय . उसको कैसे वह उठा पायेगी यद्यपि पंद्रह-सोलह की उम्र में जितना बड़ा वह था, उससे बड़ा अब वह नहीं लगता था। उसे वह उठा कैसे पायेगी? फिर उसे उठाकर भी वह कहाँ ले जाती, कहाँ छिपाती उसे, जो उन हत्यारों की निगाह से वह बच जाता?

'कोमल प्यार-दुलार...'

जर्मनों के दरिंदों के-से गंदे खूनी पंजे उसे छूएँगे। जर्मनों के घृणित लांगबूट उसे ठोकर लगायेंगे। जर्मनों के बैल जैसे मुँह उसको देख-देखकर दाँत निपोरेंगे, और हँस-हँसकर उसकी खिल्ली उड़ायेंगे, और वह उन्हीं के साथ कप्तान कुर्ट वर्नर की रूखी खी-खी-खी भी सुनेगी। फेडोसिया अपनी इस हताश असहाय अवस्था पर, अपनी दारुण असहायता पर, केवल हाथ

मलकर रह गई। वह भूल गई आंसुओं को, भूल गई चूल्हे की आग को, जिसके अंगारों पर अब हलकी नीली-सी राख की तह मोटी पड़ती जा रही थी, और उसी प्रकार बिना हिले-डुले वह बैठी रही। उसकी स्थिर दृष्टि सामने कहीं देख रही थी।

वह सोचा करती थी कि अब और इससे बढ़कर विपत्ति उस पर नहीं पड़ सकती। उसके दिल को करारी से करारी चोट लग चुकी थी। लेकिन अब मालूम हुआ कि ऐसी बात नहीं है। उस दिसंबर के दिन जिस काले बादल ने घिरकर गाँव को चारों ओर से छा लिया था, उसका कहीं ओर-छोर नहीं था, कोई सीमा नहीं थी, वह प्रत्येक पल आनेवाले अनगिनती संकटों से डराता रहता था।

तभी एकाएक यह प्रश्न उसके मन में उठा कि उसे कैसे यह बात मालूम हुई? किसने उसे बता दिया?

उसके मन में परिचित लोगों की सूरतें घूम गईं। मास्टरनी? नहीं, फेडोसिया ने तुरंत इस संदेह को मन से हटा दिया। यह किसी भी तरह संभव नहीं हो सकता। फिर कौन होगा?

गाँव तो, ख़ैर, जानता ही था। लेकिन गाँववाले तो सब जैसे उसके अपने घर के थे। पेलागेया कभी कहीं नहीं जाती थी; कोई उससे बात ही नहीं करता था। कैसे उसको पता लग गया होगा? इस माँ के मर्म का भेद किसने जाकर शत्रु को दे दिया था, किसने वास्या के शव, उसके रक्त, उसकी मृत्यु, उसकी यातनाओं को जर्मन जल्लादों के हाथों सौंप दिया था?

ग्रामोफोन खर्र-खर्र करके थम गया। पूस्या ने अपने नमदे के जूते पहने, और एहतियात से अपने फ़र-कोट के बटन लगाये। वह उसके कुछ बड़ा ही आता था, वह कोट; कुर्ट ने इस बस्ती में ही किसी के जिस्म पर से खींचकर उसको उतार लिया था, और लाकर उपहार में दे दिया था इसे, अपनी रखेल को। फिर भी गर्म था वह कोट, उसकी बाँहों के अंदर लुकी हुई मुट्ठियाँ गर्म रह सकती थीं, और उसका फूला-फूला बड़ा-सा कालर पाले की ठंड से गालों को बचा लेता था।

पूस्या ने बरसाती के बाहर आकर एक गहरी साँस ली। हवा बर्फ़ की

तरह पारदर्शी थी, और वैसी ही ठंडी, मानो संसार एक विशाल हिम-खंड से भर गया हो। छाया में बर्फ़ कुछ नीली-सी दिखती थी, लेकिन धूप में वह हीरों की तरह झिलमिला रही थी ; उसकी तीखी चकाचौंध, आँखों में चुभती थी। जिस पहाड़ी पर गाँव बसा हुआ था, उसके दायें और बायें नीली छायाओं और झिलमिलाती उज्ज्वलता का एक सीमाहीन क्षेत्र फैला चला गया था। पाला पृथ्वी और आकाश दोनों को अपने शिकंजे में दबाये हुए था। चौराहे पर दुबके हुए गाँव को उसने अपनी चपेट में ले लिया था। पूस्या ने अपने घर की तरफ़ देखा। कुछ सैनिक इधर-उधर अपने कामों में व्यस्त थे। गिर्जे के सामने, चौराहे पर, जहाँ तोपों की कतार दूर से काली-काली दिख रही थी, और भी अधिक सैनिक थे। लेकिन गाँववालों में से कहीं कोई भी नहीं दिखाई दे रहा था। वह आगे बढ़ गई। उसने तय कर लिया था कि कुर्ट से आफ़िस में ही जाकर मिलेगी।

चौराहे के एक तरफ़ को फाँसी बनी हुई थी—दो सीधे गड़े हुए खंभे और उन पर रखी हुई एक शहतीर। उसके बीच से एक शव लटक रहा था। पूस्या, कुर्ट की स्थानीय प्रभुता के इस चिह्न की ओर बिना ध्यान दिये, उसके पास से निकल गई। वह इसको देखने की आदी हो चुकी थी। महीना भर हुआ, जब वह कुर्ट के साथ इस गाँव में आई थी, तभी से यह नवयुवक यहाँ लटका हुआ था। सख़्त और कड़ा होकर अब उसमें और मानव-शरीर में कोई समानता शेष नहीं रह गई थी। मानव-शरीर के बजाय वह अब एक लकड़ी का कुन्दा ही अधिक था। बर्फ़ पाँव के नीचे दबकर इतनी अधिक कचर-मचर होती थी, मानो वह काँच के टुकड़ों पर चल रही थी और यह उनके कच्-कच् टूटने की असुखकर आवाज़ थी। अब वह बिलकुल सुनसान सड़क से गुज़र रही थी। मकानों की खिड़कियाँ जो ऊपर से नीचे तक सब बर्फ़ से ऐसी ढकी हुई थी जैसे उन पर तख़्ते लगा दिये गये हों, मोतियाबिन्द वाली सफ़ेद-सफ़ेद आँखों की तरह लग रही थीं। कुछेक धूएँदानों से धूआँ निकलकर ऊपर उठ रहा था—ये उन घरों के धूएँदान थे जिनमें जर्मन लोग टिक गये थे। और अन्य घरों में कोई खाना नहीं पका रहा था—पकाने को कुछ था ही नहीं।

उन घरों में से एकाएक एक द्वार खुला और हलके रंग के बालोंवाला एक सर उसमें से बाहर निकला, लेकिन देख लेने के बाद कि सड़क पर कौन चला आ रहा है, वह ग़ायब हो गया और दरवाज़ा भी फटाक् से बंद हो गया। पूस्या ने अपने कंधे झटका दिये। यह सच था कि लोग उसकी परछाईं से ऐसा बचते थे, जैसे उसे हैज़ा हुआ हो, और कोशिश करते थे कि उससे अचानक भी कहीं भेंट न हो। बच्चे अगर कहीं उसके रास्ते में पड़ जाते तो एक तरफ़ को भाग निकलते थे। अच्छा, अगर ऐसा ही बर्ताव दिखाना चाहते हैं ये लोग, तो दिखायें। चाहे कुछ हो, भूख और ठंड से तो उन्हें मरना ही पड़ेगा। और इनके भाग्य में क्या रखा है। इसके विपरीत, वह स्वयं शान के साथ, एक ख़ूबसूरत फर का कोट पहने, स्वस्थ और चुस्त, निर्द्वन्द्व फिर रही है; जितने चाहे चाकलेट वह दाँतों के नीचे कुट-कुट करती रहे, वह स्वाधीन है; और बाद में वह ठाठ से अपने कप्तान पति के साथ जर्मनी चली जायगी। हरेक को अधिकार है, अपने भाग्य को जैसा चाहे बनाये—इन लोगों ने अपने भाग्य की लीक पकड़ ली है, मैंने अपनी। मूर्ख कहीं के, उस बात में विश्वास रखते थे जो कभी नहीं होनी, और उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे जिसको कभी नहीं आना है। निराशा तो इनके भाग्य में ही लिखी है। कुर्ट ने उसे सब समझा दिया था कि कैसे जर्मन लोगों की विजय निश्चित है, और कैसे अगर ये लोग सच्चे दिल से जर्मनों का हाथ नहीं बटायेंगे तो इस सारी भीड़-भाड़ का ख़ात्मा हो जायगा। लेकिन ये तो किसी बात को समझने के लिए राज़ी ही नहीं होते, हालाँकि बात इतनी सीधी-सी थी। लेकिन ये लोग तो अपने उन लोगों की प्रतीक्षा कर रहे थे, जिन्हें अब फिर देखने की उसके, पूस्या के, मन में लेशमात्र भी उत्सुकता नहीं थी। क्या उसकी स्थिति पहले से अच्छी नहीं थी? कहीं अच्छी थी।

उसके पाँव के नीचे बर्फ़ कच्-कच् करता जा रहा था और उसकी चमक से आँखों को चकाचौंध लगती थी। कब होगा अन्त आख़िर इस कमबख़्त बर्फ़-पाले का। वह गर्माई के सुख के सपने देखने लगी। वह एक बिल्ली की तरह गुड़ी-मुड़ी होकर धूप में अपना शरीर गर्म करना चाहती थी, सूर्य की प्यारी गर्माहट अपने सारे शरीर पर अनुभव करना चाहती थी, चाहती थी

कि उसकी गर्मी उसकी हड्डी-हड्डी तक पहुँच जाय। इस समय तो चौंधिया देनेवाला सूर्य भी केवल एक बर्फ़ का तेज़ टुकड़ा था और स्वयं चारों ओर ठंड की लहरें फैलाता हुआ जान पड़ता था।

दरवाज़े पर जो संतरी था, उसने उसको तुरन्त अन्दर आने दिया। उसने जाकर दरवाज़ा खटखटाया और किसी उत्तर की प्रतीक्षा, या कुर्ट के असमंजस की पर्वाह किये बिना, सीधी आफ़िस में घुसी चली गई।

'क्या बात है?'

'बात कुछ नहीं,' उसने कुछ चिढ़े हुए स्वर से जवाब दिया। 'तुम्हारे बिना मुझे अकेला-अकेला-सा लग रहा था, बस।' उस स्त्री की, जो मेज़ के पास खड़ी थी, परिस्थिति आँकते हुए, उसने उस पर एक दृष्टि डाली। एक अधेड़ स्त्री, जिसके बाल पकने भी शुरू हो गये थे—बड़ा-सा पेट लिये हुए एक गर्भिणी। पूस्या एक कुर्सी के किनारे पर जाकर बैठ गई।

'तुम्हें जल्दी फ़ुर्सत हो जायगी?'

'मैं पहले ही कह चुका हूँ तुमसे...क्या तुम देख नहीं सकती कि मैं काम में लगा हुआ हूँ?' प्रत्यक्ष ही वह खीझ उठा था। उसको खिड़की के पास ले जाते हुए उसने गुस्से से धीरे-धीरे कहा:

'कितनी बार मैं तुम्हें मना कर चुका हूँ कि आफ़िस में मत आया करो! यह क्या तरीका है तुम्हारा! तुम देख सकती हो कि मैं काम में लगा हुआ हूँ। जैसे ही फ़ुर्सत मिलेगी, मैं घर आ जाऊँगा।'

पूस्या ने एक रूठे हुए बच्चे की तरह मुँह फुला लिया।

'यह अकेलापन मुझे खाये लेता है। तुम कम-से-कम लंच पर तो घर आ जाया करो, हम लोग साथ-साथ खाने में शरीक हो जाया करें। मैं बुरी तरह ऊब रही हूँ...तुम कभी नहीं होते घर पर...क्या मज़ा आ रहा है भला तुम्हें एक बुढ़िया खूसट से बातें करने में! क्या यह काम और कोई नहीं कर सकता?'

'नहीं, और लोग नहीं कर सकते। और यह बुढ़िया एक छापेमार है, समझीं?'

पूस्या पर जैसे गाज गिर पड़ी।

'छापेमार ! कुर्ट, कैसी बात कर रहे हो तुम। देखो उसकी तरफ़, वह तो बच्चा जनने जा रही है।'

'यही तो ! बस !' उसने बात काटकर कहा, 'अब चलो, जल्दी घर को लपक जाओ। अभी आ रहा हूँ मैं।'

दीन-सी होकर वह उसकी आस्तीन पर हाथ फेरने लगी।

'कुर्ट, डार्लिंग, मैं सिर्फ़ एक मिनट के लिए यहाँ बैठूँगी और जिरह सुनूँगी। ठीक है ? मैं तुम्हारे काम में ज़रा भी हर्ज न करूँगी, हैं ?'

'ख़ैर, बैठ लो तुम, अगर यही तुम्हारी मर्जी है, तो। मगर यहाँ भी तुम ऊबोगी ही।'

वह अपने कोट के बटन ढीले करके बैठ गई। वह अर्थहीन मुस्कान कभी उसके होठों से अलग नहीं होती थी; अपनी गोल-गोल आँखों से मेज़ के पास खड़ी स्त्री को वह देखती रही। वह एक छापेमार है। कैसी अजीब बात है, सचमुच अजीब बात है। उसको मालूम था कि कुर्ट छापेमारों से डरता था, हालाँकि उसने कभी स्वीकार नहीं किया था कि उसे किसी का भी डर है। मगर वह छापेमारों से डरता था, वह महसूस कर सकती थी इस बात को। और यद्यपि उसे नहीं मालूम था कि क्यों, मगर इस बात से उसे एक विजय का संतोष-सा मिलता था। आख़िरकार एक तो ऐसी बात थी जो उस आत्मसंतुष्ट दुर्जेय कुर्ट के अन्दर डर पैदा कर सकती थी—उसके अन्दर, जिसके पास हरेक बात का जवाब था और जिसके सामने हरेक समस्या एकदम सीधी-सादी और आसान थी।

नहीं, उसने कभी कल्पना नहीं की थी कि छापेमार ऐसे होते हैं। उसकी तो यह धारणा थी कि वे राक्षस की तरह होते हैं जो कुल्हाड़ियाँ लिये रहते हैं, जिनके बड़े-बड़े बाल होते हैं; जो बड़े रहस्यमय होते हैं, जंगलों में छिपे रहते हैं, और उस भयानक बर्फ़ की जिसने अर्से से दुनिया को अपने पंजे में कस रखा था, रत्ती भर पर्वाह नहीं करते। और यह तो एक मामूली-सी देहाती स्त्री थी, जो बल्कि गर्भिणी भी थी। उसके अत्यधिक बढ़े हुए पेट की तरफ़ पूस्या देखती रही, जिससे उसके ज़ंगी रंग का काला दामन आगे को तना हुआ था। इस बात को देखकर वह मन में सुखी हुई कि स्वयं वह

दुबली और क़द में छोटी है, और अपनी जगह पर, मुलायम फ़रों में लिपटी हुई, इत्मीनान से चुपचाप बैठी है और चाहे तो उठकर वहाँ से, वैसे ही, इत्मीनान की चाल से चली जा सकती है, जाकर ग्रामोफ़ोन बजा सकती है, कुर्ट के संग नाच सकती है—उसी शाम को, अगर वह चाहे, तो।

कुर्ट लगातार उसी नीरस, थकी हुई आवाज़ में प्रश्न करता है। और वह स्त्री उत्तर देती रही। आरम्भ में तो पूस्या ये प्रश्नोत्तर सुनती रही, पर शीघ्र ही उसे विश्वास हो गया कि यह तो सचमुच उबानेवाला काम है। कुर्ट उसी बात को बार-बार पूछता और वह उसका अपने उन्हीं शब्दों में उत्तर देती। थकान के मारे ओलेना को अपने प्राण भारी हो रहे थे। काले-काले धब्बे-से उसकी आँखों के आगे नाचने लगते थे और मेज़ के नीचे कहीं से उठ-उठकर काली लहरें उसकी आँखों में अँधेरा कर रही थीं। अपने एक-एक स्नायु पर उसे ज़ोर देना पड़ रहा था, ताकि वह उस बढ़ती हुई कालिमा का पार पा सके जो उसके चारों ओर हर चीज़ को अपने अन्दर डुबाये ले रही थी। तब मेज़ के पीछे बैठा हुआ अफ़सर उसके आगे बिखरे हुए काग़ज़-पत्र, और उसके पीछे की खिड़की के शीशे सब अँधेरे में मिट जाते थे। उसने महसूस किया कि उसके मुँह पर पसीने की बूँदें उभर आई हैं—किचकिचा, असुखकर, ठंडा पसीना। अपने हाथ उसे भारी-भारी लग रहे थे, जैसे लोहे का वज़न। और पाँव की दुखन असह्य हो गई थी। निश्चय जान पड़ता था, वे बेहद सूज उठे थे। वहाँ कितनी देर वह खड़ी रही थी? एक घंटे, दो, तीन। शायद अधिक, शायद सारा दिन हो गया था। मगर नहीं, खिड़की में से सूर्य अब भी अच्छी तरह चमक रहा था। इसलिए जिरह को इतना अर्सा नहीं हुआ था, जितना वह समझ रही थी।

उसका पेट दुखने लगा था, और अन्दर पीड़ा की ऐसी मसोस हो रही थी, जैसे कोई नसों को बाहर की तरफ़ खींच रहा हो। और उन सब यातनाओं के ऊपर एक यातना यह कि वहाँ एक स्त्री भी आ गई थी। ओलेना उसके विषय में जानती थी कि वह कौन है। और वहाँ वह अपनी बटन-सी गोल-गोल आँखें लिये बैठी थी। उसने अब सर का हैट उतार दिया था और अपने बालों को हाथ से कानों के पीछे कर रही थी। उसके कान के बुन्दे के

झूठे नग की चमक पर उसकी थकी हुई दृष्टि पड़ी और उसी पर ठहर गई। वह शीशे का नग दमककर एक नन्ही-सी चिनगारी की तरह लौ दे रहा था। तब फिर अँधेरा उसे घेरने लगा, और उसे चारों ओर से लपेटती हुई काली लहरों को सिर्फ़ एक ही किरण भेद रही थी। ओलेना के पाँव डगमगाये। उसने मुट्ठियाँ भींच लीं, और अपने को सँभालकर खड़ी हो गई। नहीं, नहीं—उसे नहीं गिरना है। उसे यहाँ नहीं गिरना है, इस रखैल के सामने जिसने इस अफ़सर के साथ सोने के लिए अपने राष्ट्र को बेच दिया था, जो अब अपने कान के बुंदे को चमका रही थी और जर्मन के हाथों एक गर्भिणी स्त्री की दुर्दशा होती हुई इस तरह देख रही थी, जैसे यह भी कोई तमाशा हो, जो उसी के मनोरंजन के लिए दिखाया जा रहा हो।

एक अर्थहीन मुस्कान पूस्या के होंठों पर मुद्रित थी, लेकिन वह ओलेना के विषय में नहीं सोच रही थी, न ही वह जिरह के सवाल-जवाब सुन रही थी। वह अपने गर्म कपड़ों में सुख से बैठी थी, और उसे यह सोचना अच्छा लग रहा था कि कुर्ट के आफ़िस में वह बैठी है, कि वही ऐसी एक हस्ती है, जो यहाँ अकेली अन्दर आ सकती है और जब जी चाहे बाहर जा सकती है! और लोगों को सिपाही किरचें ताने हुए अन्दर लाते थे और फिर एक ऐसी जगह ले जाते थे, जहाँ से कोई वापिस नहीं लौटा। और वे सब कुर्ट से कैसा डरते थे! और वह कुर्ट उसी का था, अकेले उसी का; और वह इस तरह रूठ सकती थी कि मुश्किल से मने। वह बड़ी माशे-तोला थी। और कुर्ट उसे अपनी नन्ही-मुन्नी बँदरिया कहता था, और उसे अपने साथ ड्रेस्डेन ले जानेवाला था।

'तुम एक मा हो,' कुर्ट ने कहा, और ओलेना ने, जिसका सर घूम रहा ही था, इस शब्द को इस तरह पकड़ लिया जैसे वह उसका प्राण-रक्षक हो।

हाँ, मा तो वह थी ही। न, अफ़सर के दिल में यह कभी भी न आया होगा कि उसने उसको सहारा दे दिया है—ठीक उस समय जब ज़मीन उसके पाँव के नीचे से खिसक रही थी, उसको सहारा दे दिया है। ठीक उस समय जब कि वह एक विचित्र शैथिल्य से अभिभूत हो गई थी, और जब उसके चारों ओर की प्रत्येक वस्तु अन्धकार में लीन हो रही थी।

'तुम एक मा हो...'

किसने कहा था यह ? मेज़ के पास बैठे हुए जर्मन ने, या कर्ली ने, जंगल में उसकी टुकड़ी के हँसते हुए, चेचक-रू कमाण्डर ने ?

'तुम एक मा हो...'

वह उस बच्चे के बारे में नहीं सोच रही थी, जो उसके हृदय के पास पड़ा था, जो उसके फेफड़ों से साँस खींच रहा था, और उसे सीधी खड़ी रहने से मजबूर कर रहा था। वह उन और लोगों के बारे में सोच रही थी, जो जंगल में थे—उन सब लोगों के बारे में, जो उसे मा कहते थे। उसकी उम्र उन सबसे अधिक थी—काफ़ी अधिक। और वह शत्रु की गुप्त पड़ताल करने भी निकली थी, एक पुल भी उसने तोड़ा था ; लेकिन उसने वह सब करना अपना मुख्य कार्य नहीं समझा था। वह तो असल में उन लोगों के कपड़े धोती और उनका खाना पकाती थी और उनकी ख़बर लेती थी जिनका वास्तव में कोई ख़बर लेनेवाला न था। वह तो रोगियों की सेवा और आहतों की मरहम-पट्टी करती रही थी, उनके फटे-सटे कपड़ों को सीती रही थी। साधारण रूप से एक मा जो कुछ करती है, वही वह करती रही थी। और वे सब उसे यही कहकर पुकारते थे : 'मा'

'तुम एक मा हो...'

उसके लिए ये शब्द जंगल से आई हुई एक पुकार थी—उन लोगों की ओर से, जिनका जीवन उसके मुख से निकलनेवाले मात्र एक शब्द पर अटका हुआ था। यह ऐसा था जैसा किसी को अपने कर्तव्य की चेतावनी मिल जाय। मानो, उन लोगों की ओर से यह एक शुभ-कामना थी। यह उनकी आवाज़ों की तरह थी, जो दूर से यहाँ आ रही थी।

'छापेमार लोग कहाँ छिपे हुए हैं ?'

एक-एक रास्ता उसे याद था। एक-एक झाड़ी, एक-एक पेड़ जंगल की उन झाड़ियों का। अफ़सर जिस रास्ते के बारे में उससे पूछ रहा था, वह साफ़ उसकी आँखों के सामने था। बल्कि उसे भय था कि वे पनिहायी-सी आँखें शायद अपने बेरंग बरौनियों के घेरे में से उसे देख लेंगी, उसके विचारों में उस रास्ते को ढूँढ़ लेंगी। ज़रूर उसे जल्दी-जल्दी किसी और चीज़ के

बारे में सोचना चाहिए—अपने घर के बारे में, नदी के बारे में, या अपने पड़ोसियों के बारे में। मगर फिर भी ज़बरदस्ती वह रास्ता उसकी आँखों के सामने आ जाता था—वह रास्ता, और फ़र के पेड़ों के नीचे छिपने की जगहें और कर्ला का चेचकवाला अजीब-सा हँसता हुआ चेहरा। सोलह लड़के और वह उनकी मा। हाँ उस जंगल में उसके सोलह बेटे थे, उसके सोलह बहादुर निडर बेटे। उस किसान औरत के बेटे, जो इतने लम्बे अरसे तक प्रतीक्षा करती रही थी—यहाँ तक कि वह शुभ सुख की घड़ी भी आ गई थी। उस सुख की, उस स्वतन्त्र मनुष्य के सुख की घड़ी आ पहुँची थी—जिस पर सरकारी कुर्की की मुसीबत कभी नहीं आई थी।

'मुझे इस रास्ते के बारे में कुछ नहीं मालूम। वे लोग चले गये हैं, लेकिन कहाँ चले गये हैं, मुझे नहीं मालूम।'

कुर्ट ने अपनी मुट्ठी भींच ली। लगातार चार घण्टों के सवाल-जवाब के बाद वह फिर उसी अन्त पर आ पहुँचा, जहाँ से उसने आरम्भ किया था। ग़ुस्से में उसने अपने काग़ज़-पत्र समेट लिये।

'हैन्स!'

एक सिपाही कमरे में दाख़िल हुआ।

'ले जाओ इसको उसी कोठरी में। तुम कुछ देर ठण्डक में बैठो, तो शायद उससे तुम्हारा दिमाग़ सही हो जाय। वहाँ बैठकर इस बारे में अच्छी तरह सोच चुको तो सन्तरी को आवाज़ दे देना। वह मुझे इत्तला कर देगा।'

चिढ़े हुए भाव से उसने अपनी मेज़ का खाना बन्द कर दिया।

'आओ, चलें, पूस्या, हम लोग साथ-साथ लंच खायेंगे।'

पूस्या ख़ुशी से उछल पड़ी। आख़िर उसका आना एक अच्छी ही बात हुई। वह न आती तो ज़रूर शाम तक वह नहीं बैठा रहता।

बर्फ़ की चमक से फिर उसकी आँखों में चकाचौंध होने लगी। उसके फ़ेल्ट बूट की अपेक्षा कुर्ट के बूट बर्फ़ को अधिक कचर-कचर कर रहे थे। बर्फ़ीली हवा उनके गालों पर बर्छी-सी लग रही थी।

'अरे वह क्या!'

वह ठिठक गई, और जिस तरफ़ को कुर्ट हाथ से दिखा रहा था, उधर

देखने लगी। दूर, जहाँ पृथ्वी का नीलापन आकाश के हिमाभ वर्ण में खो जाता था, एक इन्द्रधनुष झिलमिल कर रहा था। रंगों का एक सुलगता हुआ स्तंभ, जो ऊपर उठता हुआ अस्पष्ट होकर अनन्त दूरियों में लीन हो गया था। हरे, नीले, बैंगनी और गुलाबी रंग; एक पारदर्शी मरकत आलोक; शुभ्र और कोमल, जैसे रंग-बिरंगी पशम।

'इन्द्रधनुष!' आश्चर्य-चकित होकर कुर्ट बोल उठा। 'जाड़ों की ऋतु में इन्द्रधनुष...क्या ऐसी घटनाएँ भी तुम्हारे देश में होती हैं?'

पूस्या ने एक क्षण सोचा।

'नहीं, मैं तो नहीं समझती कि होती हैं। कम से कम मैंने तो ऐसी पहले कभी कोई नहीं देखी।'

कुर्ट अब भी खड़ा था वहीं। उसकी आँखें रंगों के उस सुलगते स्तम्भ पर जो पृथ्वी और आकाश के छोर मिला रहा था, टिकी हुई थीं।

'आओ भी, ठण्ड से मेरे तो पैर अकड़ गये...'

'लोग कहते हैं कि इन्द्रधनुष एक अच्छा शकुन होता है...'

आख़िरकार पूस्या का सारा धैर्य टूट गया। वह बोल उठी: 'आखिर तो इन्द्रधनुष, इन्द्रधनुष ही है' और उसकी आस्तीन खींचने लगी।

उन कुछ मिनटों में ही वे स्तम्भ ऊँचे हो गये थे, और दोनों ओर से घूमकर मिल गये थे। अब इन्द्रधनुष पृथ्वी के ऊपर एक विजय-द्वार की तरह फैला हुआ था। उसके बैंगनी और हरे और गुलाब के रंग सुनहरी-सी आभा में झिलमिला रहे थे। आकाश शीशे के एक महान् गुंबद के समान पृथ्वी को ढके हुए था, मानो वह शीशे का कोई विशाल घंटा हो। चौराहे पर बन्दूकें लिये हुए सिपाही, सिर पीछे को मोड़े हुए इस असाधारण दृश्य की ओर एकटक देख रहे थे।

वे घर पहुँचे तो फेडोसिया क्रावचुक द्वार के आगे खड़ी थी। वह भी चुपचाप दृष्टि जमाये तन्मय होकर इन्द्रधनुष की ओर देख रही थी।

'कहते हैं कि इन्द्रधनुष का शकुन अच्छा होता है,' अफ़सर ने उसके पास से गुज़रते हुए कहा।

उस अधेड़-सी स्त्री ने अकेले कन्धे यों ही से ज़रा हिला दिये।

'हाँ, हाँ, ऐसा ही कहते हैं,' एक विचित्र स्वर में उसने कहा और उन्हें रास्ता देकर एक तरफ़ को हट गई। वह स्वयं वहीं द्वार के पास खड़ी रही। उसकी बाहें नंगी थीं। केवल एक ब्लाउज़ और साया पहने वह एकदम पाले की कठोरता भूलकर वहाँ खड़ी थी। उस दीप्त दृश्य पर से, आकाश में उठे हुए उस विजय-द्वार, उस सर्वत्र फैली कोमल, स्वर्णिम आभावाले, झिलमिलाते आकाश में उठे हुए, उस विजय-द्वार पर से, उसकी आँखें नहीं हटती थीं।

२

गोल गठरी-सी बनी, कुर्ट की बग़ल में सर दिये हुए पूस्या सुख और शांति की नींद सो रही थी; उसकी साँस सम गति से चल रही थी, जैसे कोई नन्हा-सा पशु सो रहा हो। अफ़सर पीठ के बल पड़ा खुर्राटे ले रहा था। फ़ेडोसिया क्रावचुक अँगीठी के ऊपरवाले बिस्तर की आल्मारी में लेटी उसके खुर्राटे सुन रही थी। उसके 'ख़ो-ख़र्र' से उसका जी परेशान हो उठा था; लग रहा था मानो इसी वजह से उसे नींद नहीं आ रही। वह अच्छी तरह आँखें खोले हुए खिड़की की ओर देख रही थी, जहाँ चाँद की रोशनी बर्फ़ की मोटी तह के ऊपर झिलमिला रही थी। एक अजीब-सी लाल रोशनी कमरे में छनकर आ रही थी और मेज़, बेंच और फ़र्श पर रखी हुई बाल्टी, सबकी परछाइयाँ अजीब-सी लग रही थीं, और डरावनी।

फिर भी रात तो आई, आख़िरकार। दिन ख़त्म हो चुका था। एक और दिन। उस अफ़सर की रूखी खी-खी-खी-खी और उसकी रखैल की मुँह-चिढ़ाती बोली अब उसके कानों में नहीं पड़ रही थी। अब उस औरत की वह अर्थपूर्ण दृष्टि उसके सामने नहीं थी जो सारी संध्या उस पर पड़ती रही थी। जान पड़ता था कि कुछ देर के लिए उससे खेलने का ही उसने निश्चय कर लिया था—एक दम उसकी शिकायत वह अभी नहीं करेगी। नहीं, अभी उसने कुछ नहीं कहा था। वह कनखियों से फ़ेडोसिया की तरफ़ देखती रही थी, अन्दर ही अन्दर ख़ुश होती हुई। वह उसका भाव ताड़ती रही थी, इस बात का आनन्द लेती रही थी कि कैसे यह स्त्री अब बिलकुल ही उसकी दया

की भीख पर है, और यह कि वह किसी भी समय अपना वार कर सकती थी। वह अपनी इस क्षणिक शक्ति पर फूली न समाती थी। वह अब एक मा के हृदय के साथ जो चाहे कर सकती थी, और नाले की बर्फ़ में जो व्यक्ति पड़ा हुआ था, अब वह भी उसके अधिकार में था। किसी भी अवसर पर वह उसे घृण्य जर्मनों के हवाले कर सकती थी, किसी भी क्षण वह उसकी अन्तिम शान्ति भी छीन सकती थी, उसे जर्मनों के हाथों में खेलवाड़ बनने के लिए छोड़ सकती थी।

इस बिचारी का हृदय सारी शाम बहुत भारी-भारी-सा रहा था। लेकिन इस समय पड़े-पड़े जागते हुए जब कि वह खिड़की पर नीली हिलती रोशनी को देख रही थी और सोने के कमरे से आती हुई घृणित ख़ुर्राटों को सुन रही थी, सहसा उसके अन्दर विरोध की भावना तीव्र हो उठी। करने दो इन्हें, जो ये चाहें, करने दो। उसका सभी कुछ तो वे ले जा चुके थे, उसके बूट-जूतों को खींचकर उतार ले गये थे, उसका ओवरकोट और उसकी बिर्जिस भी। जर्मनों के हाथ उसे एक बार तो स्पर्श कर ही चुके थे, बर्फ़ पर उसे गिरा ही चुके थे, जब कि वह शायद ज़िन्दा था, उसे उस बर्बर शीत-पाले में गिरा ही चुके थे। एक जर्मन गोली उसका ख़ून पी ही चुकी थी। अपने गाँव की रक्षा करता हुआ वह मर ही चुका था। उसकी हँसती हुई भूरी-भूरी आँखों में देखने की शक्ति लौटकर न आयेगी, और न उसके लहरीले गीत के काँपते स्वर ही अब कभी सुने जायँगे: 'खोलो तंग, रास करो ढीली!' अगर वे दोबारा जाकर उसे गालियाँ देंगे और उसकी मिट्टी ख़राब करेंगे, तो क्या है! उन्हीं के लिए और बुरा होगा, उन्हीं के लिए और बुरा होगा। चाहे कुछ भी हो, लोग तो हँसमुख वास्या क्रावचुक को याद रखेंगे ही, जिसका गला गाँव भर में सबसे अच्छा था, जिसने अपने घर के ही पास, उसी नदी के पास अपनी जान दे दी थी, जिसमें इतनी बार उसने घोड़ों को नहलाया था, जिसने अपने गाँव के लिए, देश के लिए, भाषा के लिए, अपने देशवासियों के सुख और उनकी स्वतंत्रता के लिए जान दे दी थी। जर्मनों के हाथ उसकी याद को लोगों के दिलों से नहीं मिटा सकते! और लोग यह भी याद रखेंगे कि मरने के बाद भी उन्होंने उसको चैन से नहीं रहने

दिया था ; मरने के बाद भी उन्होंने उसकी मिट्टी की फ़जीहत की थी। अकेला उसका मा का हृदय ही इन बातों को याद नहीं करेगा। सभी याद रखेंगे। और जो लोग आनेवाले हैं, जो इन जर्मन गर्दनमार डाकुओं को आकर यहाँ से खदेड़ बाहर करेंगे, वे भी याद रखेंगे। उसके ख़ून की एक-एक बूँद के बदले में सैकड़ों बूँदें ख़ून की इन्हें भेंट देनी पड़ेंगी। जब तक वह बर्फ़ में नंगा पड़ा रहेगा, उसके एक-एक पल का, और जर्मनों के बूटों की एक-एक ठोकर का उन्हें दंड भरना पड़ेगा।

अब वह चाहती थी, जल्दी सुबह हो जाय। कर ले वह शिकायत अपने अफ़सर से, वह ज़रा-सी काली चुहिया, अपने नोकीले दाँतों के बीच में से फुंकार ले वह! जल्दी ही हो जाय यह सब! और अब देखे वह अपनी काली-काली गोल-गोल आँखों से कि फ़ेडोसिया क्रावूचुक भय से पीली नहीं पड़ जाती, चिल्लाकर रोती नहीं, उसके पैरों नहीं पड़ती, उससे बिनती करके भीख नहीं माँगती कि वे लोग उसकी एक वही चीज़ न छीन ले जायँ जो अब उसके पास रह गई है: एक बेटे का शरीर, जिसको शीत ने पत्थर बना दिया है। उस चुड़ैल ने अपनी नई खोज को छिपा रखा था, वह उससे खिलौने की तरह खेल रही थी, एक मा के भय और उसकी मार्मिक यातना से खेल रही थी, लेकिन फ़ेडोसिया उसका यह खेल बिगाड़ देगी। वह काली चुहिया इस भ्रम में न रहे; जीते जी वह उसे कभी रोती हुई, गिड़गिड़ाती हुई न पायेगी। उसके लिए कोई जीत न होगी।

फ़ेडोसिया को महसूस हुआ कि उसका हृदय पत्थर का होता जा रहा है, और उसके रक्त का प्रवाह तीव्र हो गया है, और उभरता हुआ हृदय की ओर दौड़ रहा है। और वह जानती थी कि अब कोई उसका कुछ नहीं कर सकता, किसी भी तरह कोई उसे चोट नहीं पहुँचा सकता। घृणा के दुर्भेद्य बख़्तर के कारण वह सब प्रकार के प्रहारों से सुरक्षित थी।

एक परछाईं खिड़की के नीले चमकते शीशे के ऊपर थोड़ी-थोड़ी देर बाद पड़ती रहती थी। यह संतरी था जो मकान के सामने इधर से उधर टहल-कर पहरा दे रहा था। बर्फ़ खच-खच कर रही थी उसके पावों के नीचे, और वह सुन सकती थी कैसे वह ज़ोर-ज़ोर से पावों को धप्-धप् करता हुआ टहल

रहा था, ताकि इस निष्फल कोशिश से उसके पैर जो ठिठुरकर ओला हो गये थे गर्म हो जायँ। आप ही आप वह मुस्करा उठी। पहरा दिये जाओ, दिये जाओ पहरा; क्योंकि तुम्हारा अफ़सर लूटकर छीने हुए एक किसान के बिस्तर पर, चुराई हुई एक किसान की रज़ाई के अन्दर अपनी रखैल के साथ भदकती हुई नींद ले रहा है...मगर तुम नहीं बचा सकते उसको, नहीं बचा सकते उसको, चाहे तुम और सौ-गुने ज़ोर से अपने क़दम पटको, चाहे इस कोशिश में जमकर, ठिठुरकर, तुम्हारे पैर बेकार ही क्यों न हो जायँ, चाहे इस झोपड़ी के बाहर तुम इधर से उधर इतना दौड़ो कि बेदम होकर गिर ही पड़ो...एक ऐसी रात आयेगी जब इस सुख की नींद से तुम्हें उठना पड़ेगा, और अपने रात के कपड़े पहने हुए ही, नंगे पाँव, बर्फ़ और पाले में भागना पड़ेगा। एक रात आयेगी जब तुम्हें उन लोगों से ईर्ष्या होगी जो आज बर्फ़ के नीचे दबे पड़े हैं, जब तुम लेवान्युक से ईर्ष्या करोगे, जिसका शव एक महीने से फाँसी के तख़्ते से लटकता रहा है। हाँ, वह रात आयेगी जब इस अफ़सर की रखैल को ओलेना कॉस्ट्युक के भाग्य पर ईर्ष्या होगी।

और फिर हृदय को कोंचता हुआ वही प्रश्न उठा: किसने शत्रु को उसका भेद दे दिया था? ओलेना तो चुपचाप आकर अपने घर में चली गई थी। आख़िर जर्मनों ने सबको गिन तो रखा नहीं था। गाँव की सब औरतों की गिनती करने का अवकाश ही उन्हें नहीं मिला था। ओलेना अपने घर चुपचाप बैठी रहती थी, कभी बाहर भी नहीं जाती थी। पर दो दिन भी नहीं बीते थे कि वे लोग आकर उसे घर से खींच ले गये थे और तहकीकात के लिए उसे हिरासत में डाल दिया था। किसी न किसी ने तो भेद शत्रु को दिया ही था, उसकी ख़ुफिया सूचना पहुँचाई ही थी और पेल्गेया को भी वास्या के बारे में बता दिया था। चोर कहीं तो छिपा हुआ था, इतनी ख़ूबी से छिपकर रह रहा था कि गाँव भर को उसका रत्ती भर भी पता नहीं था। वह सब कुछ देखता था, सब कुछ जानता था, सब कुछ जाकर रिपोर्ट करता था। कोई यहीं का था, जो वास्या को जानता था, ओलेना को जानता था, सबको जानता था। कौन हो सकता होगा वह?

जैसे ही ओलेना गाँव में लौटकर आई थी, उसे स्वयं मालूम हो गया

था। औरों को भी पता था; पर वे सब उसके अपने आदमी थे, उसके अपने गाँव के संगी-साथी, सामूहिक-किसान भाई-बहन, उन सैनिकों के बाप और मा जो उनके निस्सीम देश के सारे मोर्चों पर लड़ रहे थे, इन्हीं भीषण बर्फ़ और पाले के दिनों और भयानक चमकती रातों में। कौन था वह साँप, वह विषैला कीड़ा, जो देश के सुनहरी गेहूँ के दानों पर पला आज उसी में अपने विष के दाँत गड़ाये हुए था?

दूर कहीं से आती हुई आवाज़ों को वह सुन सकती थी। खुली बर्फ़ीली हवा में बर्फ़ से जकड़ी हुई रात के घोर सन्नाटे में हलकी-सी आवाज़ भी ऊँची और साफ़ सुनाई देती थी। आवाज़ें और किसी की चीखें। फेडोसिया कूद-कर नीचे आई और खिड़की की ओर दौड़ी; जिस पर से उसने एक मोटी जमी हुई बर्फ़ की तह उखाड़कर अलग कर दी। वह तह मुलायम बर्फ़ के रूप में छितरा पड़ी। खिड़की के शीशे के ऊपर अपनी गर्म साँस से फूँक मारकर उसने बर्फ़ में एक गोल-सा छेद पिघला लिया, जिसमें उसको दिखाई दे सकता था कि सड़क पर क्या हो रहा है। शीशा बार-बार धुँधला जाता था, इसलिए उसको फिर-फिर अपनी साँस से उसे गर्माकर रूमाल के कोने से पोंछते रहना पड़ता था। चौराहे तक सड़क का एक हिस्सा और वह इमारत जो पहले ग्राम-सोवियत् थी, उसे दिखाई दे रहे थे। उसी इमारत से आगे एक बड़े से शेड (टपरी) की काली छाया खड़ी थी।

उजियाली दिन के समान फैली हुई थी। चाँदनी ने सारे विश्व को एक नीले-से हिम-खंड में परिवर्तित कर दिया था। फेडोसिया साफ़ देख सकती थी: एक नंगी स्त्री चौराहेवाली सड़क पर दौड़ लगा रही थी। नहीं, वह दौड़ नहीं रही थी—वह आगे को झुकी हुई अपने भारी छोटे-छोटे क़दम रख रही थी, एक पाँव को कठिनता से दूसरे के आगे किसी तरह बढ़ाकर रख पा रही थी। चाँदनी में उसका आगे निकला हुआ पेट अच्छी तरह दिखाई दे रहा था। उसके पीछे एक सैनिक था। उसकी रायफ़ल पर किर्च चमक रही थी। जब वह स्त्री एक सेकेंड के लिए रुक जाती, तो वह किर्च उसकी पीठ में कोंच दी जाती थी। सैनिक ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाकर कुछ कह रहा था, उसके दो साथी भी चिल्ला रहे थे और वह गर्भिणी बार-बार लड़खड़ाकर आगे

को गिर पड़ती थी, फिर उठकर दौड़ने की कोशिश करती थी। पचास गज़ तक आते ही सैनिक अपने शिकार को फिर वापिस फेरते थे; पचास गज़ पीछे लौटते ही, फिर वही क्रिया दोहराई जाती थी, बार-बार, बार-बार। क्रूर सैनिक ठठाकर हँस रहे थे; उनका जंगली, वहशी क़हक़हा दीवारों को भेदकर आ रहा था।

फेडोसिया यह दृश्य एकटक देखती रही। उसकी उँगलियाँ खिड़की का चौखटा मज़बूती से पकड़े हुए थीं। तो यह हो रहा था बाहर, रात के समय, जब वह अफ़सर अपनी रखेल बीवी के साथ बिस्तर में पड़ा हुआ खुर्राटे ले रहा था। वे सैनिक पूरी स्वामिभक्ति के साथ आज्ञा का पालन कर रहे थे, और वह निश्चिन्त होकर सो सकता था।

देखो, ओलेना कॉस्ट्युक को। कभी, बहुत समय पहले, वे दोनों साथ-साथ ज़मींदारी खेतों में काम करती थीं। काँपते हुए साथ-साथ उन्होंने कारिंदों के कोड़े खाये थे। और उससे भी ज़्यादा वे उसके वासनापूर्ण अत्याचारों के आगे काँपा करती थीं। वे दोनों साथ-साथ अपने दुर्भाग्य पर आँसू बहा चुके थे। किसान लड़कियों के नीरस नैराश्यपूर्ण दुर्भाग्य।

फिर साथ ही साथ उन दोनों ने सामूहिक खेतों पर काम किया था और खुशियाँ मनाई थीं, बढ़ते हुए सामूहिक फ़ार्म के गो-धन पर, और इस बात पर कि जीवन स्वयं मुस्कराने लगा था, उनका जीवन अधिकाधिक सुखपूर्ण और आनंदमय होता जा रहा था।

और आज कैसे दुर्भाग्य ने ओलेना को घेर लिया था। पचास गज़ आगे, फिर पचास गज़ पीछे; नंगे-तन, बर्फ़ में नंगे-पाँव, बच्चा होने से एक-दो दिन पूर्व, इस प्रकार! सैनिकों का भद्दा-भद्दा मज़ाक, और ऊपर से उसकी पीठ को कोंचती हुई किचें।

फेडोसिया की पलकें नहीं भीगीं और न उसके गले से कोई चीख़ निकली। उसके वक्ष के अंदर रक्त खौलने लगा। यहाँ तक कि वह तपकर गाढ़ा और काला हो गया। यही होने को था। जब तक वे लोग यहाँ थे, इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकता था। मानो वे लोग कटिबद्ध थे, यह दिखाने के लिए, कि देखो हम क्या कुछ कर सकते हैं। मानो वे दिखा देना चाहते थे कि उनकी क्रूरता की कोई सीमा नहीं। वह ओलेना की ओर देखती

रही, लेकिन वह करुणा नहीं थी जिससे उसका हृदय भर उठा था। नहीं, करुणा के लिए वहाँ कोई स्थान नहीं था। फेडोसिया को ऐसा जान पड़ रहा था, जैसे वह स्वयं नंगे पाँव, नंगे तन, सैनिकों के खुले परिहास की चोट सहती हुई वहाँ दौड़ रही थी, जैसे वह जमी हुई काँच-सी बर्फ़ उसी के पैरों को लोहू-लुहान कर रही थी, और किर्च उसी की पीठ कोंच रही थी। यह ओलेना कॉस्ट्युक नहीं, सारा गाँव था जो मुँह के बल बर्फ़ में गिर-गिर पड़ता था और अपने भाराक्रांत शरीर को, रायफल के कुन्दों के प्रहार के कारण मुश्किल से उठा पाता था। क्रूर जमी हुई बर्फ़ पर ओलेना कॉस्ट्युक के पाँव से रक्त नहीं बह रहा था, सारा गाँव जर्मन पंजे की चोटों के नीचे अपना रक्त बहा रहा था, जर्मनों के लोहे के जूतों के नीचे, जर्मन डाकुओं के जूए के नीचे।

फ़ेडोसिया साफ़ किये हुए शीशे के छोटे-से छेद में से जी कड़ा करके देखती रही। हाँ, इसी प्रकार यह सब होना था। अपनी किर्च और बख़्तर-बन्द मुट्ठियों से जर्मन सैनिक किसानों को सिखा रहा था कि उसके असली रूप में वह उसको किस तरह पहचाने। लेकिन वह नहीं जानता था, उसको इसका गुमान भी नहीं था कि वह जनता को वास्तव में कुछ और ही सिखा रहा था—यानी, कि सोवियत् शक्ति क्या थी। वह नहीं जानता था कि जिस गाँव में भी जर्मन शासन अपने चिह्न रक्त और आँसुओं की नदियों में शेष छोड़ गया था, चाहे वह शासन एक ही दिन तक क्यों न रहा हो, फलस्वरूप अब कभी भी, अनन्त काल तक किसी पीढ़ी में भी, असन्तुष्ट आलसी व्यक्ति सोवियत् राज के प्रति उदासीन नहीं होंगे। फ़ेडोसिया को औरतों के साथ की हुई अपनी बहसें याद आ गईं, सारे पुराने और नये तर्क—आज उनका उत्तर जीवन ने स्वयं ही सामने रख दिया था। जीवन ने स्वयं उन्हें एक भीषण और गम्भीर पाठ पढ़ा दिया था।

ओलेना फिर गिरी, और उठी। कहाँ से यह शक्ति उसको मिल रही थी? फ़ेडोसिया को मालूम था। उसको मालूम था, वह महसूस कर रही थी कि ओलेना के हृदय का रक्त खौल रहा है, घृणा से तपा हुआ रक्त और इसी से यह शक्ति उसको मिल रही थी।

हरेक घर में लोग बर्फ़ से ढकी खिड़कियों के पीछे खड़े हुए अपनी साँसों

से गर्म करके बनाये हुए छोटे-छोटे छेदों में से देख रहे थे। वे सब ओलेना के साथ-साथ बर्फ़ पर दौड़ रहे थे, वे उसी के साथ लड़खड़ाकर गिर रहे थे, उठ रहे थे, किर्चों की कोंचें सहन कर रहे थे और सैनिकों का सिहरा देनेवाला भीषण अट्टहास सुन रहे थे।

सारे गाँव की आँखें उस पर जमी हुई हैं, ओलेना यह महसूस कर रही थी: उसी के गाँव की—जहाँ वह कठिन परिश्रम और निर्धनता के बीच पलकर बड़ी हुई थी, जहाँ फिर अच्छे दिन देखने को भी वह जीवित रही थी, जहाँ जीवन-सुख के तट पर पहुँचने के लिए स्वर्ण-सेतु का निर्माण करने में उसने भी हाथ बटाया था। उसके पाँवों से रक्त बह रहा था, जो जमी हुई बर्फ़ के तीखे तूदों से छिल-छिलकर लोहू-लुहान हो रहे थे। पीड़ा उसकी अँतड़ियों को चबाये डाल रही थी। उसके कान बज रहे थे। वह फिर लड़-खड़ाई; रायफल के कुन्दे की मार उसने मुश्किल से महसूस की। वह इसलिए नहीं उठती थी कि वे उसे मारते थे। नहीं, वह सैनिकों के बूटों-तले रौंदी जाने के लिए सड़क पर पड़ी नहीं रह सकती थी, पड़ी रह ही नहीं सकती थी। वह शत्रु को यह जानने का सन्तोष नहीं दे सकती थी—दे ही नहीं सकती थी—कि वे उसे घोर यन्त्रणा दे रहे हैं, कि वे दिक़ कर-करके उसकी जान निकाल रहे हैं, जैसे कोई ताज़ी कुत्ता ख़रगोश के पीछे पड़कर उसे मार डाले। वास्तव में वह कोई पीड़ा अनुभव नहीं कर रही थी। ख़ून से तर-ब-तर था उसका शरीर, वह गिरता था, बर्फ़ पर अपने आपको खींचता था। पर यह ऐसा था मानो ओलेना ख़ुद शरीर से बाहर कहीं थी। मानो ज्वर के सन्निपात में वह सड़क को और इन सिपाहियों को देख रही थी। उसके कान बज रहे थे, झनझना रहे थे। 'मा!' कर्ली हँसकर उसे पुकारता था; सर के बहुत ऊपर पेड़ों की फुनगियाँ काना-फूसी कर रही थीं, हवा उन्हें झुला रही थी। तम्बुओं के, जिनमें वे गुप्त आश्रय लेते थे, लट्ठे कड़कड़ा रहे थे। तेज़ लपटें पुल के शहतीरों पर रेंगती हुई बढ़ रही थीं, अपने शोलों की ज़बान से उन्हें चाट रही थीं, और उन्हें खाती हुई बढ़ रही थीं। मिकोला लड़ाई पर जा रहा है, सड़क के मोड़ पर पहुँचकर वह अपना हाथ हिला रहा है।

ओलेना गिरी। बड़ी मुश्किल से अपने हाथों पर अपना बोझ सँभालते हुए उसने अपने आप को फिर उठाया।

'ज़रा तेज़ी दिखाओ अब!' पीछे-पीछे आनेवाला सैनिक चीख़ा।

'एक कस कर दो उसके पेट में,' दूसरे ने सलाह दी।

'वह वक्त से पहले ही अपना बोझ गिरा देगी,' पहले ने दाँत निपोरते और किर्च से उसे कोंचते हुए कहा। 'अभी तक उसने मुँह नहीं खोला है। उसे कुछ हाँ-ना शुरू करना ही पड़ेगा!'

'परवाह मत करो, जो कुछ भी कप्तान मालूम करना चाहता है, वह सब इसके पेट से निकलवा लेगा, अँतड़ियों समेत।'

'कह रहा हूँ! हे, हे! आगे को खिसकती चल,' पहला सैनिक चिल्लाकर बोला।

किर्च की नोक गिरी नीचे। एक पतली-सी खून की धार स्त्री की पीठ से बह चली।

'ज़रा फुर्ती से क़दम बढ़ाओ। क्या समझ रही हो तुम, कि यहाँ अपने यार-लौंडों के साथ टहलने निकली हो?'

जो कुछ वे कह रहे थे उसका एक शब्द भी वह स्त्री नहीं समझती थी, पर उनके लिए सब एक ही बात थी। फटकारें और भद्दी-भद्दी गालियाँ देकर चिल्लाने से ही उनके मन को काफ़ी सन्तोष मिल रहा था। वे थक गये थे और अब झल्ला रहे थे। पाले की ठिरन बढ़ती ही जा रही थी और इस कमबख्त औरत की वजह से उनका ख़ून ठण्ड में जमा जा रहा था, नहीं तो वे चैन से पड़कर सोते होते। वे उसे सबक़ देना चाहते थे और अपनी थकावट और जागने का बदला उस पर उतारना चाहता थे।

उस रात तो भयानक पाले ने असामान्य रूप से पृथ्वी को जकड़ लिया था। मालूम होता था, यह चन्द्रमा तक चला गया है और उसे भी जमाकर ठोस कर दिया है। चाँदी-सी चाँदनी ने इन्द्रधनुष के रंगों को सोख लिया था, जो इस समय आकाश के पर्दे पर ऐसी धुँधली पट्टी की तरह खिंचा हुआ था कि मुश्किल से दिखाई देता था। लेकिन चन्द्रमा के दोनों ओर दो स्तम्भ खड़े थे। वे क्षितिज से उभरकर, चन्द्रमण्डल के दोनों बाजुओं से ऊँचे होकर

उठ गये थे, जैसे विजय-द्वार की मेहराब के स्तम्भ हों। चाँदी के हिम-पाले में वे चमक रहे थे, सुदूर-आकाश से जिसमें डूबकर वे पृथ्वी के छोर में समा गये थे।

'बढ़ो, डैम यू!' वे अपनी पूरी शक्ति से चिल्ला रहे थे। इसका यही कारण नहीं था कि वे इस तरह ज़ोर से चिल्लाना चाहते थे। रात्रि से वे भयभीत हो रहे थे, वह उन्हें आतंकित कर रही थी। अपनी चीख़ और चिल्लाहट से वह उस आतंक को कहीं खो देना चाहते थे, जो उनके हृदय पर छाये जा रहा था। उस रहस्य का पर्दा वे चीरकर हटा देना चाहते थे, रात्रि के इन प्रेत-से प्रहरों में वे साधारण वातावरण का कुछ अंश लाना चाहते थे। चाँदनी ऐसी फैली हुई थी जैसे दिन। झलझलाती चाँदनी ने प्रत्येक वस्तु को अपनी रंग-बिरंगी किरणों से ओत-प्रोत कर दिया था। जैसे उन्होंने पहले कभी नहीं देखे थे, ऐसे प्रकाश के स्तंभ उनके सामने नाचते थे और रंगों से सुलग-सुलग उठते थे। नीला-नीला बर्फ़ जैसा उन्होंने पहले कभी नहीं देखा था, इस समय चाँदनी में झिलमिल कर रहा था। और उनके पाँव के नीचे बर्फ़ कुड़कुड़ाकर बजता था। घोर पाले का ऐसा उदाहरण सामने था जैसा कि उन्होंने पहले कभी अनुभव नहीं किया था और जिसके दुनिया में कहीं होने की कल्पना भी कभी उनके स्वप्न में नहीं आई थी। सड़क के किनारे-किनारे सब मकान अन्धकारमय और नीरव थे। कहीं कोई प्राणी नहीं। केवल झोपड़ियों के मकान, जिनकी बर्फ़ से जमी हुई खिड़कियाँ ज़िन्दा आँखों की तरह घूर रही थीं। मकानों की परछाईं के घने अन्धकार में आँखें चमक रही थीं, मानो किसी चुंबक-शक्ति से आकृष्ट थीं। अँधेरी अमावस्या की रात में जर्मनों को इस तरह बाहर निकलने का साहस न हुआ होता। वे जानते थे कि हर नुक्कड़ के पीछे मृत्यु उनकी प्रतीक्षा कर रही है, प्रत्येक झाड़ी के पीछे ऐसी चंचल मृत्यु जैसी बिजली, इतनी आकस्मिक कि पलक मारने का भी अवकाश वह नहीं देगी। आज इस चौंधिया देनेवाले प्रकाश में छिपना, रेंग-रेंगकर चलना कठिन था, लेकिन फिर भी उनका हृदय भय से बर्फ़ के समान हो गया था। वे सहसा चौंककर, मुड़कर पीछे देख लेते, अपनी आँखों पर ज़ोर डालते, शेड की छाया में किसी की कल्पना करने की कोशिश करते और तब चिल्ला उठते; इस प्रकार अपना साहस क़ायम रखते। पाले के क्रूर

दाँत उनके गालों पर थे, और बार-बार उनके होंठों पर बर्फ़ की पपड़ियाँ जम जाती थीं, वे जल्दी-जल्दी अपने कानों को मलते थे, पाँव पटककर चलते थे, और उस नंगी स्त्री को बराबर आगे और फिर वापिस पीछे हाँकते जाते थे, गाँव की उस सड़क पर।

आख़िरकार वे इस तफ़रीह से थक गये। सारे वक्त बस यही होता था : ओलेना अधिक बार गिरती जाती थी, उठने में पहले से अधिक समय लेती थी। फिर भी चीख़ती नहीं थी, चिल्लाती नहीं थी, अपना बयान देने के लिए कप्तान से मिलने की कोई इच्छा प्रकट नहीं करती थी। और इस बीच पाले का प्रकोप बढ़ता ही जा रहा था, यहाँ तक कि अब उनके गालों और हाथों और पावों को वह बड़ी नृशंसता से चबा ही नहीं रहा था, बल्कि ठंड से अब उनके फेफड़ों में साँस भी घुटने लगी थी। उनकी आँखों में पानी भर-भर आता था और सारा शरीर काँपने लगा था, और इस कँपकँपी को वे दूर नहीं कर पाते थे।

'चलो अब, वापिस, घर की तरफ़ डबल मार्च!'

चिल्लाते और हू-हा करते हुए वे उसे शेड की तरफ़ हँकाकर ले चले, जैसे कोई जंगली जानवर को हाँका करता है। वह चौखट पर ठोकर खाकर गिरी और उसका मुँह मिट्टी के फ़र्श पर ज़ोर से टकराया और तुरन्त अन्तर की स्वाभाविक प्रेरणा से उसने अपना पेट हाथों से बचाव के लिए ढक लिया। उसकी कनपटियाँ फड़क रही थीं, और उसके हृदय को कठिन पीड़ा से जैसे कोई कोंच रहा था। थोड़े ही मिनटों में पाले ने अपने निर्दयी शिकंजे में कस-कर उसको सुन्न कर दिया। पीठ के ज़ख़्म उसने अभी तक महसूस नहीं किये थे, उनमें अब असह्य जलन होने लगी। अतिमानवीय प्रयास से उसने अपने आपको उठाया, उठकर बैठी और अपनी ठिठुरी हुई उँगलियों से किसी प्रकार अपने कंधे, पाँव और चूतड़ को दबाने लगी। चन्द्रमा दीवार के छेदों में से एक बराबर रोशनी की पट्टियाँ फ़र्श पर बिछा रहा था। शेड के एक कोने में फूस का एक गट्ठा पड़ा हुआ था। वह उस तक अपने आपको खींचकर ले गई और फिर उसी में धँस गई और उसी में ख़ूब गहराई तक समाने की कोशिश करने लगी।

'मैं ठंड से जमकर रह जाऊँगी', उसने अपने आप से कहा और इस विचार से उसे कुछ तस्कीन हुई।

उसका भेड़ के बाल का कोट और शाल अफ़सर के कमरे में बेंच पर ही रखा रह गया था। और रात को जब सैनिकों ने उसे सर्दी में बाहर निकाला, तो उसके बदन से एक-एक चिथड़ा उतार लिया था, यहाँ तक कि एक कमीज़ भी नहीं रहने दी थी।

'मान लो, वे भूल ही गये हों और उनको यहीं शेड में छोड़ गये हों,' यह विचार उसके मन में उठा। उसने चारों तरफ़ देखा। नहीं, वहाँ कुछ नहीं था। ख़ाली नंगा फ़र्श, और यही थोड़ी-सी फूस, जिसने उसे कुछ देर को आश्रय दिया था।

बाहर सब स्थिर शान्त था। प्रकटतः सैनिकों ने यही सोचा कि उस पर पहरा रखने की कोई आवश्यकता नहीं है; क्योंकि वे बाहर से ताला लगा-कर चले गये थे। उसका सारा शरीर जल रहा था, मानो वह आग पर बैठी हो। वह सो भी नहीं सकती थी, वह नींद के आने से डर रही थी, और चौड़ी खुली आँखों से चाँदनी की पट्टियों को फ़र्श पर धीरे-धीरे लंबी होते देख रही थी।

एकाएक उसने कुछ खड़खड़ाहट सुनी। वह ध्यान से सुनने लगी। बर्फ़ क्रश्च-क्रश्च कर रही थी, लेकिन यह संतरी के पैरों की आवाज़ नहीं थी। कोई बर्फ़ पर बहुत धीरे-धीरे चलकर आ रहा था; बहुत होशियारी से। बर्फ़ पर हल्की-सी कचर-मचर और फिर शांति। और फिर वही दबी-दबी क्रश्च-क्रश्च। कोई छिपे-छिपे बढ़ा आ रहा था, मुश्किल से क़दम बढ़ा रहा था। ओलेना डर गई। क्या था यह, कौन हो सकता होगा यह?

पाँवों की आहट थम गई। बहुत संभव है, यह उसकी कल्पना ही हो, वह स्वप्न में कुछ सुन रही हो। निस्सन्देह, कोई था अवश्य बाहर। प्रतीक्षा में उसने अपने आपको पहले ही उठा लिया। क़दम और नज़दीक आ गये और अब शेड के पीछे से सुनाई दे रहे थे। अब वे किस ओर मुड़ेंगे? लेकिन वे मुड़े नहीं। वे और धीमे हो गये और सँभल-सँभलकर पड़ने लगे और अन्त में दीवार के पास ही आकर रुक गये।

ओलेना एकदम मूर्तवत् बैठी रही। कोई दीवार के दूसरी ओर खड़ा था। वह उसकी साँस सुन सकती थी। अब उसने अपना मुँह दीवार के लट्ठों से लगा दिया था और एक छेद में से अन्दर झाँक रहा था।

उसने इन्तज़ार किया। कौन था यह ? कोई मित्र, शत्रु, या कोई अचानक इधर से गुज़रनेवाला ? लेकिन कौन राहगीर यह हो सकता था, जब कि गाँव-वालों के लिए शाम के बाद घर से निकलने की सज़ा मौत थी ?

'चाची !' एक बच्चे की आवाज़ ने धीमी साँस में पुकारा।

ओलेना हिली नहीं। वह उत्तर देना चाहती थी, लेकिन उसके सीने से जो आवाज़ निकल सकी, वह केवल एक अस्फुट घुटी हुई-सी कराह थी।

'चाची ओलेना !'

पड़ोसियों में से किसी का कोई बच्चा रेंगता हुआ दीवार तक पहुँच गया था और उसे पुकार रहा था। वह कराही।

'चाची ओलेना ! तुम्हारे लिए रोटी लाया हूँ।'

रोटी ! दो दिन से उसके गले के नीचे कुछ नहीं उतरा था। न रोटी न पानी। उसे भूख तो इतनी नहीं महसूस हुई थी, लेकिन प्यास से उसके दम सूख रहे थे। जब वर्नर उससे प्रश्न कर रहा था, उस समय भी और जब वह शेड में पड़ी थी, तब भी। जब वे उसे बर्फ़ पर दौड़ा रहे थे तो वह किसी-न-किसी तरह मुट्ठी भर बर्फ़ उठाकर मुँह तक ले जा सकी थी। बर्फ़ ने कुछ थोड़ी-सी शक्ति प्रदान की थी, उसके सूखते होंठों को ताज़ा कर दिया था। सैनिक इस बात को ताड़ गये थे, और उस पर निगाह रखने लगे थे। इस-लिए जब वह गिरती थी, तब अपने होंठों से कुछ बर्फ़ उसने उठाने की कोशिश की थी। अब उसे मालूम हुआ कि वह भूखी थी। उसके पेट में दर्द करौंच रहा था। उसकी पेट की आँतें भयानक ऐंठन से मरोड़ें ले रही थीं।

उसने अपने कोने से वहाँ तक के फ़ासले का अन्दाज़ा लगाया जहाँ वह लड़का खड़ा पुकार रहा था, और अपनी हिम्मत बाँधी।

'आ रही हूँ,' मिट्टी के फ़र्श पर कुहनियों और पसली का सहारा लेकर घिसटते हुए धीरे से कहा; और उसे लग रहा था कि अब वह उठ नहीं सकेगी, कि अब अपने आप को वह उठा नहीं सकेगी। उसकी पीठ और

पेट करोंचती हुई पीड़ा से ऐंठे जा रहे थे और उसके पाँव इस तरह दर्द कर रहे थे मानो सख्त बलूत की नोकीली खूँटियाँ उनके अन्दर ठोंकी जा रही हों।

एक क़दम वह खिसकी; और एक सेकंड बीता कि उस मौन को सहसा एक बहरा कर देनेवाले धड़ाके ने तोड़ दिया, जिसके बाद ही एक तीखी, हृदय-बँधी चीख़ सुनाई दी। वह एकाएक औंधी पड़ गई। और एक सेकंड गुज़रने पर ही उसे ज्ञान हुआ कि यह बन्दूक का धड़ाका था, जो बिलकुल पास ही छूटी थी। वह वहीं स्थिर पड़ी रही, मुँह खुला का खुला, आँखें सामने की काली दीवार पर जमी हुई जिसके कि पीछे अभी-अभी कोई घटना हो गई थी। उसने बर्फ़ पर जूतों की कचर-मचर सुनी, मज़बूत भारी पैरों की आवाज़। जर्मन भाषा में किसी को गाली-सी देते हुए सुना और फिर रायफ़ल के कुन्दे का किसी नर्म चीज़ पर प्रहार। कोई और भी आ गया। अब वे दोनों ज़ोर-ज़ोर से गालियाँ बक रहे थे। उसने इनके अलावा और आवाज़ों पर कान लगाये। प्रकट था कि गोली अपना काम कर गई थी।

अब उसने एकाएक पिछले दो दिनों की यातनाएँ महसूस कीं—एक ऐसा बोझ जिसे शरीर बर्दाश्त नहीं कर सकता था। उसके स्नायु इस तनाव से टूटे जा रहे थे। सब चीज़ें अपने चारों तरफ़ उसे टूटती और घूमती हुई मालूम हुईं; फ़र्श उसके नीचे उभार-सा ले रहा था। वह अपने आप को बेहोशी के शून्य गर्त में डूबने से नहीं बचा सकी।

गोली की आवाज़ और चीख़ काफ़ी दूर तक गई थीं। पास के एक घर में तो वे और भी साफ़-साफ़ सुनी गई थीं, जहाँ तीन सिर खिड़कियों से चिपके हुए तीन छोटे-छोटे छेदों से, जिसे उनकी साँसों ने शीशे में बना दिया था, शेड की काली छाया को देख रहे थे।

नन्ही ज़ीना रोने लगी।

'मम्मा! मिश्का! मम्मा, मिश्का!'

उसकी माँ ने उसे अपनी बग़ल में इतनी ज़ोर से दबा लिया कि बच्ची दर्द से चिल्ला ही उठी।

'चुप!'

'मम्मा, मिश्का ! उन्होंने क्या कर दिया मम्मा !'

'सुना नहीं तूने ?' उन्होंने मिश्का को मार दिया !' स्त्री ने भर्राये-से स्वर में उत्तर दिया।

आठ साल का साशा खिड़की से हट गया।

'मम्मा, मैं ले जाऊँगा कुछ रोटी, चाची ओलेना के लिए।'

'तुम कहीं नहीं जाओगे ! उन्होंने अब पहरा लगा दिया है। वे सुबह तक पहरा रखेंगे,' उसने सख़्ती से उसे उत्तर दिया। क्षण भर के मौन के बाद उसने इतना और जोड़ा :

'और फिर अब रोटी भी तो नहीं और। एक टुकड़ा भी तो नहीं। आख़िरी रोटी थी जो मिश्का ले गया था।'

लड़का फिर खिड़की के पास आ गया और बाहर की ओर देखने लगा। लेकिन यहाँ से कुछ नहीं दिखाई दे रहा था।

मिशा शेड के पास पड़ा था। गोली उसकी पीठ में कन्धे की हड्डी के नीचे लगी थी और तुरन्त पार हो गई थी। उसे चीख़ने के लिए भी मुश्किल से अवकाश मिला था। एक सैनिक ने उस छोटे-से शरीर को ठोकर लगाई और उसकी नन्हीं-सी मुट्ठी से एक रोटी का टुकड़ा गिर पड़ा।

'वह उसके लिए रोटी लाया था, जानवर का बच्चा !' सैनिक ने कहा, और फिर निर्जीव शरीर को एक ठोकर मारी। 'ये लोग इस औरत को खाना देना चाहते थे...'

'और कैसे वह यहाँ तक चला आया, उसकी हिम्मत तो देखो !...'

'बस, एक मिनट की और देर थी; उसने रोटी दे ही दी होती...जैसे ही हम लोग निकले, मैंने देखा, कोई चीज़ चली आ रही है, और ठीक दीवार के पास तक आ गई। तभी मैंने निशाना लगाया...'

'अच्छा निशाना था,' उसके साथी ने, उस भूरे निशान को देखते हुए, जो उसकी नीली-सी घर की बुनी कमीज़ में बन गया था, उसकी तारीफ़ में कहा।

'शर्त बदकर आज़मा लो—मेरी निगाह बहुत सधी हुई है। लेकिन अब क्या करें हम इसका ? छोड़ दें यहीं ?'

'यहीं क्यों ? चलो खाले में इसे फेंक आयें।'

दोनों को यह विचार पसन्द आया। लड़के की टाँगें पकड़कर वे उसे घसीटते हुए ले गये। उसका चमकता सिर जमी हुई ऊबड़-खाबड़ बर्फ़ की ठोकरों से उछलता जाता था। सैनिकों ने शव को झुलाते हुए उठाकर सड़क के पास ही बर्फ़ से पटी हुई खाई में फेंक दिया।

'पड़ा रहने दो उसे यहीं। ताज्जुब होता है, किधर से आया होगा वह ?'

'कप्तान कल सब पता लगा लेगा। हालाँकि क्या ख़ाक-पत्थर यहाँ पता चलता है...सारा गाँव एक है, सबों ने अपने मुँह ऐसे सी रखे हैं जैसे चपड़े से जोड़ दिये गये हों।'

'कोई परवाह नहीं, हमारा कप्तान उनकी ज़बानें अच्छी तरह ढीली कर देगा।'

'अब तक तो कर देना चाहिए था उसे। मैं साफ़ कहता हूँ तुमसे, बड़ी विकट जगह है यह।'

लम्बा सैनिक अपनी रायफ़ल का सहारा लेकर झुककर खड़ा हो गया और अपने साथी की तरफ़ ग़ौर से देखने लगा। उसके गोलमोल चेहरे में, जिसपर नाक ऊपर को उठी हुई थी, उसने बाहर से देखने में कुछ भी सन्देह-जनक नहीं पाया। वह कह रहा था :

'बड़ी विकट...और कितना मैं चाहता हूँ घर जाना ! मेरा माइकेल अगले वसन्त तक दो बरस का हो जायगा। तब से देखा ही नहीं उसे, दो साल हो गये। सोचो ज़रा, दो साल...'

दूसरे ने सहानुभूति के साथ सिर हिलाया।

'पतझार में मुझे छुट्टी मिली थी।'

'जब मैं चला था तो वादा करके आया था कि जब आऊँगा तो एक साइकिल लाऊँगा। वह छोकरा दो साल से बाइक की उम्मीद लगाये हुए है। यहाँ से कोई बाइक भेजना तो मुश्किल ही है।'

'फ़ेल्डवैबेल ने तो दो साइकिलें भेजी हैं।'

'फेल्डवैबेल...' धीरे-धीरे लंबा सैनिक बोला। 'वह फेल्डवैबेल है। लेकिन क्या ख्याल है तुम्हारा, मेरी बाइक रेलवेवाले ले लेंगे ? तुम तो ख़ुद

ही जानते हो। पारसलों की दूसरी बात है, लेकिन बाइसिकिल, ना—वे लोग ऐसी चीज़ मुझे भेजने नहीं देंगे।'

जहाँ वर्नर का आफ़िस था, उसी के आगे वे लोग इधर से उधर टहल रहे थे। खिड़की में रोशनी जल रही थी। आफ़िस में काम हो रहा था।

'क्या वक्त होगा? मुझे लग रहा है, अब तो हमारी ड्यूटी ख़तम होने का वक्त हो गया।'

'अभी आधा घण्टा है।'

ठण्ढ और भी भीषण होती जा रही थी। लम्बे सैनिक को तो अभी बर्दाश्त हो रही थी, क्योंकि उसने अपना सिर ऊनी शाल से लपेटकर ऊपर से हैट ओढ़ रखा था। लेकिन दूसरा नाटा सैनिक अपने कानों को बुरी तरह मले जा रहा था।

'कैसे रहते होंगे ये लोग यहाँ? क्या ऐसा ही ठिरता हुआ पाला यहाँ पड़ता है हमेशा?'

'क्या पता मुझे? पड़ता ही होगा...जंगली हैं यहाँ के लोग, उन्हें क्या!'

'तुमने देखा था इन्द्रधनुष?'

'हाँ, देखा था।'

'क्या मतलब होगा उसका?'

लंबे सैनिक ने कन्धे उचका दिये।

'क्या हो सकता है मतलब उसका? जाड़ों में यहाँ इन्द्रधनुष दिखाई देते ही होंगे, यही सोचता हूँ मैं तो, लेकिन देखो तो, उन रंगीन खम्भों को।'

'वे पाले से बन गये हैं।'

'यही बात है। इन्द्रधनुष भी पाले से ही बन उठा होगा।'

'हो सकता है', नाटे जर्मन ने सहमति दी। वह अपनी मुट्ठियों को फूँक-फूँककर गर्म कर रहा था, और कुछ परेशान-सा अपने चारों तरफ़ रह-रहकर देख लेता था।

'क्या है उधर?'

'कुछ नहीं, योंही देख रहा था।'

एक मिनट बाद लंबे सैनिक ने भी पीछे मुड़कर देखा और झल्लाकर

अपने आप को ही गाली दी। उसका यह अनुभव था कि जहाँ एक दफ़ा पीछे मुड़कर देखा नहीं, कि बस—गये! बार-बार पीछे मुड़कर देखने की इच्छा होती जायगी, जिसका नतीजा यह होगा कि हर बार पहले से अधिक डर लगता जायगा।

'बार-बार इस तरह मुड़-मुड़कर मत देखो। उधर कुछ नहीं है।'

'तुम ख़ुद ही उस तरफ़ को मुड़-मुड़कर सारे समय देखते रहे हो।'

'मेरे मन में होता रहता है कि कोई सड़क पर चला आ रहा है। मगर देखो तो वहाँ कोई नहीं। और फिर ऐसा लगता है कि ज़रूर कोई है।'

दोनों ने आपस में दिल ही दिल में तय कर लिया कि दफ़्तर के बराबर बहुत थोड़ी ही दूर तक ठहलकर वे पहरा देंगे।

दरवाज़ा खुला। उनकी जान साँसत से छुटी।

'किसने गोली चलाई थी?' फेल्डवैबेल ने पूछा।

'मैंने,' लंबे सैनिक ने अटेन्शन से खड़े होते हुए कहा। 'ये लोग क़ैदी को रोटी खिलाने की कोशिश कर रहे थे।'

'फिर क्या हुआ, राश्के?' फेल्डवैबेल की दिलचस्पी जागी।

'निशाने पर गोली लगी। कोई छोकरा था, मेरे ख़्याल में, जिसे पड़ोसी लोगों ने भेजा था।'

'कहाँ है वह?'

'हमने उसे खाई में फ़ेंक दिया।'

'आओ चलो, देखें ज़रा उसको।'

तीनों खाई तक गये।

'यह है वह जगह,' राश्के ने दिखाते हुए कहा।

'यहाँ तो कुछ नहीं है।'

'क्या मतलब आपका, कुछ नहीं!' सैनिक भौचक्का-सा होकर कह उठा।

वे लोग खाई में कूद गये और उसमें चलने लगे।

'इतनी दूर कहाँ जा रहे हैं? हम लोग तो वहाँ तक गये ही नहीं।'

फेल्डवैबेल ने सन्देह की दृष्टि से उनकी तरफ़ देखा।

'हेड, सुनते हो तुम दोनों, यह क्या मामला है?'

'हुज़ूर फेल्डवैबेल, मैं कसम खाता हूँ, और मेरे साथ यह गवाह है, ठीक यहीं पर हमने लड़के को फेंका था ; यहीं, देखिए, यहाँ !' बर्फ़ पर एक छोटा-सा ख़ून का दाग़ देखकर उसका चेहरा खिल उठा।

उस जगह को ध्यान से देखकर फेल्डवैबेल ने सिर हिलाया।

'बस, कूद पड़े खाई में, और सब ख़ून के दाग़ पाँव से मिटा दिये !... मैं कहता हूँ तुम बहुत अच्छी चौकीदारी कर रहे हो यहाँ ! ऐन तुम्हारी नाक के नीचे से कोई लाश उठा ले गया, अगर सचमुच कोई लाश थी यहाँ तो !' उसने सख़्ती से कहा।

'ज़रूर लाश थी यहाँ, कैसे नहीं थी, मेरे पास गवाह भी तो है...हम दोनों ही पाँव पकड़कर उसे घसीटते ले गये थे...'

'वह शायद उस वक्त भी ज़िन्दा था, गधो। बस, वह वहाँ से उठा, और चलता बना।'

'नहीं, नहीं, साहब, गोली सीधी उसके पार हो गई। वह मुँह के बल गिरा और वहीं ठंडा हो गया।'

फ़ेल्डवैबेल लौटकर शेड तक आया। बर्फ़ पर एक बड़ा-सा लाल दाग़ था, और उसके पास ही पड़ा था रई की एक काली-सी रोटी का टुकड़ा। एक बच्चे के पाँव के निशान, ताज़ा पड़ी हुई बर्फ़ पर बने हुए सीधे एक ओर को चले गये थे।

'यही जगह थी...और फिर यहाँ से हम लोग उसे घसीटकर खाई तक ले गये...यह देखिए, आप घसीटने का निशान देख सकते हैं।'

'अच्छा, ठीक है, फेल्डवैबेल ने मान लिया। यह स्पष्ट हो गया था कि ये लोग सच बोल रहे थे। 'बस, चले आओ; तुम लोग हिरासत में हो।'

सैनिक सहसा ठिठक गये।

'हिरासत में ?'

'तुमने सुना नहीं ! मेरी तरफ़ खड़े हुए मत घूरो ! तुम इस जगह की चौकीदारी कर रहे थे कि नहीं ! कर रहे थे। और तुम्हारे हलके के अन्दर एक वाक़या हो जाता है और तुम्हारे फ़रिश्तों को भी पता नहीं चलता। एक मुजरिम की लाश यहाँ से चोरी गई और तुम दोनों के दोनों गधे उसको देख

भी नहीं सके। यही चौकीदारी तुम्हारी है! ऐसी ही चौकीदारी रही तो ये लोग तो एक-एक करके हमारी गर्दन काट ले जायँगे—जैसे हम लोग गौरैया हों, हमारी गर्दनें मरोड़कर रख देंगे...'

सैनिक सिर झुकाये उसके पीछे-पीछे हो लिये।

'कैसी अजीब मुसीबत है!' राश्के ने बुड़बुड़ाकर कहा। उसके साथी ने जवाब में एक आह भर दी।

नाटा वोगेल तो हुक्म सुनते ही सिकुड़कर आधा हो गया। उसके रोंगटे खड़े हो गये और एक बार पीठ पर कँपकँपी की ठंडी लहर-सी दौड़ गई। राश्के ज़ोर देकर कह रहा था कि नहीं, कोई वहाँ पर नहीं हो सकता था। और सही कह रहा था। बर्फ़ की चर्र-चर्र नहीं हुई थी, कहीं कुछ भी खड़का नहीं हुआ था, न कहीं कुछ हिला था। चाँदनी में झिलमिली बर्फ़ पर एक छाया तक तो किसी की रेंगती दिखाई नहीं दी थी। और फिर भी लाश ग़ायब हो गई थी। क्या मतलब हो सकता था इसका?

साधारण सैनिक वोगेल को अपने प्रश्न का उत्तर देते स्वयं भय लग रहा था। अनजाने तौर से ही उसके कदम तेज़ हो चले। आख़िरकार जब मकान का दरवाज़ा खुला तो कमरे की गर्मी, रोशनी और आदमियों की आवाज़ों का स्वागत पाकर उसकी जान में जान आई। वह खाई, बर्फ़, और यह भयानक रात्रि जिसमें बदन पर झुरझुरी होने लगती थी, सब दरवाज़े के बाहर थे। क्षण भर के लिए वह भूल गया कि वह हिरासत में है। क्षण भर के लिए उसने सोचा कि उसके अच्छे भाग्य थे जो वह फिर लोगों के बीच में आ गया, रात का धावा पीछे हट गया, उसे इन्सानों की आवाज़ और लैंप की रोशनी ने जीत लिया। रात इस घर की दीवारों को तोड़कर अन्दर नहीं आ सकती थी।

'कप्तान साहब जब आयेंगे, तो वही फैसला करेंगे कि तुम लोगों के साथ क्या होना चाहिए। तुम सुबह तक यहीं रहोगे।' फ़ेल्डवैबेल ने कहा।

वे फ़र्श पर एक कोने में बैठ गये। यहाँ गर्म और सुखद था। राश्के ने दीवार से अपना सर टेक दिया और ऊँघने लगा। लेकिन पिस्सू उसे सोने दें तब न! कुछ देर तक तो वह खुजाता रहा, आधी नींद में भी, फिर आँखें खोल दीं और खीझकर गालियाँ बकने लगा।

'तोबा ! कैसे कोई इन्सान यहाँ सो सकता है...पाले में तो ये जहन्नुमी पिस्सू चुप रहते हैं, लेकिन अब गर्मी पाकर यह अपनी सब कसर निकाल रहे हैं...'

वे लोग अँगीठी के पास खिसक आये, अपनी-अपनी वास्कटें और कमीज़ें उतार दीं और जलते हुए चैलों की मद्धिम रौशनी में अपने मोटे कपड़ों की तहों और सीवनों में बहुत ध्यान से पिस्सुओं की ढूँढ़-मार शुरू कर दी।

× × ×

गाल्या माल्यूचिखा फ़र्श पर बैठी थी। उसकी साँस ज़ोर-ज़ोर से चल रही थी। आसान काम नहीं था, तीन सौ गज़ से ज़्यादा पेट के बल खाई में रेंग-रेंगकर जाना और आना। सैकड़ों बार तो उसने अपना सिर बर्फ़ में दुबका लिया होगा कि कहीं जर्मन लोग उसे देख न लें। उसने अपने दाँत भींच लिये थे—चाहे कुछ भी हो जाय, वह लड़के को एक कुत्ते की तरह खाई में पड़ा रहने नहीं देगी।

लौटना और भी मुश्किल था। बेटे के छोटे-से शरीर का उसकी पीठ पर बहुत भारी बोझ था, बार-बार उसकी पीठ से खिसक-खिसक जाता था और आगे बढ़ने में उसके लिए रुकावट डालता था। अत्यधिक कठिनाई से वह घर के बाड़े तक रेंग-रेंगकर आ सकी थी। बड़ी कठिनाई से वह खाई से निकलकर आ सकी थी, और जब सैनिक मकान के सामने बातें करने के लिए खड़े हो गये थे, तो उस मौक़े से उसने पूरा फ़ायदा उठाया था। और अब आख़िरकार वह यहाँ, घर में, पहुँच गई थी, और उसका छोटा-सा मिशा जो कड़ा हो गया था, मेज़ के ऊपर सीधा पड़ा था। वह पाले में अब तक सख़्त भी हो चुका था, जैसे मानो काफ़ी अर्सा उसे मरे हुए हो गया हो। बच्चे अपने भाई को घेरे खड़े थे। उसके हलके रंग के बाल, उसके चेहरे के चारों तरफ़ बिखरे हुए, और आख़िरी चीख़ के लिए उसका खुला हुआ मुँह खिड़की से छनकर आती हुई चाँदनी में साफ़ दिखाई दें रहे थे। ज़ीना ने बड़ी एह-तियात से अपनी एक नन्हीं उँगली बढ़ाकर उसकी वास्कट पर लगे हुए ख़ून के दाग़ को छू लिया।

'यह क्या है ?'

'छूओ नहीं उसको', साशा ने सख़्ती से कहा। 'यहीं तो उन्होंने उसके गोली मारी है, है न अम्माँ?'

'यही जगह है, बेटे, यही जगह है', उसने धीमी और दबी हुई आवाज़ में अपनी उँगलियाँ मिशा के मुलायम बालों में फेरते हुए कहा। चला गया वह। थोड़ी ही देर पहले उसने चाची ओलेना के लिए एक रोटी का टुकड़ा अपनी जाकट में भरा था और चौकन्ना होकर, अँगूठों के बल चलता हुआ, घर के बाहर हो गया था। उसको पूरा विश्वास था कि वह यह काम निभा ले जायेगा—कि वह शेड तक पहुँच जायेगा। लेकिन सब उल्टा ही हो गया।

'हमें उसे जाने नहीं देना था', ज़ीना एकाएक किलक उठी।

'उसे जाना ही था, उसे जाना ही था, मेरी प्यारी नन्हीं,' उसने भारी स्वर में कराहकर कहा 'ओह, उसे जाना ही था...'

'वहाँ पर वे लोग चाची ओलेना को कुछ खाने को नहीं देते...' साशा ने समझाते हुए कहा। अपनी आवाज़ को उसने भारी गहरी और मर्दाना बनाने की कोशिश की।

'हाँ, बेटे, हाँ,' उसने सहमति दी। 'चाची ओलेना डैडी के साथ एक ही टुकड़ी में थी...और देखो क्या गति हुई उसकी। वह मर जायगी अब, मर जायगी, बेचारी ओलेना, और बिना किसी बात के, बिना किसी क़सूर के..'

'अगर मैं उनके लिए कुछ आलू ले जा पाता। हाँडी में सुबह के नाश्ते से कुछ बच गये थे...' क्रोध से साशा बुड़बुड़ाया।

'नहीं, बेटे, कोई भी अब शेड के पास नहीं जा सकता। वे अपनी भर-सक उसकी अच्छी तरह निगरानी कर रहे हैं...बिना किसी बात के तू अपनी जान दे देगा...हम समझते थे कि शेड के आस-पास कोई नहीं होगा, लेकिन उन्होंने मिशा को देख लिया...'

'मुझे वे न देख पाते,' ज़िद के साथ साशा ने कहा।

'तुम बकवास कर रहे हो, और ऐसी बातें मुँह से निकाल रहे हो जो अच्छी नहीं लगतीं...अगर मिशा से वह काम नहीं सँभला, तो फिर किसी से नहीं सँभल सकता, किसी से नहीं...'

साशा फिर कुछ नहीं बोला। मा ने अपने मरे हुए बेटे के मुँह की तरफ़ देखा और धीरे-धीरे उसके बालों पर हाथ फेरने लगी।

'कहाँ उसे दफ़ना सकते हैं हम ? सुबह होते ही वे लोग फिर उसके लिए सब तरफ़ खोज शुरू कर देंगे। अगर वे लोग पा गये तो उठा ले जाएँगे उसे।'

'हम लोग उसे बग़ीचे में ले जाकर गाड़ सकते हैं,' साशा ने सुझाव रखा।

'बगीचे में हम लोग कैसे गाड़ सकते हैं ? वे लोग सुन लेंगे, और दौड़ते हुए देखने आयेंगे कि यहाँ क्या हो रहा है...और फिर ज़मीन इतनी सख़्त है वहाँ, कि जैसे पत्थर। हम उसकी क़ब्र नहीं खोद सकते। और सिर्फ़ बर्फ़ से उसको ढँकना...'

बिलकुल असहाय-से वे सब उस मेज़ के चारों तरफ़ खड़े थे, जिस पर वह लड़का लेटा हुआ था।

'तब क्या करेंगे हम लोग ?'

'हमें घर के अंदर ही उसे दफ़न करना होगा,' माल्युचिखा धीरे से बोली।

'घर के अंदर ?' ज़ीना ने आश्चर्य से उसके शब्द दोहराये।

'और कहाँ ? वह अपने ही घर में पड़ा आराम करेगा, हमारे ही साथ रहेगा...मैं तो और कोई तरकीब नहीं सोच सकती।'

'यहीं, इसी कमरे में ?'

वह हताश होकर अपने चारों तरफ़ देखने लगी।

'नहीं...बाहर, बड़े दरवाज़ेवाले कमरे में...'

वे सब बड़े दरवाजेवाले कमरे में गये—एक छोटी-सी तंग-सी जगह थी। माल्युचिखा ने मिट्टी के फ़र्श की तरफ़ देखा।

'यहीं खोदेंगे हम लोग। फावड़ा तो ले आओ, साशा, उधर है, वह दरवाज़े के पीछे।'

उसने अपने सीने पर हाथ से क्रास का निशान बनाया, क़ब्र पर चिह्न खींचा और फावड़े को सँभालकर चलाया।

पिछले तमाम लम्बे वर्षों में आने-जानेवालों के पैरों से दबकर ज़मीन कड़ी हो गई थी। उस ठोस और पत्थर-सी ज़मीन पर फावड़ा मुश्किल से काम कर रहा था। थोड़ी ही देर में वह स्त्री हाँफ गई।

'अब तुम कोशिश करो, साशा...'

वह छोकरा जमकर खोदता गया, इसी परिश्रम में उसने अपनी ज़बान भी बाहर निकाल रखी थी।

ज़ीना एड़ी के बल बैठी अपने हाथों से खुदी हुई मिट्टी को अलग करती जा रही थी, जो उसके नाखून में फँस जाती थी।

इस तरह बारी-बारी से देर तक वे लोग खोदते रहे, जमकर उस पत्थर-सी कड़ी ज़मीन को खोदते रहे। ऊपर की सतह को जब वे लोग तोड़ चुके, तब खोदना आसान हो गया। आख़िर एक मामूली गहरी क़ब्र तैयार हो गई।

'अब हमें उसे कपड़े पहनाने चाहिए, बच्चो...ओख़, हमें मिश्ट्का को बिना कफ़नाये ही क़ब्र में रखना पड़ रहा है... !'

उसने बाल्टी से कुछ पानी लिया और उसका मुँह धोने लगी, उसकी ख़ून से भरी छाती, उसकी पतली कमर, जिसमें कंधों की हड्डी के नीचे गोली ने एक गोल छेद बना दिया था। फिर उसने बक्स में से एक साफ़ धुली हुई कमीज़ निकाली और बड़ी कठिनाई से उसकी कड़ी-कड़ी बाँहों में पहनाया।

'इस तरह से उसको दफ़नाना...'

ज़ीना फूटकर रोने लगी।

'रोओ नहीं तुम। मिश्ट्का एक लाल सैनिक की मौत मरा है। वह एक जर्मन की गोली खाकर मरा, जो कुछ उचित था, उसके लिए मरा, समझीं तुम?'

वह ज़ीना से कह रही थी; लेकिन वास्तव में वह अपने ही हृदय को समझा रही थी। हिचकियाँ उसके गले में ही रुँध रही थीं, लेकिन वह डर रही थी कि शायद वह अपने को सँभाल न सकेगी, वह डर रही थी कि जहाँ ज़रा भी बाँध टूटा वह अपने बेटे के शव पर गिर पड़ेगी और पशु की तरह डकराने लगेगी, यहाँ तक कि सारे गाँव को उसके दुर्भाग्य, उसके दुःख, उसके बेटे की मृत्यु के बारे में—जिसे जन्म देकर दस साल तक इतने लाड़-प्यार से उसने पाला-पोसा था और अब जिसे एक जर्मन की गोली ने ख़त्म कर दिया था—मालूम हो जायगा।

'जब तुम्हारा बाप छापेमारों के साथ जाने लगा था तो मिशा से कह गया था : "देखना, हमारी इज्ज़त पर धब्बा न आने देना यहाँ ! और मिश्का ने वही किया है जो उसके बाप ने करने के लिए उसे कहा था, उसने हमारी इज्ज़त नहीं डुबोई...समझती हो तुम ?"

'मैं समझती हूँ' हिचकी लेती हुई ज़ीना बोली ।

'तुम्हें बिलकुल नहीं रोना चाहिए । अगर मिश्टुका की लाश पर आँसू गिराये गये तो उसको क़ब्र में चैन नहीं मिलेगा । तुम्हें बिलकुल नहीं रोना चाहिए । चादर डालने में ज़रा मेरी मदद करो ।'

उन्होंने लट्ठे की एक चादर खुली क़ब्र में बिछाई, शहीद लड़के को उसी पर लिटाया और उसी लट्ठे की चादर में उसे अच्छी तरह लपेट दिया ।

'यह इसलिए, जिसमें मिट्टी उसकी आँखों में न पड़ने पाये,' माँ ने कहा ।

'जिसमें मिट्टी उसकी आँखों में न पड़ने पाये,' ज़ीना ने अपनी नन्ही पतली-सी आवाज़ में दोहराया ।

'मुट्ठी भर मिट्टी उठाओ ज़ीना, और अपने भाई के ऊपर डाल दो' उसकी मा ने कहा ।

ज़ीना ज़मीन पर बैठ गई और मुट्ठी भर भूरी चिकनी मिट्टी ली और उसे कफ़न के ऊपर छितरा दिया । साशा ने भी वैसा ही किया । इसके बाद मा फावड़े से मिट्टी डालने लगी । वह मिट्टी डालती रही, यहाँ तक कि कपड़ा दिखाई देना बंद हो गया, यहाँ तक कि एक छोटा-सा ढेर उसके ऊपर ऊँचा हो गया ।

'अब हमें पावों से पीटकर इसे दबा देना है,' स्त्री ने कहा । 'अभी यह दिखाई देता है । वे आयेंगे और उसे खोद ले जायेंगे ।'

तीनों मिलकर पाँव से उसको पीटकर दबाने लगे । माल्युचिखा ने मिट्टी को एक-एक क़दम करके, परिश्रम से, ख़ूब अच्छी तरह दबा दिया । और सारे समय वह यही सोचती रही, कैसे सारी रीतियों के विरुद्ध, अपने हृदय के आदेशों के विरुद्ध, वह अपने बेटे की क़ब्र को खूँदती जा रही थी, अपने ही बेटे के ख़ूबसूरत सिर को पाँवों से खूँद रही थी, ख़ून से भरी हुई उसकी छाती को, उसकी दुबली-पतली बाँहों को और पाँवों को...

'हमें करना ही है यह,' उसने ज़ोर से अपने विचारों के उत्तर में स्वयं कहा और नन्हीं ज़ीना उसके उत्तर में प्रतिध्वनि के समान बोली :

'हमें करना ही है...'

'काफ़ी हो गया कि नहीं ?' साशा से पूछा ।

'नहीं बेटे, ज़मीन अब भी पोली है, अब भी लोग देखकर पता लगा सकते हैं । पाँवों से पीटे जाओ, पीटे जाओ, यहाँ तक कि यह सब बिलकुल बराबर हो जाय ।'

जो मट्टी रह गई थी उसे बड़ी होशियारी से उसने वहाँ से उठाकर अंदर ले जाकर चूल्हे के चारों तरफ़ बिखरा दिया । इसके बाद उसने दरवाज़े के कमरे का फ़र्श अच्छी तरह बुहार दिया । वहाँ क़ब्र का कोई चिह्न भी नहीं रह गया, और ऊपर से लकड़ी के बक्कल, छिलके और कुछ फूँस-कबाड़ डाल दिया । फ़र्श ऐसा लगने लगा जैसा कि आम तौर से बाहर दरवाज़े के कमरों में लगा करता है ।

'तुम देखकर पता लगा सकते हो ?'

साशा ध्यान से ज़मीन की तरफ़ देखने लगा ।

'नहीं...कल दिन की रोशनी में हमें और अच्छी तरह इत्मीनान हो जायगा ।'

माल्यूचिखा वहाँ खड़ी रही और अपने बेटे की अजीब-सी क़ब्र को देखती रही जिस पर घास-फूँस और लकड़ी के छिलके बिखरे हुए थे। मिश्टुका का कहीं निशान भी नहीं रह गया था । बच्चे पहले भी मरे थे, लेकिन हरेक के अपने छोटे-छोटे ताबूत थे । और हरेक की क़ब्र पर छोटी-छोटी घास उगी हुई थी । केवल मिश्का ही का कोई चिह्न नहीं रह गया था । वह अपने ही घर में पड़ा हुआ था, लेकिन ख़ुद वह तक, अगर पहले से न बताया जाता तो न बता पाती कि उसके अन्तिम विश्राम का स्थान कहाँ है ।

'जाओ, अब सोओ, बच्चो,' उसने कहा ।

'और तुम ?'

'मैं भी जा रही हूँ सोने । सुबह होने में अब बहुत देर नहीं है, और हमें थोड़ी-सी नींद ज़रूर ले लेनी चाहिए ।'

लेकिन वह सोई नहीं। वह मिश्ठुका के बारे में सोचती रही, अपने पति के बारे में सोचती रही, जो छापेमारों के साथ था। उसे फ़ौज ने लेने से इनकार कर दिया था। सन् १६१८ में उसकी दो उँगलियाँ जाती रही थीं, और उन्होंने उसे मोर्चे पर जाने के लिए अनफिट कर दिया था। लेकिन छापेमार यह देखने के लिए नहीं रुकते थे कि आदमी के पूरी उँगलियाँ हैं कि नहीं हैं, उन्हें तो मज़बूत बहादुर दिलों की ज़रूरत थी।

प्लाटन जब घर आयेगा तो पूछेगा कि मिशा कहाँ है। यह लड़का हमेशा से उसको विशेष प्रिय था। क्या कहेगी वह अपने पति से? वह कहेगी, मिश्ठुका बड़े दरवाज़ेवाले कमरे में पड़ा है, मिट्टी के फ़र्श के नीचे, उसके सीने में जर्मन की गोली बैठी हुई है।

लेकिन इस पर भी वह जानती थी कि प्लाटन इस समाचार को धैर्य के साथ सुन लेगा और बिलकुल वही बात कहेगा, जो उसने उस दिन कही थी जब जर्मन लोग पहली बार गाँव में घुस आये थे, और वह और उस जैसे दूसरे लोग कन्धों पर गठरियाँ लिये हुए घर छोड़कर बीच जंगल के लिए चल दिये थे, जहाँ छापेमार टुकड़ी ने आश्रय ले रखा था। 'जमी रहना, मेरी पुरानी साथिन। अगर कोई ऐसा समय आये, तो जो भी हाथ पड़े, कुल्हाड़ी, फावड़ा—कुछ भी – हाथ में ले लेना, बस; हार मत मानना। आजकल हम सबों को लड़ना है—बूढ़ों, औरतों, यहाँ तक कि बच्चों को भी।'

प्लाटन कहेगा: 'तो क्या हुआ, मिश्ठुका जर्मनों की मुठभेड़ में मारा गया। रोओ नहीं, मेरी पुरानी साथिन, उसने अपने देश के लिए जान दी है, तुम समझती हो इस बात को?' और माल्युचिखा रोई-चिल्लाई नहीं, बल्कि खुली हुई आँखों से उस दरवाज़े की ओर एकटक देखती रही जिसके उस तरफ़, बड़े दरवाज़ेवाले कमरे के फ़र्श के नीचे उसके बेटे की छिपी क़ब्र बनी हुई थी।

× × × ×

इस बीच बाहर सन्तरी अब भी रात की घटनाओं की आलोचना कर रहे थे।

'बड़ी नरक जगह है यह। कौन उसे उठा ले जा सकता था? राश्के

कहता है कि उसे किसी की ज़रा भी भनक नहीं आई। और फिर अगर तुम एक इंच भी चलो तो जमी हुई बर्फ़ की तहें कुचर-कुचर करने लगती हैं।'

'तुम्हीं बताओ, फिर' दूसरा, उदास मुँह करके बुड़बुड़ाया। 'क्या तुम्हारे ख़्याल से यहाँ और कोई चीज़ होगी?'

और पूरे समय वे लोग अपने चारों तरफ़ देख-देखकर निगाह दौड़ाते रहे।

उन्हें ऐसा लगता मानो जमी हुई बर्फ़ के कुड़कुड़ाने की आवाज़ आ रही है, साफ़ कचर-मचर हो रहा है, क़रीब-क़रीब पाँवों की चाप तक वे सुन सकते थे। मगर घूमकर जब देखते, तो कहीं कुछ नहीं। एक धुँधला-धुँधला मण्डल चन्द्रमा के चारों ओर झलक रहा था। वे आलोक-स्तम्भ, विजय-स्तम्भ. धीरे-धीरे मिटते जा रहे थे, और मिटते हुए भी झिलमिला रहे थे।

'मालूम होता है हवा कुछ गर्म हो गई है।'

'क्या बात करते हो! मैं तो देख रहा हूँ कब मेरे कान गलकर गिरते हैं, जब तक बाहर रहते हैं, तब तक तो ऐसा कुछ नहीं मालूम होता, मगर जहाँ घर के अन्दर घुसे, जहाँ गर्म है, . तो बस ये सुलगने लगते हैं, जैसे कानों पर किसी ने अंगारे रख दये हों।'

'मेरे ख़्याल में वे पाले से ज़ख्मी हो गये हैं।'

'पाले से तो ज़ख्मी हो ही गये हैं। और मेरे पैरों में ऐसी लहर मारती है कि तोबा! जैसे ही गर्म होने लगेगा, वे तो बस गलकर अलग हो जायेंगे।'

'चलो अच्छा होगा तुम्हारे लिए तो। अस्पताल भेज दिये जाओगे।'

'बहुत भेज देंगे वह! भेज दें तभी कहना। मालेर को भेजा उन्होंने? और उसके पाँव तो सूजकर कोयले की तरह काले हो गये थे।'

'तुम्हें इतने ज़ोर-ज़ोर से तो बोलने की ज़रूरत नहीं है।'

'यहाँ तो कोई नहीं है।'

'यह तुम्हारा ख़्याल है कि यहाँ कोई नहीं। लेकिन कल को फेल्डवैबेल को सब पता लग जायगा।'

'तुम्हारे कहने का मतलब यह कि तुम जाकर चुपके से उसके कान भर दोगे?'

'मुक्का खाने की जी में है क्या?'

'बस, समझदार आदमियों की तरह बात करो ; बेकार बकबक मत करो। दुनिया में मोजज़े और करिश्मे वग़ैरह कुछ नहीं होते।'

'नहीं, नहीं होते। माना, बेशक करिश्मे-वरिश्मे नहीं होते...लेकिन तुम बताओ मुझे, कि उस लाश को कौन उठा ले गया ?'

'वह सवाल अलग रहा...मैं तो फेल्डवैबेल के बारे में कह रहा हूँ...'

'ओह...'

चन्द्रमा के चारों ओर का मण्डल अधिक चौड़ा और गहरा होता जा रहा था—साफ़ उज्ज्वल आकाश में एक दूधिया-नीला-सा मण्डल।

'तुम जो चाहे कहो, मगर यह पाला सुबह होते-होते और भी गहरा हो जायगा। लेकिन इस वक्त तो कुछ हलके तौर पर ज़रा गर्म हो गया है।'

'गर्म हो गया होगा।'

स्थिर वातास, जो अबतक विशाल बर्फ़ के ठोस तू दे-सी जम गई लगती थी, अब अस्थिर लगने लगी। वह अब हलकी-हलकी चलती हुई मालूम हो रही थी।

'मैं कह रहा हूँ कि हवा बदल रही है, मेरे पैर खिंच रहे हैं।'

'बाई तो नहीं हो गई है ?'

'हाँ, बाई ही तो, वही पुराना रोग। जहाँ हवा बदली कि ये आग की तरह चिनकने लगते हैं।'

दोनों सड़क पर टहलते रहे।

'वह औरत अब भी शेड में है ?'

'हाँ, अब भी वह वहीं है।'

'सुबह तक तो वह ठिठुरकर बर्फ़ हो जायगी।'

'नहीं, अगर ज़रा गर्म हो गया, तो बर्फ़ नहीं होगी।'

'बड़ा जहन्नुमी काम है—दोस्त, यह इस औरत का...'

'तुम, क्या सोचते हो, इस जैसी एक औरत लगाये तुम्हारे कूल्हे में एक तो तुम्हें साँस न आये...और ये छोकरे तो सबसे बढ़कर शैतान हैं। सब जगह घूमते रहते हैं। सभी जगह झाँकते-ताकते रहते हैं। इन्हें वे लोग जासूसी करने के लिए बाहर भेजते हैं।'

एक मिनट के लिए दोनो चुप हो गये।

'मैं इस सारे मामले को बिलकुल और ही तरह से हाथ में लेता...उस दूसरे गाँव में कप्तान ने क्या किया था, 'याद है ?'

फिड्डी नाकवाले सैनिक ने अपना सर हिला दिया।

'तुम्हें मालूम है...ये लोग कभी हमारे साथ मिलकर कोई काम नहीं करेंगे, किसी भी तरह। आख़िर तो हमें फिर भी-इन सबों को नेस्तो-नाबूद करना ही पड़ेगा। इससे अच्छा है, इन सबका शुरू से ही सफ़ाया कर दिया जाय! तब कहीं ज़्यादा अमन हो जायगा।'

'सब का ?'

'सब का। तुम ख़ुद ही देख रहे हो, कैसे हैं ये लोग! छोटे-छोटे बच्चों का ऐसा दिमाग़ ख़राब कर दिया है, सिखा-सिखाकर, कि उन्हें फिर से तालीम देना नामुमकिन है। क्यों दें हम उन्हें तालीम—इतनी मेहनत फ़ज़ूल जायगी। ये और ही तरह के लोग हैं, और ये हमेशा हमसे अलग ही रहेंगे।'

सैनिक ने एक आह खींची, और कुछ जवाब नहीं दिया। इंद्र के धनुष के रंग बिलकुल मिट गये थे। सड़क के किनारे हुए पेड़ों की शाखों में मर्मर पैदा हुई। उन पर से हलका बर्फ़ का बुरादा-सा झर पड़ा। चंद्रमा कुहरे में लिपटा हुआ था, जिसके अन्दर से वह पीला और उदास दिखाई दे रहा था।

'देखो, मौसम सचमुच बदल रहा है। अभी मिनट भर पहले चाँद सूरज की तरह चमक रहा था, अब देखो उसे!'

'हवा बह चली है।'

'अच्छा है ज़रा गर्म हो जाय। इस पाले में मेरी तो क़रीब-क़रीब जान निकलने ही वाली थी।'

बर्फ़ अब भी पाँवों के नीचे कचर-मचर करता था, लेकिन पहले जैसी तेज़ आवाज़ के साथ नहीं। वातावरण में जल्दी-जल्दी परिवर्तन हो रहा था। आकाश की पारदर्शी उज्ज्वलता एक नीले-भूरे-से कुहरे में धुँधली हो गई थी। हवा की तेज़ी बढ़ चली थी, और मैदानों से वह बर्फ़ के ऊँचे बवंडर-से उठाती हुई चल रही थी। आँधी के ठंडे झोंके अब उनकी मज्जा तक को भेद रहे थे, उनके चेहरों पर थपेड़े मार रहे थे, और कोट के अंदर घुसे जा रहे थे।

'यही तुम कहते थे, गर्म होता जा रहा है...'

'अभी हमें कितना वक्त और बिताना है ?'

'अभी सुबह होने में बहुत देर है। अपनी चौकीदारी पूरी करने के लिए अभी बहुत काफ़ी वक्त है।'

दूर के बर्फ़ से पटे हुए मैदानों से एक अजीब शोर उठने लगा। जैसे-जैसे वह नज़दीक आता जा रहा था, बढ़ता जा रहा था।

'वह क्या है ?'

वे रुक गये और सुनने लगे। शोर ऊँचा होकर फिर भीषण होता हुआ, एक लंबी खींची हुई चीत्कार के साथ गाँव के ऊपर फट पड़ा। पेड़ों के तने हिलने लगे और शाखें पागल-सी होकर हवा में नाचने लगीं। हवा बर्फ़ को ज़मीन से उखाड़कर इधर-उधर बिखरा रही थी, ऊँचाइयों पर फेंक रही थी, जिससे सूखा चाँदी-सा सफ़ेद मैदान चारों ओर छन-छनकर गिर रहा था। संतरियों को मुश्किल से कोई रास्ता सूझ रहा था। सिर आगे को किये हुए, दोहरे होकर झुके जाते थे। जब वे घूमते और आँधी का ज़ोर उनकी पीठ पर होता, तब उन्हें क़दम बढ़ाने में आसानी होती। आँधी मानो उन्हें अपने पंखों पर उड़ाये ले चलती। लेकिन हवा अपना रुख बदलती रहती थी, कभी दाहिनी ओर से चलती, कभी बाईं ओर से, कभी सड़क के इस पार से उस पार को, बर्फ़ के विशाल फ़व्वारे-से उठाती हुई, उन्हें क्रमशः इतना ऊँचा उठाती कि अंत में वे एकाएक ढह पड़ते थे, जिससे पृथ्वी हलके-हलके मैदे की-सी तह से ढक जाती।

'कैसा जाड़े का मौसम है! बस अब इस बर्फ़ के तूफान में हम पड़ने ही वाले हैं। ऐसे बर्फ़ीले तूफ़ान में कुछ भी देख सकना नामुमकिन है।'

और जैसे उन्हें एकाएक किसी का आदेश हुआ हो, दोनों ने एक साथ मुड़कर अपने कंधों के पीछे देखा। लेकिन सड़क वैसी ही निर्जन पड़ी थी।

'मेरी प्यारी लुइसा...'

कप्तान वर्नर ने पत्र के ऊपर से अपनी दृष्टि उठाई और खिड़की की ओर देखा। बाहर तूफ़ान उमड़ रहा था। ऐसा लगता था जैसे बर्फ़ गिर रही हो, लेकिन यह केवल आँधी थी जो उजली बर्फ़ झोंकों में उड़ाकर उन्हें धुने दे रही थी, झाड़ियों पर बर्फ़ की वर्षा कर रही थी और हूकें मारकर और बर्फ़ को खिड़कियों के शीशों पर पछाड़ रही थी। बर्फ़ीले मैदानों से गुज़रती हुई तेज़-तुन्द आँधी और भी बलवती होती हुई ज़मीन पर अपने पंख पटक रही थी और गाँव को इस तरह अपने चपेट में ले लिया था कि मकानों की दीवारें तक हिल रही थीं।

कुर्ट वर्नर का हृदय घर की याद और उदासी से बैठा जा रहा था। साँस लेने में भी मुश्किल मालूम होती थी। इस बर्फ़ीली आँधी ने शेष दुनिया से उसका संबध काट दिया था। हरेक चीज़ बर्फ़ में दबकर घुट-सी गई थी, बर्फ़ के गहरे गर्त में डूब गई थी, और जैसी रेगिस्तान की रेत होती है, ऐसी बारीक, उड़ती हुई बर्फ़ में खो गई थी। उसे ड्रेस्डेन का अपना घर याद आ गया। इस समय वहाँ उसकी स्त्री और उसके बच्चे क्या कर रहे होंगे? उसे एक अर्सा हो चुका था उन्हें देखे हुए। फ्रांस छोड़ने पर उसे उम्मीद थी कि घर हो आने का उसे अवकाश मिल सकेगा, चाहे एक ही दिन के लिए मिले। लेकिन उन्हें ताबड़-तोड़ जर्मनी के इस मोर्चे पर ले आया गया था और एक मिनट के लिए भी ट्रेन से उतरने नहीं दिया गया था। उसका जन्मस्थान एक सर्राटे के साथ खिड़कियों के बराबर से निकल गया था, और अपने घर की दिशा में वह केवल एक दृष्टि भर ही डाल सका था। और अब तो कितना अधिक वह घर जाना चाहता था! कहीं घंटे ही भर के लिए उसे जाने को मिल जाय, बल्कि चाहे दस ही मिनट के लिए! वहाँ यह आँधी न चिंघाड़ रही होगी, वहाँ बर्फ़ से पटी हुई खाइयों और खालों में से मौत झपटकर उन्हें दबोचने की प्रतीक्षा में न होगी। सब कोई मेज़ पर बैठे हुए कॉफ़ी पी रहे होंगे, और लुइसा डबल रोटी काटती होगी। वहाँ गर्म

होगा और सुखद। लुइसा मुस्कराती और अपने गोल-मटोल हाथों से उसे एक प्याला देती। कब यह सब देखने को मिलेगा?

एक दबा हुआ क्रोध हर बात पर, हरेक आदमी के विरुद्ध, उसके हृदय में उमड़ने लगा। वह पूस्या से नाराज़ था, उसकी अन्तहीन फ़र्माइशों से, उसके दोपहर तक पड़े सोते रहने और फिर ऊबाहट की शिकायत करने से। उसे कभी अपना बिस्तर ठीक से लगाने या कमरे को झाड़-पोंछकर साफ़ करने का ख़याल नहीं आता था। अपने अस्त-व्यस्त बिछौने, फ़र्श पर पड़े हुए सिगरेट के टुकड़ों और मेज़ पर रोटी और मक्खन के साथ ही साथ हेअरपिन और नहन्नी के दृश्य की याद करके उसके जी को बड़ी कुढ़न हुई। ड्रेस्डन में उसका छोटा-सा साफ़-सुथरा फ्लैट, हर चीज़ अपनी जगह क़रीने से रखी हुई, लुइसा का लाज़िमी तौर से एक झाड़न हाथ में लिये होना... उसे अपने सैनिकों पर ग़ुस्सा आ रहा था, मूर्ख, कूढ़-मग़ज़, खटीमिए, पाला-मारे और सब प्रकार के संभव रोगों से ग्रस्त। इस गाँव के बर्ताव पर तो उसका ख़ून खौल रहा था, जहाँ उसे एक महीने तक ठहरना पड़ा था— ऐसा उदास चुप्पा और काइयाँ गाँव, जहाँ लोग ज़मीन पर दृष्टि गड़ाये उसके बराबर से निकल जाते थे, हालाँकि वह अच्छी तरह जानता था कि घृणा इन आँखों में छिपी हुई है, और सम्भवतः कोई भी शक्ति उनके अन्दर वह चीज़ नहीं पैदा कर सकती थी, जो वह चाहता था—भय और अधीनता।

'मैं भी तुम्हें तमाशा दिखाऊँगा,' दाँत भींचकर वह बड़बड़ाया। उसकी दृष्टि कोरे काग़ज़ पर पड़ी। वह मेज़ पर झुक गया और जल्दी-जल्दी लिखने लगा, इतनी जल्दी-जल्दी कि रोशनाई की छोटी-छोटी बूँदें चारो तरफ़ को छिटकने लगीं।

'जब आख़िरकार मैं तुमसे आन मिलूँगा, उस घड़ी की प्रतीक्षा में दिन गिन रहा हूँ। हम लोग आगे बढ़ते ही जा रहे हैं और इस आक्रमणकारी युद्ध में शीघ्र ही पूर्ण विजय का सेहरा हमारे सर होगा।'

बेचारी लुइसा को ख़ुश हो लेने दो। उसे नहीं मालूम हो सकेगा कि तीन महीने तक वे लोग एक ही जगह बँधे पड़े रहे हैं—एक छोटे-से मनहूस गाँव को तो किस गिनती में लिया जाय—तीन महीने से अत्यधिक क्रूर और

भीषण पाले की यातना वे भोग रहे थे। और झाड़ियों और खाई-खालों में छापेमार अलग उनके प्राण लेने को छिपे हुए थे, सैनिक भी दिनोदिन कम-ज़ोर होते जा रहे थे। और बीमारों की संख्या बढ़ती जा रही थी। और अपने यूनिट के जिन लोगों के साथ उसने फ्रांस छोड़ा था, उनमें से मुश्किल से कोई-कोई बाक़ी रह गये थे, और स्माचेर के उसके ड्रेस्डेन के मित्रों में से कोई जीवित नहीं रहा था। नहीं, यह सब वह नहीं जान सकेगी। वह कैसे जान सकती थी? मोर्चे पर से आनेवाले पत्र से तो उसका साहस ही बढ़ना चाहिए, उससे तो उसकी राष्ट्रीय भावना को ही और बल और उभार मिलना चाहिए। और भी एक कारण है कि यह ऐसा होना चाहिए, क्योंकि लुइसा के अलावा और कुछ व्यक्ति भी इस पत्र को पढ़ चुकेंगे और इसी पत्र से वे लोग कुर्ट वर्नर की भावनाओं को परखेंगे।

'भयानक जाड़ा यहाँ पड़ता है। ऐसे बर्फ़-पाले के हम लोग आदी नहीं। लेकिन फ्यूरर के आदेश हमारे हृदयों को गर्माये रखते हैं और हमें गर्व है कि उसकी महान योजना को कार्यान्वित करने का यह सौभाग्यपूर्ण अवसर हमें प्राप्त हुआ है, ताकि वैभवशाली जर्मनी की सेवा हम कर सकें।'

कुछ थोड़े से वाक्य उसने और लिखे और फिर शुरू से उसको दोह-राया। पढ़ने में कुछ ऐसा बुरा नहीं लगा। उन पर्चियों से तो अच्छा ही था, जो वे लोग जर्मनी से सैनिकों के नाम भेजते थे। कुछ जानदार था और अधिक प्रभाव डालनेवाला। अपने क़लम का सिरा चबाते हुए, वह कुछ देर तक सोचता रहा, फिर तय किया कि ऐसे ही ठीक होगा। उसे बच्चों के बारे में भी ज़रूर पूछना चाहिए, क्योंकि उसके पत्र से यह टपकना चाहिए वह केवल जर्मन सेना में कप्तान ही नहीं है, एक पति और पिता भी है।

'मेरी प्यारी, तुम कैसे सब घर चला रही हो? लियसेल कैसी है? विली के गले के अन्दर का फोड़ा ठीक हो गया? मैं उसे एक फ़र का कोट भेजने की कोशिश करूँगा, जिससे अब फिर उसे ठंड नहीं लगेगी। तुमने मुझसे मोज़ों के लिए लिखा है, लेकिन दुर्भाग्य से उनका मिलना बड़ा मुश्किल हो रहा है, क्योंकि हम लोग इस पूरे अर्से गाँवों में ही तायनात किये जाते रहे हैं। जैसे ही हम कोई शहर जीतेंगे, मैं मोज़े प्राप्त करने की कोशिश करूँगा।

उसने खिड़की से उधर को, जिधर अंधड़ चल रहा था, संकेत करते हुए कहा।

'मैं कहाँ जाकर ढूँढूँ ? वहाँ मुझे क्या मिल सकता है ?'

'तुम्हें मिल सकता है,' बीच में ही उसकी बात काटते हुए कप्तान ने कहा, 'ठीक तरीक़े से ढूँढ़ने की ज़रूरत है, गॉस्पोडिन गाव्लिक ; ठीक तरीक़े से ढूँढ़ने की...बैठ जाओ।'

मुखिया कुर्सी के एक किनारे पर डरता-डरता बैठ गया।

'मैं तुमसे ख़ुश नहीं हूँ, बिलकुल भी तुमसे ख़ुश नहीं हूँ। दरअस्ल, यह मेरी समझ में नहीं आता कि यहाँ तुम्हें क्यों भेज दियाँ सदर दफ़्तरवालों ने। मेरे ख़याल में यह कहीं अच्छा होता अगर यहीं का कोई आदमी हमें मिल जाता. इस सारे महीने से तुम यहाँ रहे हो, और अभी तक तुम यहाँ के लोगों को भी नहीं जान सके। तुम्हें पता भी है कौन-कोन इस गाँव में रहता है ?

मुखिया की आँखों में आशा की एक किरण चमक उठी। सब बातों से अपनी सहमति प्रकट करता हुआ जल्दी-जल्दी वह अपना सिर हिलाता रहा।

'बिलकुल सही है। मैं इन लोगों को जान नहीं सका हूँ...यह एक भारी गाँव है, और, फिर कौन चाहता है यहाँ मुझसे कुछ भी वास्ता रखना ? यह काम तो यहीं के किसी आदमी के लिए आसान होगा...'

'कप्तान अपनी कुर्सी में पीछे झुककर बैठ गया।

'अह-हा...मालूम होता है, तुम्हें अपना यह काम कोई बहुत पसन्द नहीं। एँ ?' उसने धूर्तता से उससे प्रश्न किया।

'हाँ, तो...यह भूल गये तुम कि लाल सैनिक तुम्हें वहीं का वहीं गोली से उड़ा देते। या फिर इससे भी विकट यह कि किसान लोग ही अपने पचाँगड़े तुम्हारे जिस्म के पार कर देते...तुम्हें अपनी ज़िन्दगी जर्मन शासकों की बदौलत मिली है, और जो कुछ भी उनकी माँगें होती हैं, उन्हें तुम्हें ज़रूर पूरा करना चाहिए, ख़ासकर जब कि वे सब कुछ बहुत ज़्यादा तुमसे नहीं माँगते, माँगते हैं क्या ?'

उस किसान व्यक्ति ने आह खींची।

'तुम अपने काम में कोई दिलचस्पी नहीं दिखा रहे हो, कोई दिलचस्पी नहीं दिखा रहे हो.. बोलशेविकों ने तुम्हारी ज़मीन तुमसे छीन ली थी, तुम्हें जेलख़ाने में डाल दिया था, हम सोचते थे कि तुम हमारे लिए अपनी शक्ति भर सब कुछ करोगे। और दरअस्ल तुमने कुछ भी नहीं किया...बस जो कुछ हमारे सैनिक गाँव में से छीन ला सके, वही हमें मिला। तुम्हारी मेहनत का सबूत कहीं नहीं दिखाई देता...और हमें क़रीब-क़रीब कोई भेद भी तुम्हारे ज़रिये से नहीं मिलता।'

'मगर उस कॉस्टंयुक के बारे में मैंने आपको ख़बर दी।.. '

वह उस एक कारनामे के भरोसे अपनी जान बचाने की कोशिश कर रहा था, यानी उस सूचना के भरोसे जो इत्तफ़ाक़ से उसके पल्ले उस समय पड़ गई थी, जब वह चोरों की तरह घरों के पीछे अँगनारों में से होता हुआ सदर दफ़्तर की तरफ़ जा रहा था।

वर्नर के माथे पर बल पड़ गये।

'हाँ, और ?'

'स्कूल-टीचर के बारे में...' गाप्लिक बुदबुदाया।

'वेल, हाँ, टीचर के बारे में...वह तो बहुत ज़रा-सी बात है, और अभी तय करने को ही पड़ी है।'

'अगर कोई यहीं का आदमी हो, तो यह मसला आसान हो जाय...'

'तुम बार-बार 'यहीं का आदमी' 'यहीं का आदमी' मेरे मुँह पर मत दोहराओ! हाँ, आसान हो जाय, मगर कहाँ से लायें हम उसे, उस तुम्हारे यहीं के आदमी को ? तीन सौ घर हैं, और सामूहिक खेती करनेवाले तीन सौ परिवार हैं। इनमें एक भी अकेला किसान-खेतिहर नहीं। इनकी यह ज़मीन एक बड़ी भारी ज़मींदारी से कुर्क हुई थी, और ये अवाम, तुम ख़ुद ही जानते हो...बोलशेविकों की ख़ैर से इन फटेहाल भुखमरों को उस ज़मींदारी पर क़ब्ज़ा मिल गया! कितने ही तो महज़ खेत के मज़दूर थे। कहाँ से तुम पा सकते हो कोई आदमी ऐसी जगह में ?' चिढ़कर वर्नर ने जोर से पूछा और मेज़ पर मुक्का मारा। 'तुम्हें ज़रूर कोशिश करना है, तुम्हें ज़रूर अपने फ़र्ज़ पूरे करना है, नहीं तो मुझे कुछ और इन्तज़ाम तुम्हारा करना

पड़ेगा, गाप्लिक ? मैं तुम्हें तीन दिन देता हूँ, तुम चार दिन ले लो, इसके अंदर-अंदर अनाज आ जाना चाहिए। तुम अगर किसानों को क़ाबू में नहीं ला सकते हो, तो हम इसके लिए फ़ौज को भूखों मारने नहीं जा रहे हैं।'

'मैं अकेले कुछ नहीं कर सकता', मुखिया ने उदास होकर कहा—'मुझे फ़ौजी मदद की ज़रूरत है।'

'मैंने कभी तुम्हें मदद देने से इनकार किया है ? अगर तुम्हें मदद की ज़रूरत है तो मैं मदद तुम्हें दूँगा। लेकिन ख़ुद भी तो कुछ करना ज़रूरी है। अपने आप भी तो तुम्हें कोई तरकीब सोचनी चाहिए।'

मुखिया की छोटी-छोटी आँखें चमक उठीं।

'अच्छी बात है, मैं एक योजना के बारे में सोचूँगा, और फिर आपको रिपोर्ट दूँगा...'

'अच्छी बात है, अच्छी बात है, मगर ख़ाली सोचते ही मत रह जाना। याद रखो, चार दिन। और उस छोकरे के बारे में भी...मुलजिमान का पता ज़रूर लगना चाहिए—ज़रूर—नहीं तो तुम्हीं इसके लिए ज़िम्मेदार होगे। चार दिन इसके लिए भी मैं तुम्हें देता हूँ।'

वह खिड़की की ओर घूमा। बाहर आँधी अब भी बिफरकर चल रही थी, बर्फ़ चारों तरफ़ उड़ रही थी, मकान की चूलें हिल रही थीं, और शहतीर और तख़्ते चर्र-चर्र कर रहे थे, मानो अभी उखड़कर उनके टुकड़े-टुकड़े हो जायँगे। गाप्लिक ने महसूस किया कि इंटरव्यू समाप्त हो गया। कप्तान की चौड़ी-चौकोर पीठ को उसने सलाम किया और बाहर निकल आया।

उसने सड़क पर आने के बाद ही अपनी टोपी सर पर रखी। कंधों के बीच में अपने सिर को दुबकाये सब आशाएँ छोड़कर भी अपने मस्तिष्क में इसी समस्या को सुलझाता हुआ चला जा रहा था कि आख़िर कैसे वह इस दृढ़-प्रतिज्ञ ज़िद्दी गाँव की मुट्ठी से अन्न का दाना ढीला कर सकेगा। बर्फ़ीले अंधड़ में वह सामने से आते हर एक आदमी से टकरा ही गया था। अपने अत्यावश्यक विचारों को जो उसे घेरे हुए थे, एकाएक छोड़कर, डर से सहम, वह पीछे की तरफ़ को उछल गया। एक बूढ़े ने, जिसके सर के बाल पके हुए थे, ग़ौर से उसकी तरफ़ देखा, उसको पहचानने के बाद, मानो उसी

पर, घृणा से थूक दिया और सड़क छोड़कर मकानों की कतारों की तरफ मुड़ गया।

गाप्लिक जल्दी-जल्दी लपककर अपने मकान पर पहुँचा, काग़ज़ का एक टुकड़ा लिया और मेज़ पर जमकर बैठते हुए माँगों की सूची बनाने लगा। उसने अपना सिर पहले दायः ओर झुकाया, फिर बायीं ओर, कुछ शब्द काग़ज़ पर घसीटे, फिर दोबारा लिखे हुए को काटा और एक आह खींची। खिड़की के बाहर, आँधी की साँय-साँय, कप्तान के कर्कश स्वर की याद, और गाँववालों के चेहरे, जिनकी याद से भी वह कम भयभीत नहीं होता था,—ये सब उसकी जान सुखा रहे थे। उसे पसीना आ गया। अपने गंजे सर को उसने पोंछा, उसने महसूस किया कि यह उसका आख़िरी पत्ता था, महसूस किया कि अब आख़िरकार उसे वर्नर को संतुष्ट करना ही पड़ेगा, कि आख़िरकार जैसे भी हो इस गाँव का विरोध तोड़ना ही होगा।

इधर आँधी से उड़ाये हुए बर्फ़ के बादलों के बीच गाँव शांत और मौन खड़ा था। लोग घरों में बैठे खिड़कियों के बाहर चीख़ती हुई आँधी का स्वर सुन रहे थे। केवल बूढ़ा येवडोकिम ओख़ाबको ही अपने अकेलेपन की घुटन से इतना तंग आ गया था कि उसने अपने पड़ौसी से जाकर मिल आने का निश्चय किया। उस तेज़ आँधी को झेलते हुए माल्युक के घर की बाड़ के बराबर-बराबर चलकर वह द्वार पर आया और वहाँ देर तक अपने जूतों की बर्फ़ झाड़ता रहा। घर के अंदर से एक आवाज़ भी किसी की नहीं आई। येवडॉकिम ने दरवाज़ा खटखटाया और किसी उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही उसे खोल दिया। तीन भयभीत आँखों के जोड़े उसकी ओर स्थिर दृष्टि से घूर रहे थे।

'तुम सब अच्छी तरह तो हो?'

माल्युचिखा को जैसे साँस मिली। उसका हृदय विक्षिप्त गति से धड़क रहा था।

'क्या तुम हो, दादा येवडॉकिम?'

क्या तुम्हें दिखाई नहीं देता कि मैं हूँ? यह क्यों तुम्हारे होश-हवास आज खोए हुए-से हैं?'

माल्युचिखा ने उत्तर नहीं दिया। वह अपनी लाठी की टेक लिये, खड़ा रहा।

'आख़िर तुम मुझे बैठने के लिए क्यों नहीं कहती ? अब नये रिवाजों का चलन हो गया है यहाँ, एँ ?'

'अच्छा है जो हम लोगों के साथ ना ही बैठो तुम ; तुम्हारे लिए यही अच्छा है कि यहाँ बिलकुल ही न आओ,' उसने आहिस्ता से कहा।

'क्यों न आऊँ ?'

वह अपने कंधों को हिलाकर रह गई। बूढ़े ने अपने हाथ को एक झटका दिया और बेंच पर खिड़की के पास बैठ गया।

क्या हो गया है, तुम्हें, गाल्या, सनक गई हो, या क्या ? इस तरह कैसे बैठी हो तुम ? मिश्का कहाँ है ?'

नन्हीं ज़ीना सहसा ऊँचे स्वर से बिलककर रो उठी।

'क्या हो गया तुझे ?'

'चुप हो जा, ज़ीना, रो नहीं ; सख़्ती से उसकी मा ने कहा।

येवडोकिम अपना सिर खुजाने लगा।

'ऐसी आँधी चल रही है कि ग़ज़ब ! सारा घर हिल रहा है। अकेले ही बैठे-बैठे तबीअत बड़ी ऊब जाती है...इसी से मैंने सोचा, ज़रा चलूँ अपने पड़ोसियों को झाँक लूँ।'

'ऐसे पड़ौसी जैसे इस समय हम हैं, दादा...' माल्युचिखा ने एक आह भरी।

उसने लाठी पर अपने दोनों हाथ रखकर ठोड़ी उस पर जमाई और ध्यान से स्त्री की ओर देखने लगा।

'कुछ हो गया है, क्या ? मिश्का ऐसे तूफ़ान में कहाँ मारा-मारा फिर रहा है ?'

'मिश्का चला गया, दादा...'

'क्या मतलब तुम्हारा, चला गया ? कहाँ चला गया ?'

'वह चला कहीं नहीं गया...जर्मनों ने आज शाम मिशा को शूट कर दिया।'

बूढ़े का सिर काँपने लगा।

'मिशा को श्-श्-शूट कर दिया! क्या बात कर रही है, औरत?'

वह अपने हाथ ज़ोर-ज़ोर से मींजने लगी यहाँ तक कि उँगलियाँ चटख़ने लगीं।

'सुनो, जो मैं तुमसे बता रही हूँ...वह शेड् में ओलेना के लिए थोड़ी सी रोटी देने गया था, और उन्होंने उसे शूट कर दिया...'

उसकी भूरी नीली आँखों में जो प्रश्न था, उसे वह पढ़ सकती थी।

'नहीं, मैंने उसे जर्मनों के लिए पड़ा नहीं रहने दिया, सो मैने नहीं किया। मैंने उसे खाई में से खींचकर अपनी पीठ पर लादकर घर लाई।...हमने उसे दफ़ना भी दिया है। अस्तु, अब कोई उसका पता नहीं पा सकता।...

'क्या उन्हें मालूम होगया है, कौन था वह?'

'कैसे मालूम होगा? उन्होंने तो बस उसे मार डाला, और खाई में फेंक दिया, एक कुत्ते की तरह...अब शायद वे लोग उसकी ढूँढ़ करेंगे, लेकिन, अभी तक तो सब शांत है। जब तुमने खटखटाया तो मैं समझी वे ही लोग आ रहे हैं।'

बूढ़े ने सिर हिलाया।

'तो यह बात है...कितने लोग मारे जा रहे हैं।...छोटे-छोटे बच्चे... और तुम, साशा, इसको अच्छी तरह याद रखना...'

उस मौन बालक ने अपना सिर हिला दिया।

'तुम्हारा बाप जब आयेगा, और लोग भी जब लौटकर आयेंगे, तब फिर उनको तुम यह सब बताना, सब कुछ...'

'और क्या तुम्हारा ख़याल है, वे लोग नहीं जानते?' स्त्री ने रूखे स्वर में पूछा।

'क्यों नहीं, वे सब जानते हैं।...वे अपनी आँखों से देख रहे हैं।...फिर भी तो ये ज़ुल्म बढ़ते ही जाते हैं; एक के बाद एक, एक के बाद एक...आज से पहले प्लाटन दूसरों का बदला ले रहा था, अब मिश्का के लिए भी उसे बदला लेना होगा...'

'वह सब एक ही बात है, माल्युचिखा ने शांतिपूर्वक कहा।

'हाँ, हाँ, सब्र एक तो हुई है...फिर भी, बेटा आख़िर बेटा ही है। मेरे बेटे को उन्होंने सन् १९१८ में मार डाला था...मुझे बहुत सी बातों के लिए दुश्मनों से निपटारा करना है, लेकिन ख़ास तौर से उस बेटे के लिए। आख़िर दिल के जितना नज़दीक जो होगा इतनी ही पीड़ा पहुँचायेगा। यहाँ मैं पड़ा हूँ एक झुराया हुआ बूढ़ा आदमी जो किसी के काम का नहीं... अगर आज कहीं मेरे पोते होते, तो घर में चहल-पहल होती ..'

'तुम्हारा तो अपने पोतों से गाँव भरा हुआ है, दादा।'

'गाँव तो हुई है, क्यों नहीं ; फिर भी अपने घर और परिवार के आदमियों की बात कुछ और होती है...'

'सुनो, वे लोग लोहे की कड़ी को बजा रहे हैं, जिसका मतलब है कोई मीटिंग...'

माल्युचिखा का रंग फ़क़ पड़ गया।

'यह ज़रूर मिश्का को ढूँढ़ निकालने के ही बारे में होगी...'

बूढ़े ने अपना हाथ हिलाया।

'हो सकता है यह मिश्का के बारे में हो, हो सकता है, न हो...तुम समझती हो वे लोग और कुछ नहीं सोच सकते ?'

अभी तक वे लोहे की पटरी को जो घंटे की तरह बज रही थी, पीटे जा रहे थे।

'जो भी हो, हम लोगों को जाना ही पड़ेगा, नहीं तो वे लोग खदेड़कर हमें वहाँ ले जायँगे। तुम आ रहे हो, दादा ?'

'मुझे डर है, यह हमारे अख़्तियार की बात नहीं ; चलो चलें,' उसने उठते हुए और लाठी पर अपना भार डालकर झुकते हुए कहा।

'और तुम, साशा, बाहर कहीं मत जाना। ज़ीना को देखना। जैसे ही मीटिंग ख़त्म हो जायगी, मैं लौट आऊँगी।'

हवा में उड़ती बारीक बर्फ़ के पर्दों में से निकलते हुए उन्होंने सड़क पर अपना रास्ता पकड़ा। सड़क के दोनों ओर फटाफट दरवाज़े खुल रहे थे और स्त्रियाँ और लड़कियाँ और बूढ़े लोग बाहर निकलकर आ रहे थे।

'तुम्हें मालूम है, यह सब क्यों, किसलिए है ?'

'मुझे कैसे मालूम होता ? उतना ही मैं भी जानता हूँ जितना तुम ।'

'हे परमेश्वर, क्या बात होगी आज!' स्त्रियों में से एक ने गहरी साँस भरी ।

'लो, अब, वहाँ काँखती-कराहती मत चलो,' फटाक से तभी फेडोसिया क्राव्चुक बोल उठी । वह पास से गुज़र रही थी । तुम्हें अभी यह मालूम नहीं कि किस लिए यह मीटिंग है और अभी से तुम मिनमिनाने लगीं...'

'पर तुम जानती हो, मेरी मैना, यह किसी के भले के लिए नहीं होगा...'

'तुम्हें भले की उम्मीद थी उनसे ? भले की एक रही । इतना बहुत-सा भला उनके हाथों होता रहता है कि भला छोड़कर तुम और कुछ उम्मीद ही नहीं करतीं...'

'बस यही बात है ..'

"लेकिन पहले से ही आहें भरने की तो कोई ज़रूरत नहीं । न पहले से और न बाद में ही,' फ़ेडोसिया बोली ।

किसी ने उत्तर नहीं दिया ।

सब वास्या के बारे में जानते थे । वे जानते थे उसके होंठों के दोनों तरफ़ किस चीज़ ने गहरी-गहरी रेखाएँ डाल दी हैं । अगर किसी को यह कहने का अधिकार था कि यह समय कराहने-आह भरने का नहीं, तो उसको सबसे पहले था । वह आहें नहीं भर रही थी; यद्यपि उसके जीवन में वह आशा नहीं थी, जिसको लेकर और लोग जी रहे थे । उनके बेटे और पति और नहीं तो फ़ौज या छापेमार टुकड़ी में तो थे ; वे जीवित थे, और जिस सुख की घड़ी में आख़िरी जर्मन लाल सैनिक की गोली खाकर अपनी आख़िरी साँस तोड़ चुकेगा, तो ये उनके साथी आकर सबों से मिलें-भेंटेंगे ।

बर्फ़ीले बवंडर के बीच से होकर गहरी धुँधली छायाएँ एक के बाद एक आती रहीं । लोग सभी दिशाओं से आ रहे थे और स्कूल की ओर जा रहे थे । आदत के अनुसार वे अब भी इसे स्कूल ही कहते थे । यह एक बड़ी-सी इमारत थी, जिसमें बड़ी-बड़ी खिड़कियाँ, ऊँची छतें और सफ़ेद पत्थर की अँगीठियाँ थीं । लम्बे-चौड़े कमरे थे, जिनका वातावरण सुखद था । केवल अब वहाँ कोई स्कूल नहीं रह गया था । जर्मनों ने डेस्कों और मेज़ों का चीर-

चीरकर ईंधन के काम में ले लिया था। दीवारों से नक़्शों को फाड़ डाला था, स्कूली सामान से भरी हुई छोटी-छोटी अल्मारियों को तोड़ डाला था। कुल तस्वीरों को फाड़कर फेंक दिया था। स्कूल के बड़े हाल में नीरवता और ठंड का ही राज्य था। इस हाल में लोग आ-आकर भरते गये, यहाँ तक कि वह स्त्रियों और बूढ़ों की वयस्क भीड़ से पूरा भर गया।

मलान्या विश्नेवा ही सबसे अलग होकर खड़ी थी। म नो कोई अदृश्य दीवार, जिसे कोई पार करना नहीं चाहता था, उसे बाक़ी भीड़ से अलग किये हुए थी। मुर्दे की तरह पीली, वह दीवार से लगकर खड़ी थी। उसकी विक्षिप्त दृष्टि एक ही बिन्दु पर जमी हुई थी। उसके रूमाल के नीचे से बालों के काले गुच्छे बाहर निकले हुए थे, लेकिन उन्हें हटकर उसके पीछे नहीं किया था।

गाप्लिक ऊँचे से चबूतरे पर, जो नष्ट होने से बच गया था, रखी हुई एक छोटी-सी मेज़ के पीछे बैठा था। फ़ेल्डवैबेल ने, जो उसके बराबर बैठा था, जमुहाई ली और यों ही-सी एक नजर हाल में जमा हुए लोगों पर डाली।

'सब मौजूद हैं यहाँ ?' गाप्लिक ने अपने लम्बे हड्डहे जिस्म को मेज़ के पीछे से उभारते हुए पूछा। उसकी लम्बी गर्दन पर उसका छोटा-सा गंजा सिर आगे-पीछे हिल रहा था।

'सब हैं,' दरवाज़े के पास से किसी ने बड़बड़ाकर कहा।

इसके बाद मुखिया ने मेज़ पर से कुछ काग़ज़ उठाये, फिर न जाने किस वजह से उन्हें वहीं रख दिया और अपने काँपते-से हाथों से उन्हें उलटता-पलटता रहा।

'इस गंजे बुड्ढे के होश गुम हो रहे हैं, भीड़ में किसी ने फ़ुसफ़ुसाकर कहा।

'ज़रूर इसने कोई नई गन्दी धूर्तता की बात सोच निकाली होगी, ऐसी कोई बात जो हमारे आगे अब तक नहीं आई।'

'क्यों न काँपे उसकी रूह ? ऐन मुमकिन है कि वह जानता हो कि जब हमारी फ़ौजें लौटेंगी तो ज़िन्दा ही उसकी खाल उतार लेंगी...'

'यानी अगर यह पहले ही हमारे पंजे में नहीं पड़ गया और हमने इसे

मज़ा नहीं चखा दिया, जिससे फिर गाँव का मुखिया होने की उसकी लालशा हमेशा के लिए ठंडी हो जायगी।'

'क्या करोगी तुम उसके साथ ?' सामूहिक खेत के अस्तबलची, बूढ़े अलक्ज़ांडर ने पूछा।

'कैसा सवाल है! क्या करना चाहिए, सो हम जानते हैं,' लम्बी क़द-वाली सुन्दरी फ़ोज्या ने झट जवाब दिया।

'ख़ामोश! यह बातें क्या हो रही हैं। मीटिंग शुरू हो गई है।' गाप्लिक ने क्रोध से भीड़ को एक नज़र देखते हुए कहा।

'देखने से तो नहीं लगता कि शुरू हो गई,' येबडाकिम बुड़बुड़ाया।

'भला क्या हो गया है तुम लोगों को! मुखिया गॉस्पोडिन साहब ने यहाँ पधारने का कष्ट उठाया है। साथ में उनके मालिक और आक़ा भी हैं। और तुम्हें क्या चाहिए!' एक ने ताना देकर कहा।

'ख़ामोश!' ऐसे स्वर में, जो मानो उसके गले का नहीं था, गाप्लिक ने चिल्लाकर कहा। 'कितनी बार मुझे तुम लोगों से कहना पड़ेगा! यह काना-फूसी क्या हो रही है?'

ज़ोर से अपनी नाक साफ़ करते हुए टरपिलिखा बीच में बोल उठी, 'ख़ामोश हो जाओ, औरतो, सुन लो इसे, क्या बकवास करने आया है यह!'

गाप्लिक ने अपना गला साफ़ किया, काग़ज़ को अपनी आँख के पास तक लाया, जेब से लोहे के फ्रेम का एक चश्मा निकाला और उसे नाक पर रखा।

'ओह्-हो . !'

'वह अब इस काग़ज़ को पढ़ने जा रहा है. . .'

'मालूम होता है, कोई नया हुक्मनामा है . .'

ऐनक के ऊपर से आँखें तरेरकर मुखिया ने भीड़ को घूरा। हरेक ने बातें करना बन्द कर दिया। उसने फिर अपना गला साफ़ किया और अपनी पतली रिरियाती हुई-सी आवाज़ में शुरू किया।

'आज की तारीख़ तक गाँववालों ने जिसकी शक्ल में मुक़र्रर टैक्स यानी अनाज की अदायगी नहीं की है।'

भीड़ में सुरसुराहट हुई और तुरन्त ही बन्द हो गई।

'गाँववालों को आगाह किया जाता है कि जिस की शक्ल में मुक़र्रर टैक्स यानी अनाज की, पछले एलान के मुताबिक मिक़दार में, अदायगी की मीआद इस एलान के आम होने की तारीख़ से तीन दिन के अन्दर ख़त्म हो जायगी।'

बड़बड़ फिर शुरू हुई।

'जो कोई अपने मुल्क और जर्मन फ़ौज के लिए अपने फ़र्ज़ को इन तीन दिनों के अन्दर-अन्दर पूरा नहीं करेगा...'

गाप्लिक रुका। अपने चश्मे के नीचे से एक विजय-दृष्टि सम्पूर्ण भीड़ पर डाली। आख़िर पूर्ण मौन छा गया और एक-टक सबकी आँखें उसके होंठ पर केन्द्रित हो गईं।

' "उसको उन्हीं अहकाम के बमूजिब सज़ा दी जायगी जो सरकारी हुक्मों की अदूली, तोड़-फोड़ के कामों और सिविल नाफ़रमानी के लिए जारी किये गये हैं, और उसकी सज़ा..." '

'हमें मालूम है, सब मालूम है,' ऊँची आवाज़ में किसी ने जान-बूझकर अतिरिक्त शान्त और लापरवाही के स्वर में कहा।

मेज़ के पीछे से फेल्डवैबेल खड़ा हो गया और ध्यान से उस कोने की तरफ़ देखने लगा जिधर से यह आवाज़ आई थी। लेकिन वहाँ प्रत्येक व्यक्ति एक दम शांत खड़ा था, सब की आँखें मुखिया पर गई हुई थीं।

' "उसकी सज़ा..." ' गाप्लिक ने अपनी आवाज़ ऊँची की, मानो आनन्द ने उसे विह्वल कर दिया था, ' "उसकी सज़ा होगी मौत।" '

उसने एक गहरी साँस खींची, थोड़ा-सा रुका, आज्ञा की तारीख़ और कप्तान के हस्ताक्षर पढ़े और उस काग़ज़ को तह करके रख दिया।

'सबने सुन लिया?'

'सुन लिया हमने,' भीड़ में से किसी ने कहा।

'सबने समझ लिया?'

'समझ लिया, हमने ख़ूब समझ लिया,' टरपिलिखा ने कहा, जो ठीक मेज़ के पास खड़ी थी। 'हम समझते हैं इसे, जैसा इसे समझना चाहिए।'

गाप्लिक ने उसपर सन्देह की दृष्टि डाली। लेकिन उसने शान्त स्थिरता के साथ उससे आँख मिलाई। उसका चेहरा गम्भीर और कड़ा था।

'अच्छा, अगर यह बात है, तो सब ठीक है...'

भीड़ हिली और उसमें से कुछ लोग दरवाज़े की तरफ़ बढ़ने लगे।

'किधर ख़्याल है, कहाँ जा रहे हो ?'

'क्या मीटिङ्ग अभी ख़तम नहीं हुई ?'

'एक मामला अभी और है,' कड़े स्वर में मुखिया ने कहा। माल्युचिखा का दिल फिर बैठने लगा; और फिर, भय से विक्षिप्त होकर ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगा।

'यह मामला इस तरह है...'

किसान साँस रोककर प्रतीक्षा करते रहे।

'कल रात किसी ने हिरासत क़ैदी को रोटी पहुँचाने की कोशिश की थी।'

माल्युचिखा ने अपनी पड़ोसिन का हाथ भींज लिया। चेचोर आश्चर्य से उसकी ओर देखने लगी।

'क्या हुआ तुम्हें ?'

'कुछ नहीं...कुछ नहीं...'

चेचोर के हाथ को भींचे हुए उसने साँस अन्दर खींची।

'वह क़रीब दस साल का एक लड़का था, जिसने रोटी पहुँचाने की कोशिश की थी।'

भीड़ में खुसर-पुसर होने लगी। लोग एक दूसरे से कानाफूसी और आँखों-आँखों में इशारे करने लगे।

'ख़ामोश! क़रीब दस साल का एक लड़का। मुजरिम को शूट कर दिया गया।'

चेचोर ने एक परखती दृष्टि माल्युचिखा के निर्जीव-से सफ़ेद चेहरे पर डाली और शीघ्रता से अपने ख़ाली हाथ से उसका वह हाथ दबा दिया जो उसका हाथ भींचे हुए था। उस स्त्री की उन उँगलियों पर वह धीरे-धीरे हाथ फेरने लगी, जिसके नाख़ून उसकी हथेली में गड़े जा रहे थे।

'अपने सँभाले रहो, प्यारी। नहीं तो वह ताड़ जायगा,' उसने माल्युचिखा के कान में आहिस्ता से कहा।

लेकिन गाप्लिक श्रोताओं की ओर नहीं देख रहा था। अपने नकी सुर से वह पढ़ने लगा :

' "इस नाबालिग़ मुलजिम की लाश किसी नामालूम आदमी या आदमियों ने चुराई या छिपाई है। जिसको भी मुलजिम की शनाख़्त है या जो लाश उठानेवाले मुजरिमान को जानता है, उस पर फ़र्ज़ है कि वह जर्मन कमांडेंड को आकर इत्तला दे।" '

गाप्लिक काग़ज़ को उठाकर अपनी आँखों तक ले गया और कनअँखियों से फेल्डवैबेल की तरफ़ देखते हुए, जो उसके बराबर में बैठा हुआ था, खाँसा। फेल्डवैबेल उठा, भीड़ के बीच से होकर, जो उसके आगे से दोनों तरफ़ हटती गई, दरवाज़े की तरफ़ गया, और वहाँ से बरामदे की तरफ़ एक दृष्टि डाली। हरेक वहाँ से सशस्त्र सैनिकों को खड़े देख सकता था; उनकी रायफलों पर लगी हुई किर्चें चमक रही थीं। लोग एक-दूसरे की तरफ़ देखने लगे। कानाफूसी और बातचीत बंद हो गई।

' "क़ानून की हिफ़ाज़त और अमन-अमान क़ायम करने के लिए और मुजरिम को हिरासत में लाने के इरादे से जर्मन कमाण्डेण्ट का हुक्म होता है कि....." '

किसान भीड़ अब आगे क्या आयेगा साँस रोककर उसका इन्तज़ार करने लगी।

' ' कि इस गाँव के हस्बज़ैल बाशिन्दे बतौर ज़मानत के हिरासत में ले लिए जायँगे..." '

सबके सर और आगे को झुक गये। येवडोकिम ने कान के पीछे अपने हाथ की कुप्पी बना ली, ताकि और साफ़-साफ़ सुन सके।

' "गाँव के हस्बज़ैल बाशिन्दे : पलांचुक, ओल्गा..." '

दरवाज़े के पास खड़ी हुई एक नौजवान लड़की हिली। उसका मुँह ऐसे खुल पड़ा, मानो वह अभी चीख़ उठेगी, लेकिन उसके मुँह से कोई आवाज़ नहीं निकली।

' "ओख़ाबो, येवडोकिम..." '

येवडोकिम ने अपने चारों तरफ़ खड़े हुए लोगों की ओर आश्चर्य से देखा।

'क्या ?'

' "ओख़ाबो, येवडोकिम," ' गाप्लिक ने ज़ोर देकर दुहराया और आगे पढ़ा :

' "ग्रोख़ाच, ग्रोस्सिप..." '

एक पाँव के लँगड़े मज़बूत जिस्म के एक किसान ने निराश भाव से अपना सिर हिलाया।

' "चेचोर, मारिया..." '

माल्युचिखा ने अपनी पड़ोसिन का हाथ छोड़ दिया और उसकी तरफ़ आतंकित होकर देखने लगी।

'चिन्ता न करो, गाल्या, चिन्ता न करो...मेरे बच्चों की ख़बर रखना,' मारिया ने उससे धीरे से कहा।

' "विश्नेवा, मलान्या..." '

वह लड़की हिली तक नहीं, बराबर स्थिर दृष्टि से अपने सामने की ओर देखती रही।

एकाएक मुखिया के दिल में यह बात उठी कि इन्हीं ज़मानती क़ैदियों को अनाज इकट्ठा करने के लिए भी उपयोग किया जा सकता है। गोली की चोट तो फिर गोली की ही चोट है, लेकिन मान लो कि कोई आदमी ऐसा हो जो स्वयं तो मरने से न डरे ; लेकिन जो दूसरे के प्राण संकट में डालने के लिए तैयार न हो ? इस प्रकार की घटनाएँ पहले भी उसके सामने आ चुकी थीं। अस्तु, बिलकुल अपनी ही ज़िम्मेदारी पर—कौन काग़ज़ात देखने जाता है कि उसमें और जर्मनों में क्या तय हुआ है, क्या नहीं—उसने घोषणा की :

'अगर मुलज़िमों का पता तीन दिन के अन्दर-अन्दर नहीं मिलता, और अगर इसी अर्से में अनाज की अदायगी भी शुरू नहीं होती तो ज़मानती क़ैदियों को फाँसी दे दी जायगी।'

भीड़ हिली और फिर चारों तरफ़ दबे स्वर में कानाफूसियाँ होने लगीं।

'बस, यही बात थी, क्या अब हम लोग जा सकते हैं ?' एकाएक फेडो-सिया क्रावचुक ने पूछा ।

पूरी भीड़ ने मानो एक गहरी साँस ली और प्रत्येक व्यक्ति ने कुछ हलकापन महसूस किया ।

'मीटिंग ख़तम हुई । सिवाय उन लोगों के जिनके नाम मैंने पढ़े, तुम सब लोग जा सकते हो ।'

एक के पीछे एक किसान दरवाज़े की तरफ़ बढ़ चले । पाँचो ज़मानती आज्ञा की प्रतीक्षा किये बिना ही एक पंक्ति में मेज़ के पास आकर खड़े हो गये । लोग उनके बराबर से गुज़रते गये, कुछ के चेहरे लटके हुए थे, बाक़ी सीधी दृष्टि से उनकी तरफ़ देखते हुए जा रहे थे ।

शीघ्र ही स्कूल का हाल ख़ाली हो गया, लेकिन लोग तितर-बितर नहीं हुए । बर्फ़ के बवण्डर में भी वे लोग सड़क पर खड़े रहे । गाप्लिक और फेल्ड-वैबेल बाहर आये । उनके पीछे-पीछे पाँचो ज़मानती थे, जिन्हें किर्च-बन्द सिपाही बीच में लिये हुए थे । मारिया चेचोर और ओल्गा पलानचुक एक दूसरे के गले में बाँहें डाले हुए थीं । येवडोकिम अपनी छड़ी से ज़मीन को ज़ोर-ज़ोर से मारता जा रहा था । धीरे धीरे मौन भीड़ के बराबर से वे गुज़र गये । सहसा मारिया चेचोर मुड़कर खड़ी हो गई ।

'चिंता मत करो इसकी, दिल मज़बूत रखो और हिम्मत न हारो ! हमारी चिंता न करो ! हिम्मत रखो !' उसने खुली मज़बूत आवाज़ में पुकारकर कहा ।

सैनिक ने, जो उसके साथ चल रहा था, उसकी छाती पर एक मुक्का दिया । वह लड़खड़ाई, मगर सिर ऊँचा किये हुए चलती गई ।

दृढ़ क्रोध का मौन भाव लिये हुए भीड़ धीरे-धीरे छँट गई । फेल्ड-वैबेल के लंबे-लंबे कदमों का साथ देने के प्रयास में गाल्पिक को एक तरह से दौड़ना ही पड़ रहा था । दुनिया की किसी बात के बदले भी वह इस मौक़े पर अकेला रहना नहीं चाहता था । वास्तव में गाँव के मुखिया के पद पर नियुक्त होने के बाद से यह पहली ही बार उसने इस निश्चयात्मक ढग से काम किया था, यानी सार्वजनिक रूप से ऐसे आदेशों की घोषणा की थी जो गाँव पर सीधे चोट करते थे । उन देहातियों के चेहरों की स्मृति मात्र से

एक ठंडी कँपकँपी से उसकी रीढ़ काँप गई। लेकिन, इससे भी अधिक उसको कप्तान वर्नर और उसी सुबह को दी हुई उसके धमकियों का भय था, कि अगर उसने अपने नतीजे नहीं दिखाये तो कोई निश्चित कार्रवाई उसके विरुद्ध की जायेगी। गाँव तो आख़िर एक गाँव ही था—बूढ़े मर्दों, स्त्रियों और बच्चों की भीड़; मगर कप्तान वर्नर जर्मन सत्ता का एक प्रतिनिधि था और उसके एक शब्द के पीछे रायफल और किर्चों की शक्ति थी। अब से पहले तक गाप्लिक हर तरह अपना पहलू बचाता गया था, लेकिन इस सुबह की मुलाक़ात से उस पर प्रकट हो गया था कि और अधिक टालना असंभव था, और अब बड़ी बुरी सायत उसकी प्रतीक्षा कर रही है। वह उस घड़ी और उस दिन को कोसने लगा, जब रास्टोव छोड़कर वह पीछे हटते हुए जर्मनों के साथ हो लिया था। उसे तो बस कहीं छिप रहना चाहिए था, कहीं चुपचाप पड़े रहकर फिर किसी दूसरी जगह निकल जाना चाहिए था। किसी न किसी तरह उसकी जान बच ही जाती। इन लड़ाई के दिनों में यह साबित करना आसान न होता कि यही था वह जिसने अपने गाँव में जर्मनों का स्वागत किया था और दलदलों में से उन्हें रास्ता दिखाया था।

जर्मनों की ही विजय होगी, उसने अपने आपको तसल्ली दी, यद्यपि इससे उसे उस समय तक क्या संतोष मिल सकता था, जब तक कि इसी गाँव में उसका रहना बदा था, जिसके तीन सौ परिवारों का प्रत्येक व्यक्ति अपने अंतरतम से उसे घृणा करता था, जिसके किसी भी घर में उसका हत्यारा छिपा हुआ हो सकता था, जोकि कोई भी पहला मौक़ा पाने पर उस पर प्रहार करने से न चूकेगा।

उसने एक गहरी साँस ली और मीटिंग की रिपोर्ट देने कमांडेंट के पास चला। किसान लोग अपने-अपने घरों को चले। घबराहट के मारे माल्युचिखा की जान आधी हो गई। उसके पाँव तले की ज़मीन सरकती जान पड़ती थी और अत्यधिक मर्म-पीड़ा से उसका हृदय भर उठा था। साशा अँगीठी के पास बैठा लकड़ी के टुकड़ों से शक्लें बना-बनाकर ज़ीना को बहला रहा था। उसने एक नज़र बच्चों के हलके भूरे सिरों पर डाली और उसके हृदय की पीड़ा और भी तीखी हो उठी।

'तो, कैसे रहे तुम लोग, ज़ीना अच्छी बिटिया रही ?'

'हाँ; वह अच्छी बिटिया रही...मीटिंग ख़त्म हो गई ?'

'हाँ, ख़त्म हो गई...मैं एक सेकेंड ज़रा-सा मारिया के यहाँ होकर अभी वापिस आती हूँ।'

'क्यों जा रही हो मारिया के यहाँ ?'

मारिया को जर्मनों ने पकड़ लिया है। उसके बच्चों को यहाँ लाना ज़रूरी है,' उसने साधारण भाव से कहा। साशा ने लकड़ी के टुकड़ों पर से अपनी दृष्टि उठाई।

'पकड़ लिया है ? क्यों ?'

'क्या तुम जर्मनों को अभी तक नहीं जानते ?' अस्पष्ट भाव से मा ने उत्तर दिया और बाहर चली गई। थोड़ी ही देर में वह मारिया के तीन छोटे-छोटे बच्चों को साथ में लिए वापिस आई। सबसे बड़ा साशा की उम्र का था, लगभग आठ का।

'मम्मा, मम्मा', करके तीन साल की नीना रो रही थी।

'रोओ नहीं, मम्मा जल्दी आ जायेगी। वह आ जायेगी', स्त्री ने उसे चुप कराया 'बैठ जाओ बच्चो, मैं तुम्हें कुछ खाने को दूँगी।'

उसने चूल्हे के नीचे से कुछ आलू निकाले, जहाँ वे छिपाकर रख दिये गये थे। उन्हें धोया और छिलके समेत उन्हें उबलने चढ़ा दिया ताकि उनका कोई भी अंश ख़राब न जाय। सिवाय इन आलुओं के और थोड़ी-सी कुटी हुई बजड़ी के जो एक बखरी में पड़ी थी, घर में कुछ नहीं था। अनाज, आलू, गोश्त, और शहद का एक मर्तबान सब घर से काफ़ी फ़ासले पर, ज़मीन में गाड़ दिया गया था और इस समय वह सब जम गये थे और उनके ऊपर बर्फ़ जम गई थी, इसलिए उन तक पहुँच पाना भी असंभव हो गया था।

'थोड़े आलू खा लो, और कोई चीज नहीं है। हमारे नौजवान आनेवाले हैं, तब तक रुको, फिर हम लोग रोटियाँ भी पकाकर खायँगे।'

'आलू, बस, और कुछ नहीं', ज़ीना असहाय स्वर में मिनमिनाई।

मा ने उसको डाँटा :

'और क्या चाहिए तुझे ! तुम्हारे अच्छे भाग्य हैं जो थोड़े-से हमारे पास हैं। चटोरी कहीं की !'

उसने आँखें निकालकर क्रोध से अपनी लड़की की तरफ़ देखा, और सहसा उसे बच्चे की पतली-पतली बाँहों, बिचारी के मुँह के कोनों पर पड़ी हुई छोटी-छोटी सलवटों का ध्यान आ गया। एक असह्य दुःख से उसका हृदय भर आया।

'न रो, रोओ नहीं ! हमारे सैनिक जवान लौटकर आयेंगे और तब सब फिर ठीक हो जायगा, हम लोग रोटी पकाएँगे और उस पर मैं शहद की तह रखकर दूँगी, तब तू खाना ! लेकिन इस वक्त आलू ही बहुत है...'

'और क्या, यही बहुत है... !' साशा ने उत्साह से कहा, और ज़ीना ने भी जल्दी से उसे दुहराया।

'और क्या, यही बहुत है .. !'

माल्युचिखा ने चूल्हा सुलगाया और इस बीच सारे समय बच्चों से बातें करती रही, लेकिन वह अपनी बढ़ती हुई आंतरिक व्यथा को दबा नहीं पा रही थी। चीज़ें उसके हाथ से गिर-गिर पड़ती थीं, वह किस बारे में बात कर रही थी, भूल-भूल जाती थी, उसने ज़ीना के आगे आलुओं के छिलके की एक तश्तरी सरका दी, पानी ही ढरका दिया। बच्चे आश्चर्य से उसकी ओर देखने लगे।

'क्या हो गया है तुम्हें, मम्मा ?' साशा ने आख़िर पूछा। कुछ डरकर उसने अपने पुत्र की ओर देखा।

'कुछ नहीं बेटे, कुछ नहीं...क्या होता मुझे !'

'सर में दर्द हो रहा है ?'

'दर्द ! हाँ, ठीक; हाँ, जल्दी में इसी बहाने का सहारा लेते हुए वह कह उठी। 'मेरा सर दर्द कर रहा है, तू ठीक कहता है।'

'मीटिंग की वजह से हुआ है', गंभीरता से साशा ने निश्चित किया।

'मीटिंग से ही हुआ...भयानक घुटन थी वहाँ, इतने सारे लोग इकट्ठा थे...मैं सोचती हूँ, उसी वजह से दर्द हो गया।'

उसके समझाने से बच्चों को सन्तोष हो गया और वे अपने धन्धे में लग

गये। माल्युचिखा रकाबियाँ धो रही थी, बीच बीच में एक दृष्टि स्टोव के पास खेलते हुए बच्चों पर भी डाल लेती थी। उसके हाथ सुन्न से हो गये थे और उसका हृदय मार्मिक पीड़ा से फटा जा रहा था। गहरे रङ्ग के बालोंवाले तीन सिर, तीन साल की नीना, पाँच साल का ओस्का, और आठ साल का सोन्या। नन्हें-नन्हें प्राणी!...चेचोर स्वयं फौज़ में थे। वह उस व्यथा की आग में झुलस रही थी जो उसके हृदय को जला रही थी और उसके अन्तर को खाये डाल रही थी। रह-रहकर वह खिड़की तक जाती और बाहर देखती।

'क्या कोई आ रहा है?'

'नहीं, बेटे, कोई नहीं, मगर मुझे बाहर जाना ज़रूरी है। बहुत देर नहीं लगेगी...'

'तुम हर समय बाहर ही जाती रहती हो', रुआँसी-सी होकर ज़ीना ने कहा।

'फिर क्या हुआ, मैं जाती हूँ तो! अगर जाना ज़रूरी है तो मैं ज़रूर जाऊँगी। बिना बात के यों ही गाँव में दौड़ती नहीं फिरती', खीजकर उसने कहा।

'अपनी शाल लेती जाओ', साशा ने उसे याद दिलाया। उसने देखा कि वह जैसी खड़ी थी, वैसी ही बिना शाल या कोट ओढ़े द्वार की तरफ़ जा रही थी।

ग्रोखाच का घर काफ़ी दूर था। तेज़ हवा उसके मुँह पर थपेड़े मार रही थी और जमे हुए बर्फ़ के बारीक-बारीक कण उसके गालों पर काँच के टुकड़ों की तरह चुभ रहे थे। वहाँ पहुँचते-पहुँचते उसकी साँस फूल गई थी। वह फाटक पर ही रुक गई। मन में सोचा कि उसे इस प्रकार हाँफते हुए अन्दर नहीं जाना चाहिए। वह केवल उस क्षण को, जब ग्रोखाच परिवार का सामना उसे करना ही पड़ेगा, यथासम्भव और आगे टालना ही चाहती थी। जिसकी गर्दन अब फन्दे में पड़ चुकी थी, उस मनुष्य की स्त्री और उसकी दोनों लड़कियाँ सम्भवतः अपनी सूनी काटेज में बैठी होंगी और बहुत दुखी होकर रो रही होंगी।

अचानक आँगन से आरी चलने की आवाज़ उसके कानों में आई। गाल्या चकित रह गई। ऐसे दिन कौन ग्रोखाच के घर में काम पर लगा हुआ होगा?

ग्रोखाच की पत्नी और उसकी काले नेत्रोंवाली बड़ी लड़की, फ्रोज़्या बाड़े के पास आरी से लकड़ी चीर रही थीं, वे भी गाल्या को देखकर वैसे ही चकित रह गईं। गाँव में आना-जाना इन दिनों अधिक होता था। अपने मकान में प्रत्येक व्यक्ति अकेला ही रहता था और यही सोचकर रहता था कि देखो अबकी बार जर्मन क्या करते हैं।

'मैं तुमसे कुछ बातें करना चाहती थी बहना...'

'बड़ी अच्छी बात है', कमर सीधी करते हुए दूसरी ने जवाब दिया। 'आओ, अन्दर चलें।'

घर के अन्दर माल्युचिखा की दृष्टि ग्रोखाच की सबसे छोटी लड़की पर पड़ी जो खिड़की के पास बैठी हुई थी।

'मैं तुमसे अकेले में बात करना चाहूँगी ..'

'अकेले में?' ग्रोखाचिखा ने आश्चर्य से पूछा। 'आख़िर किस बारे में? अच्छी बात है। जैसा तुम चाहो। लिडा, जाओ, बाहर थोड़ी-सी लकड़ी तो और चीरो, हम लोग इतने यहाँ कुछ बात करें।'

जो कमीज़ वह लड़की सी रही थी, उसको तहाकर, सुई उसी मोटे कपड़े में खोंसकर वह चुपचाप कमरे से बाहर चली गई। उसकी आँखें रोने से सूजी हुई थीं।

माल्युचिखा एक बेञ्च पर बैठ गई और आहिस्ता-आहिस्ता अपनी उँगलियाँ चिटकाने लगी। उसकी मेज़बान निःशब्द उसकी ओर देखती रही।

'काफ़ी तेज़ आँधी चल रही है बाहर', आख़िरकार वह बोली।

'काफ़ी तेज़ आँधी है बाहर', माल्युचिखा ने दोहराया और वे दोनों फिर मौन हो गईं।

ग्रोखाच की वास्कट बिस्तर के ऊपर एक खूँटी से लटक रही थी। माल्युचिखा ने उस वास्कट की तरफ़ देखा। एक जेब फटी हुई थी और सामने और पीछे की तरफ़ उसमें तल्ले लगे हुए थे। एक बटन डोरे से लटका हुआ झूल रहा था। वह पति की काम पर पहनकर जाने की वास्कट थी।

'तुम मुझसे क्या कहना चाहती थीं?' आख़िरकार दूसरी स्त्री ने प्रश्न किया। माल्युचिखा ने पीड़ा-भरी आँखों से उसकी तरफ़ देखा।

'वे लोग तुम्हारे आदमी को पकड़कर ले गये...' उसने धीरे से कहा।

दूसरी स्त्री की भवें तन गईं।

'हाँ।...लेकिन हम कर क्या सकते हैं।...हमें लगता है कि ऐसा ही हमारा भाग्य है। शायद वह लौटकर आ जाय। तुम इसी बारे में बात करना चाहती थीं?'

'हाँ,.. ना...'

'इसमें कहने की बात क्या है? पहले तो मेरा हृदय इतना टूट गया कि मुझे लगा, शायद मैं वहीं गिरकर मर जाऊँगी। फिर मैं घर आई, और मैंने इस पर सोचा, मैंने दिल में कहा, अरी, कोई काम हाथ में ले ले, तो यह सब आसान हो जायगा। सो, फ़ोज़्या के साथ लकड़ी चीरने में लग गई। सर मार-मारकर तो दीवार को तोड़ा नहीं जा सकता। और बैठे-बैठे रोने से तो किसी का भला होगा नहीं। आज वह है, कल कोई और होगा। अगर ऐसा ही और कुछ दिनों चलता रहा तो इस गाँव में कोई भी नहीं रह जायगा। यह एक बात तो निश्चित है। वे हम सबको मार डालेंगे एक-एक करके।'

'शायद अब और अधिक इस तरह न चल सके।'

'वही तो मैंने कहा—अगर इसी तरह चलता रहा तो। अभी तक तो कुछ सुनने में आया नहीं। ज़रा सी भी कहीं आवाज़ होती है तो मालूम होता है कि मैं बन्दूकों की आवाज़ सुन रही हूँ, अपने नौजवानों का आना सुन रही हूँ। कितना अर्सा हो गया अब तक? एक महीना। लगता है साल भर हो गया। और कितने ही जान से चले गये!...जब उस मुखिया ने मेरे मालिक का नाम पढ़ा, तो उसने मेरी ओर देखा। और मैंने अपने आप से कहा: तुम घूर रहे हो मुझे, यह देख रहे हो कि मैं अब चीख़ी, अब चीख़ी, लेकिन तुम जीते जी कभी यह दृश्य नहीं देखोगे, कभी नहीं। तेरे आगे, कुत्ते की औलाद, मैं कभी नहीं रोनेवाली। समय आयेगा, जब तेरी ही आँखों से आँसू निकलेंगे, खून के आँसू निकलेंगे! जहाँ तक इस गाँव की औरतों का सम्बन्ध है, हम कील की तरह सख़्त हैं। हमसे तुम कुछ नहीं पा सकते...'

'मेरी बहना.. '

'क्या बात है ?' उसने उसे बोलने की हिम्मत दिलाई।

माल्युचिखा बेञ्च से उठ ही जो गई थी, और ओखाचिखा के आगे बिलकुल ज़मीन पर ही नीचे झुकी जा रही थी।

'पागल हो गई हो ? क्या कर रही हो तुम ?'

'बहना, वह मेरा ही मिश्का था जिसे जर्मनों ने कल रात मार डाला...'

'मिश्का ?'

'वह मैं ही थी जो रात में गई और खाई से उसे घसीटकर लाई और लाकर उसे दफ़नाया। यह मेरे ही कारन हुआ जो तुम्हारे आदमी और उन सबों को जर्मनों ने क़ैद कर लिया है...'

उसके शरीर का प्रत्येक तन्तु काँप रहा था, उसके पाँव उसे सँभाल नहीं पा रहे थे। पर सहसा उसका मन अपेक्षितः सुस्थिर हो गया। उसने आख़िर जी की बात कह डाली थी। उसकी मेज़बान आगे को झुक आई।

'लेकिन क्यों तुम बता रही हो यह सब ? किसी को भी क्यों मालूम हो यह सब ?'

माल्युचिखा उसका तात्पर्य नहीं समझी।

'क्यों ! तुम्हारा आदमी पकड़ा गया...मैं जो कह रही हूँ, यह है कि मैं अवश्य जाऊँगी और उनके कप्तान के आगे इस बारे में सब कुछ कह दूँगी। तब वह उन लोगों को छोड़ देंगे।'

तुरन्त ओखाचिखा खड़ी हो गई।

'तुम्हारा दिमाग़ क्या एकदम सिड़ी पागलों की तरह फिर गया है ? अपनी अक़्ल से बिलकुल ही हाथ धो बैठी हो ? तुम जर्मनों के पास जाओगी ?'

'उनसे यह बताने के लिए कि असल में हुआ क्या...गाँव के लोगों का इसमें क़सूर नहीं।'

'और, क्या तेरा क़सूर है ? क्या तू सोचती है कि तुझे इस छोकरे को उनके हाथ में छोड़ देना चाहिए था ? इसका विचार तक भी ?...भले-बुरे की तेरी बुद्धि कहाँ गई ? यह एक किसान की और एक औरत की बुद्धि तो नहीं है। सीधे उस मुखिया के हाथ की कठपुतली बनने जा रही है ! बस

उन्हें पाँच लोगों को पकड़कर बन्द करने की देर थी, और जिसकी खोज में वे लगे हुए थे, वह खुद ही उनके सामने आकर मौजूद हो जाता है। जानती भी है, मूर्खा, इसका नतीजा क्या होगा? तू सुझाना चाहती है उनको तरीका, कैसे वे हमें पकड़ें? आज तू उनके पास जाती है और कल वे पाँच नहीं पचास को हवालात में बन्द कर देते हैं। कभी ऐसा नहीं सुना गया। आज दिन तक तो हममें से कोई भी घुटनों के बल जर्मनों के आगे घिसटते नहीं गया और तुम एक हो कि उठीं और अपने दिमाग़ में ये बातें लेकर चलीं...'

'मेरी ही वजह से लोग हवालात में डाल दिये गये हैं, मेरी ही वजह से उनको...'

'तुम्हारी वजह से नहीं! यह हम पर दुःख आकर पड़ा है, इसलिए वे हवालात में हैं, हमारे सर पर संकट है, लड़ाई है, वे घृणित जर्मन लोग हैं! उन्होंने मिश्का को मार डाला...बच्चों पर गोलियाँ चलाते हैं, कुत्ते कहीं के!'

माल्युचिखा जड़वत् वहाँ खड़ी थी।

'तो फिर तुम सोचती हो कि...'

'सोचती! सोचना क्या इसके अन्दर! अपने घर जा, भली औरत, और इस बारे में किसी के आगे साँस न लेना। यह सच है कि हम सबके सब तुम्हारे अपने ही आदमी हैं, फिर भी लोगों के मन को डाँवाडोल करने से फ़ायदा? किसी को इन बातों के बारे में जानने की कोई ज़रूरत नहीं। यह हमारी हाथ-हाथ भर की ज़बानों के कारन ही है जो वे हमारे बीच में जमे हुए हैं, और बराबर जमे रहेंगे। घर जाओ, अपना काम-धन्धा करो, और इस तरह पागल-पन का रूप दिखाती मत फिरो।'

'लेकिन तुम्हारा आदमी...'

'अब फिर! मैं कहती हूँ तुझसे! वह मेरा आदमी है कि तेरा आदमी? मैं तो अपनी ज़बान क़ाबू में किये चुप बैठी हूँ। जो होना है होगा। अगर यही उसके भाग्य में है तो वे उसकी जान ले लेंगे; अगर नहीं है, तो वह जीता रहेगा और अगर ऐसा वक्त आ गया कि हमें जर्मनों के अधीन रहना ही पड़ेगा, तो जितनी जल्द हम लोग मर जायँ, उतना अच्छा...'

'कोई हमेशा के लिए हम जर्मनों के अधीन थोड़े ही रहते रहेंगे !'

'अरी भलीमानुस, अगर मैं इससे उलटा एक क्षण के लिए भी कुछ सोचती होती तो मैं बैठी न रहती—गले में एक फंदा डालकर उसी मेख़ से लटक जाती ! एक ही बात मैं जानती हूँ कि आजकल हमारे दिन ख़राब हैं, लेकिन इनके भी ख़राब दिन आनेवाले हैं। ओह ! इनके ख़राब दिन अभी आने को ही हैं।'

स्त्री का चेहरा अरुण हो उठा, और उल्लास की आभा उसकी आँखों में चमक उठी।

माल्युचिखा ने एक आह भरी।

'तुमने मेरा दिमाग़ उलझा दिया है...'

'मुझे तो लगता है, तुम्हारा दिमाग़ बहुत मुद्दत से उलझा हुआ रहा है... तुम्हारी आत्मा तो बिलकुल मसीह जैसी शुद्ध है, लेकिन विचार एकदमो मूर्खतापूर्ण। अपने बारे में मत सोचो। बस अपने बारे में सोचो ही नहीं, बाक़ी हरेक के बारे में सोचो। जब तुम हरेक के बारे में सोचोगी, तब तुम्हें साफ़ मालूम हो जायगा कि तुम्हें कुछ भी कहने का अधिकार नहीं है। वे हमारा कुछ नहीं कर सकते। जुल्म ढाने दो उन्हें; गोलियाँ चलाने दो।...एक मरेगा, दो मरेंगे, लेकिन हम सबके सब उनके बूते के लिए बहुत अधिक ह जाते हैं।...जब तक हमारे नौजवान वापिस नहीं आते, हमें डटे रहना होगा, दाँत भींचकर इसी तरह जमे रहना होगा... !'

माल्युचिखा ने यंत्रवत् अपना सिर हिला दिया। शैथिल्य से वह अभिभूत हो गई थी। उसकी समस्त शक्ति उसे जवाब दे चुकी थी। उसका जी करता था—बैठ जाऊँ, यहीं फ़र्श पर बैठ जाऊँ और जी भर आँसू बहाऊँ। मिशुट्का के लिए, ग्रोखाच के लिए, उन तीनों बच्चों के लिए जिन्हें वह साशा की निगरानी में अपने घर छोड़ आई थी, वास्या क्रावचुक के लिए, जो नाले में बर्फ़ में दबा पड़ा था, नौजवान पाश्चुक के लिए, जिसे उसी नाले के पास उन लोगों ने गोली से मार दिया था, और फाँसी के तख़्ते से झूलते हुए लड़के के लिए, गाँव भर के लिए, और उन सब लोगों के लिए जिन्होंने गाँव के लिए युद्ध किया था और जो पीछे हट जाने के लिए, टैंकों के सामने पीछे

हट जाने के लिए, मजबूर हो गये थे—उन्हें देखे तो अब एक महीना हो भी गया था—उन सबके लिए वह चाहती थी कितना रोये, कितना रोये।

'अपने को सँभालो, क़ाबू में करो, नहीं तो तुम किसी काम के जोग नहीं रहोगी', ग्रोखाचका ने कुछ खीझकर कहा।

माल्युचिखा ने चुपचाप विदा ली और बाहर आई। लीडा और फ्रोज्या से, जो आँगन में आरी से लकड़ी चीर रही थीं, कुछ कहने को वह अपना मन स्थिर नहीं कर सकी। उसके कानों में अभी तक वह लताड़ गूँज रही थी जो ग्रोखाच की पत्नी ने उसे दी थी। सचमुच, क्या औरत थी वह भी... सभी जानते थे कि ग्रोखाच का एक कटु स्वभाव की लड़ाका और झक्की औरत थी जिसके मुँह से कभी किसी के लिए कोई अच्छा शब्द नहीं निकला। और अब—कैसी स्त्री का स्वभाव उसके अंदर आ गया था...

उधर घर पर साशा लकड़ियों के टुकड़ों से एक घर और ओसारा बनाने में तल्लीन था, गायघर, और अस्तबल में गायों और घोड़ों को रख रहा था, यहाँ तक कि नन्हीं-सी नीना ने भी अपना रोना बंद कर दिया था और दिल-चस्पी लेकर उसे देख रही थी।

'और यहाँ तुम क्या रखने जा रहे हो?'

'यहाँ हम भेड़ों को रखेंगे, नयीवाली जो वे अभी हाल में लाये हैं।'

'ऊँहू!'

'एक कोयला मुझे देना। हमारी काली भेड़ें भी होंगी। एक और देना, बहुत-सी भेड़ें हमारे पास होंगी।...'

'बिल्ली कहाँ है?' नीना ने पूछा।

'बिल्ली बाहर गई हुई है, बिल्लियाँ हमेशा बाहर चली जाया करती हैं', ज़ीना ने उसे समझाया, और नीना को संतोष हो गया।

'जर्मन लोग आ रहे हैं, और हमें डंगरों को यहाँ से हँका ले जाना है'; ओस्या ने व्यवस्थापक के स्वर में आदेश दिया।

'बहुत अच्छा, लेकिन कौन उन्हें हँकाकर ले जायेगा?'

'मैं!' नीना ने ज़िम्मा लिया।

'और मैं छापेमारों के साथ ठहर जाऊँगा', ओस्या ने निश्चय किया। आओ, चलो अब, डंगरों को हँका ले चलें।'

उन्होंने लकड़ी के टुकड़े को जो फाटक का काम दे रहा था, हटा दिया और सफ़ेद टहनी के टुकड़ों और काले कोयलों को—सामूहिक खेत की कुछ संपत्ति को खुले मैदान में ले आये।

'और आगे हँकाकर हम लोग कहाँ ले जायेंगे इन्हें ?'

'दूर पिछावे में', साशा ने गंभीरता से कहा, 'नदी के उस पार, हमारे आदमी जर्मनों को नदी पार करने नहीं देंगे।'

'लेकिन वे नदी पर बम तो गिरा सकते हैं', ओस्या बीच में बोला।

'परवाह मत करो, हम लोग रात को पुल पार करेंगे; साशा ने कहा। 'मुझे वह तख्ता देना, यह हमारी नदी होगी।

सहसा दरवाज़ा ज़ोर से खुला। आँखों के पाँच जोड़े ऊपर उठ गये। साशा अपने स्थान से हिल न सका।

चौखट पर एक जर्मन सैनिक खड़ा था। उसके सिर पर चिथड़े बँधे हुए थे, जिस के नीचे से उसकी ख़ूनी लाल आँखें बच्चों को घूर रही थीं। बर्फ़ से लदा हुआ उसका सारा शरीर बर्फ़ से सफ़ेद हो रहा था। चारों तरफ़ निगाह डालने के बाद जब उसने देखा कि कोई सयाना आदमी घर में नहीं है, तो वह अँगीठी के आगे बैठे हुए बच्चों की तरफ़ मुड़ा। शुरू-शुरू में तो साशा उसका मतलब नहीं समझ सका। उसे पूरा विश्वास था कि यह आदमी मिशा को लेने आया है, कि जर्मन लोग सब जान गये हैं और कि उन्होंने उसकी मा को गिरफ़्तार कर लिया है और हरा-सा बरसाती कोट पहने हुए यह सैनिक बड़े दरवाज़ेवाले कमरे में अब उसके भाई की क़ब्र खोदने ही वाला है। सैनिक को अपनी प्रार्थना कई बार दोहरानी पड़ी तब कहीं साशा उसके ग़लत रूसी उच्चारण को समझ सका।

'दूध, दूध...'

'हमारे पास बिलकुल नहीं है', साशा ने घुटी हुई-सी आवाज़ में जवाब दिया। लेकिन सैनिक दूध के लिए ज़िद करता रहा।

'दूध दो, दूध...'

साशा उठा, और बिना सैनिक पर से अपनी दृष्टि हटाये, फाटकवाले कमरे में गया। जब वह उसमें से होकर निकला, उसे अपने पावों-तले भाई की क़ब्र का एहसास हो आया, कि मिश्का यहीं ज़मीन के नीचे पड़ा है। सैनिक लड़के की हरकतों को ग़ौर से देखता रहा। साशा ने गाय-घर का दरवाज़ा खोला और अपने हाथ के इशारे से उसे जताया कि वहाँ कुछ नहीं है। और सचमुच कैसे वहाँ कुछ हो सकता था, जब कि जर्मन लोग अपने आने के पहले ही दिन उनकी गाय, पेस्ट्रश्का को घसीटरक ले गये थे और तुरत वही कमांडेंट के घर के आगे उसे ज़िबह कर डाला था।

सैनिक ने ख़ाली गाय-घर के अंदर देखा। फ़र्श पर थोड़ा-सा फूस और गोबर पड़ा था, जिससे अब भी गाय-घर की-सी बास उसमें से आ रही थी, मगर बर्फ़-सी ठंडी भूसे की नाँद खाली पड़ी थी। प्रत्यक्ष हो गया था कि यहाँ से दूध नहीं प्राप्त हो सकता था।

इसी बीच ज़ीना ज़ोर-ज़ोर से किलकारी मारकर रोने लगी थी। उसकी मा वहाँ थी नहीं, साशा जर्मन के साथ गाय-घर में गया हुआ था, इसलिए वह डर गई थी। नीना भी जो आँसू बहाने के लिए हमेशा तैयार रहती थी, उसका अनुकरण कर रोने लगी। सैनिक कमरे में वापिस लौटा और भाव-हीन मुस्कराहट के साथ बच्चों पर एक दृष्टि डाली।

'रोओ नहीं', अपने सड़े हुए काले दाँत दिखाते हुए, उसने जर्मन भाषा में कहा। ज़ीना और भी भयभीत होकर रोने लगी। जर्मन ने अपनी रायफ़ल उसकी ओर तानी। जान पर खेलकर साशा कूदकर आगे आया और स्वयं अपनी बहन के सामने खड़ा हो गया। उसने अपनी बाहें चौड़ी फैला दीं और उसकी, सर पर लत्तों से बँधी हुई सर्विस टोपी के नीचे से, गंदी ख़ूनी आँखों के साथ सीधी आँखें मिलाकर घूरने लगा।

'हो-हो', दाँत निकालकर सैनिक हँसा और उसके रायफल की नली नीना की तरफ़ बढ़ने लगी। नन्हीं नीना कुछ नहीं समझती थी कि यह क्या हो रहा है, पर उसने अपना रोना बंद कर दिया और उस अजीब से आदमी की ओर—उस जर्मन की ओर, अपनी गोल-गोल बड़ी-बड़ी आँखें फैलाये हुए, एकटक देखने लगी। वह जानती थी कि वह जर्मन था।

'मैं अब शूट करता हूँ', सैनिक ने कहा—उसने उसके शब्द नहीं समझे, लेकिन उसे महसूस हुआ कि उनमें कोई भीषण भाव भरा हुआ था। ज़ीना भी मौन हो गई थी। साशा नली के काले रंध्र को अपने प्राणों की पूरी एकाग्रता से देख रहा था।

यह काला सूराख़ बहुत ऊँचा नहीं उठा हुआ था। वह इस तरह हिलता जा रहा था कि कभी कोई छोटा सिर उसका निशाना होता था, कभी कोई।

अचानक एक विचार साशा के मन में उठा: मान लो वह कूदकर रायफ़ल छीन लेता है? फिर...कैसे गोली चलाते होंगे? और बाद में क्या होगा, जब वह जर्मन को मार चुकेगा? अब सबसे ज़रूरी यह कि क्या वह उससे रायफल झटककर लेने में समर्थ होगा?

अपने काले-काले दाँत दिखाता हुआ जर्मन हँसा। उसे यह खेल अच्छा लग रहा था, वह भयभीत बच्चों की आँखें, वह उनके गालों का विवर्ण होना, वह सबसे बड़े के चेहरे पर भावों का तनाव। जल्दी ही साशा समझ गया कि सैनिक इस तरह अपना दिल बहला रहा है। हाँ, यह प्रत्यक्ष था कि सैनिक अपना मनोरंजन कर रहा है। रायफ़ल की काली नली ऊपर-नीचे होती रही। साशा के हृदय में यह इच्छा भी उठी कि सैनिक गोली चला ही दे, जल्दी गोली चला दे और आख़िरकार इस क़िस्से का ख़ात्मा कर दे।

उसने सोचा कि जर्मन उसे ही पहले मारेगा, क्योंकि वही उम्र में सबसे बड़ा था, और वह इसके लिए तैयार, बंदूक की नली की तरफ़ एक-टक दृष्टि बाँधकर घूरता रहा। चलाने दो उसे गोली एक दम, चल जाय गोली और ख़त्म हो जाय सब।

आख़िर सैनिक अपने खिलवाड़ से उकता गया और दाँत फाड़कर हँसते हुए, जाते समय, कंधे पर अपनी बंदूक लटका ली और निकल-कर बाहर चला गया, घूमकर एक बार भी पीछे नहीं देखा। बच्चे अपने स्थानों पर जमे रह गये, उनकी आँखें दरवाज़े पर गड़ी की गड़ी रह गईं। साशा प्रतीक्षा करता रहा—शायद जर्मन दरवाज़े के पीछे छिपा हुआ खड़ा है, शायद वह सिर्फ़ इस बात की राह देख रहा है कि जैसे ही उनमें से कोई हिला

कि उसने दरवाज़ा खोला, और फ़ायर किया। नीना तक ऐसी स्थिर बैठी थी जैसे चूहा। दरवाज़ा खुला—यह उनकी मा थी।

और तब कहीं उनकी तमाम घुटी हुई भावनाओं का विस्फोट हुआ। ज़ीना भरज़ोर अपनी पूरी शक्ति के साथ चीख़कर रो उठी। नीना के आँसू फफक उठे और ओस्या और सोन्या भी रोने लगे। केवल साशा ही अपनी मा के सामने चुपचाप खड़ा रहा।

'क्या बात है? क्या हुआ?' उसने घबराकर पूछा।

'कुछ नहीं, एक जर्मन यहाँ आया था', साशा ने उत्तर दिया।

'एक जर्मन? क्या चाहता था वह?'

'कुछ नहीं, उसने दूध माँगा।'

'अच्छा, तो फिर?'

'मैंने उसे दिखा दिया कि हमारे पास कोई गाय नहीं।'

'और वह चला गया?'

'हाँ।'

'तो फिर किस बात के लिए तुम सब चिल्लाकर रो रहे हो?' क्रोध से उसने डाटकर कहा। 'वह चला गया, बस, क़िस्सा ख़त्म हुआ। उसने तुम्हें मारा?'

'नहीं, उसने हमें मारा नहीं', साशा ने उदास मुँह से उत्तर दिया। कुछ सुस्थिर अनुभव करके वह स्त्री फाटकवाले कमरे में अपनी शाल से बर्फ़ झाड़ने लगी, ताकि वह घर भर में न फैल जाय।

'ऐसी आँधी!—थमने का नाम ही नहीं लेती...'

बाहर से दूर पर किसी के चीख़ने की आवाज़ आ रही थी।

'वह क्या है?'

'कुछ नहीं ..ओलेना के बच्चा हो रहा है', माल्युचिखा के स्वर में रोष था।

सब बच्चे ध्यान से सुनने लगे। एक लम्बी खिंची हुई, दबी-भिंची हुई चीख़ ताला-बन्द टपरी की दिशा से आ रही थी। वह तेज़ हो जाती थी, फिर मद्धिम हो जाती थी; कुछ क्षण के लिए बिलकुल ख़त्म हो जाती और फिर बढ़ती हुई तीव्रता से फूट पड़ती।

यही कमरा कमांडेंट के दफ़्तर के पीछेवाला कमरा था। चार दीवारें और एक सूना फ़र्श। यहीं पहले किताबों की एक आलमारी थी और एक बड़ी दफ़्तर की मेज़, जिसमें 'ग्राम-सोवियत' और 'सामूहिक खेती' के काग़ज़ात और रजिस्टर आदि रहते थे।

इस पुराने घर की दीवारें बहुत मजबूत लट्ठों की बनी हुई थीं। जर्मनों ने खिड़कियों पर तख्ते जड़ दिये थे, अस्तु कमरे में अँधेरा था। चौकी के कमरे में एक लालटेन जल रही थी; उस तरफ को दरवाज़ा खुलता था सिर्फ़ उसी के फटे हुए दराज़ों में से ज़रा-ज़रा रोशनी आ रही थी। इसी अँधेरे कमरे में वे पाँचों क़ैदी ले जाये गये। ताले में चाबी घूमी—एक बार दो बार, उन्होंने सुना, और बस। अपने आप को उन्होंने चार दीवारों से घिरा और अन्धकार में खोया हुआ पाया। न यहाँ बेंचें थीं न स्टूल। धीरे-धीरे उनकी आँखें उस अँधेरे की अभ्यस्त हो गईं। वे दीवारों की टेक लगाकर फ़र्श पर बैठ गये। ग्रोखाच तो पूरा-पूरा लम्बा होकर लेट गया, उसने अपना सिर अपनी मुट्ठी पर जमा लिया। थोड़ी ही देर में उसके खुर्राटे का स्वर समान गति से चलता हुआ सुनाई देने लगा।

लेकिन और दूसरे लोग सो न सके। ओल्गा पलांचुक चेचोरिखा से चिपककर बैठ गई। उसे डर लग रहा था। उसे इस कमरे से, यहाँ के अँधेरे से, दरवाज़े के पीछे की रोशनी से डर लग रहा था। क्या होनेवाला होगा, वह इसी से डर रही थी। चेचोरिखा ने अपनी बातों में उसे ले लिया, और इस प्रकार वे एक दूसरे से चिमटी हुई बैठी रहीं।

एक मलाशा ही औरों के साथ मिलकर न बैठी। बाहों के बीच में घुटने मोड़े हुए वह दीवार के सहारे एक कोने में अलग बैठी खुली आँखों से एकटक अँधेरे में देख रही थी। जो कुछ उसके साथ के हवालाती सोच रहे थे वह नहीं सोच रही थी। बिना हिले-डुले, टिकी हुई एक नज़र से देखती हुई, साँस बन्द करके उसने बहुत ध्यान से आवाज़ पर अपने कान लगा रखे थे। पर न तो यह समझने की कोशिश कर रही थी कि बराबरवाले कमरे में से आनेवाली अस्पष्ट आवाज़ें क्या हैं, और न ही वह दीवार के उस पार उधर गाँव में क्या हो रहा है इसी की भनक पाने के प्रयास में भी। भवें सिकोड़कर वहाँ बैठी

हुई वह अपने अन्दर की किसी आवाज़ को सुन रही थी। एक सप्ताह हो भी चुका था—नहीं, बल्कि अधिक, दस दिन। और फिर भी उसका कोई चिह्न नहीं था। हठ करके, व्यथा और पीड़ा के साथ वह एक, केवल मात्र एक ही चुभते हुए विचार को दोहराती रहती थी : हाँ—या, नहीं ? हाँ—या, नहीं ? उसकी कनपटियों में ख़ून ज़ोर-ज़ोर से फड़कने लगता। उसका हृदय धुक्-धुक् कर रहा था। लगता था कि वह अपनी शिराओं में, समस्त शरीर में विभिन्न रास्तों से दौड़ते हुए, कलाइयों पर नन्हीं-नन्हीं हथौड़ियों में बजते हुए रक्त का प्रवाह सुन रही है। कैसे वह जाने, कैसे उसे विश्वास हो ?

फिर उसने दिन गिने, हो सकता था कि यह उसका मिथ्या भ्रम था। लेकिन बार-बार, फिर-फिर दिनों का जोड़ वही दस दिन आता था और फिर उसका एक कारण भी तो था, एक कारण।......दस दिन। लेकिन उसके विचार उन दस दिनों पर न रुकते; वे और पीछे जाते, एक-एक दिन को गिनते हुए उस एक दिन पर पहुँचते जिसने उसके जीवन को दो हिस्सों में काटकर रख दिया था। मलाशा को शारीरिक व्यथा, असह्य मर्म-पीड़ा होती थी, जब उस दिन का विचार उसके मन में उठता था। तब वह अपनी मुट्ठियाँ इतनी ज़ोर से भींच लेती थी कि उँगलियों के नाखून हथेलियों में घुप जाते थे। वह अपने घुटनों को ज़ोर से समेट लेती थी, यहाँ तक कि वह ऐसी कसकर अपने अन्दर दुबक जाती थी जैसे एक कसा हुआ बन्द चाकू हो। अपनी हड्डियों तक में उसे ऐसा महसूस होता था, मानो वे उसकी घोर मर्म-पीड़ा की चक्की के नीचे पीसी जा रही हैं। उसे ऐसा लगता कि बस अब दूसरे ही क्षण वह इसे सहन न कर सकेगी, अब वह अवश्य ही चीख़ उठेगी, एक वन-पशु की तरह ज़ोर से चिल्ला उठेगी। और उसकी इच्छा होती थी चिल्ला उठने की, अपनी पूरी शक्ति से हू-हू कर उठने, अपने बाल नोच डालने की, उस एक हूक में सब कुछ डुबा देने की : वह दिन और ये दस दिन, जो बराबर गिनते-गिनते, बार-बार फिर-फिर गिनते-गिनते, फिर-फिर जोड़ मिलाते बीते थे, जिनका जोड़ हमेशा वही एक संख्या होती थी......

पीड़ा से उसका शरीर ऐंठ रहा था। उसे निश्चय हो गया कि अब वह अधिक बर्दाश्त न कर सकेगी, बल्कि वहीं मुर्दा होकर गिर पड़ेगी। लेकिन

मौत नहीं आती थी। मरना इतना आसान नहीं था। अन्धकार में बैठकर उसे तो मानव-साँसों का स्वर सुनते रहना था और निरन्तर, बिना एक क्षण का विराम लिये, इस बात को याद रखना था, याद रखना था, कि वह, मलाशा, शापित है, कोढ़िन है, दूसरे लोगों से, गाँव से आजतक जो कुछ भी उसके जीवन में आया था उस सबसे, सदैव-सदैव के लिये अलग-विलग एक प्राणी है। और क्यों ? किसलिए ऐसा हो गया ? गाँव की कुल लड़कियों में उसी के लिए ऐसा क्यों होना था।

उसकी आँखों के आगे अन्धकार नहीं था; बल्कि वह तीन चेहरे थे, उसके ऊपर झुके हुए, वे घृणित चेहरे। एक बार ही हमेशा के लिए उनकी छाप उसके स्मृति-पटल पर गड़ गई थी, फोटोग्राफ के नेगेटिव की तरह वे हमेशा उसकी आँखों के आगे रहते थे। कोई चीज़ उसकी स्मृति से उन्हें मिटा नहीं सकती थी, उसकी मनःदृष्टि के आगे से कोई भी चीज़ उन्हें ढक नहीं सकती थी। तीन चेहरे—बढ़ी हुई दाढ़ियाँ, लाल-लाल कड़े बाल, फटे होठों के नीचे आगे को निकले हुए हिंस्र पशु के से विशाल दाँत, वहशी आँखें।

उसी कमरे में कुछ महीने पहले वह आइवन के साथ थी। वही कमरा, वही बिस्तर। लेकिन वहाँ की हवा अब टूटे हुए तकियों के रोंओं से भर उठी थी, फ़र्श पर फूँस और तिनके बिखरे हुए थे, टी-रोज़ (गुलाब के फूल) का गमला खिड़की पर से गिर पड़ा था और उसके टुकड़े जर्मनों के फुलबूटों के नीचे पड़कर चूर-चूर हो चुके थे। वह सोचना नहीं चाहती थी इसके बारे में। मगर इसके बावजूद हमेशा वह दृश्य उसके विचारों में बरबस अपने आप आ मौजूद होता था, एक क्षण को भी उसे शान्ति का अवकाश नहीं मिलता था। वे तीनों के तीनों। और फिर वही चेहरे, उनकी बढ़ी हुई दाढ़ियों के लाल-लाल कड़े बाल, उनकी गन्दी मज़ाकें, हँसी और शोर, और सँड़सी के से उनके बर्फ की तरह ठण्डे हाथों का उसके शरीर, उसके मुड़े-तुड़े हाथों और उखड़ी हुई टाँगों के चारों ओर कस जाना। तब उनके जाने पर दरवाज़ों के बन्द होते ही वह सब कुछ भरभराकर टूटना और वह भाप के मटीले-नीले बादल का अन्दर वेग से लहरकर घुस आना। और उसके बाद—

उसके बाद, एक दीर्घ, प्राण को आतंकित करनेवाला दुःसह पीड़ा का दुःस्वप्न। और अन्त के ये और भी असह्य दस दिन, जब कि सुबह से शाम तक, और सारी-सारी रात जागते हुए उसे अपनी ही नब्ज़ की आवाज़ सुनते-सुनते और दिन गिनते-गिनते इस तरह बितानी पड़ी है, ये दिन गिनते-गिनते वह विक्षिप्तावस्था के निकट पहुँच चुकी है, क्योंकि इसी प्रकार, एक के बाद एक, दिन बीतते गये हैं यहाँ तक कि दस दिन हो गये।

हाँ, गाँव में लोगों को मौतें आई थीं, संसार से वे उठ गये थे। लेवान्युक फाँसी के तख़्ते से झूल रहा था। ओलेना, गर्भिणी ओलेना, एक टपरी में जर्मनों के हाथों यातनाएँ सह रही थी। लेकिन एक उसके अतिरिक्त और कोई नहीं था, कोई नहीं था, जो अपने अन्दर किसी जर्मन का बीजपोषण कर रहा हो। मरे हुओं में से या जो इस समय यातना पा रहे थे, एक भी नहीं था, जो स्वयं अपने शरीर के अन्दर शत्रु को पाल रहा हो।

एक दूसरे कोने में ओल्गा पलांचुक चुपचाप एक बच्चे की तरह सिसकियाँ भर रही थी। मलाशा के अन्दर सहसा एक अस्पष्ट सा क्रोध उफर उठा, अकारण ही सहसा एक घृणा-भाव। वह मूर्खा आख़िर किस बात के लिए रो रही थी? रोने का क्या कारण था उसके पास? जर्मनों ने उसका सतीत्व नष्ट नहीं किया था, वह भयानकतम अनुभव उसे नहीं हुआ था जो किसी के आगे आना सभव है। किस बात से डर रही थी वह? कि वे उसे मार डालेंगे, फाँसी दे देंगे, गोली से उड़ा देंगे? मलाशा को विश्वास नहीं था कि ऐसी कोई बात हो सकती थी। यह तो एक बहुत ही अच्छी, बहुत ही सौभाग्य की बात होती, केवल इतनी आसानी से शत्रु के हाथ से मरना। नहीं, उसको ऐसा विश्वास नहीं होता था। वे लोग उन्हें हवालात में बंद रखेंगे, यही अधिक संभव है कि उनके लिए किसी भयानक सज़ा की तजवीज़ करें, मृत्यु से भी भयानक किसी सज़ा की। लेकिन वे मरेंगे नहीं, जर्मनों के हाथ से कभी कोई भलाई जनता की आज तक नहीं हुई, जर्मनों के हाथों उनका भाग्य नहीं खुल सकता। और मृत्यु तो एक सौभाग्य की बात होती। वह फिर दिन गिनने लगी—एक, दो, तीन। दस तक उसने गिना और वह घोर आत्म-व्यथा से तड़पने लगी। उसे ऐसा लगा कि उसका

हृदय फट जायगा—वह और अधिक क्षणों तक इसे बर्दाश्त नहीं कर सकती। लेकिन उसका हृदय फटा नहीं, कनपटी पर छोटी-छोटी हथौड़ियों की चोटें उसी तरह पड़ती रहीं, और अंधकार में स्थिर-दृष्टि से देखते हुए मलाशा ने सोचा कि वह इसी प्रकार गिनती जायगी, दिन गिनती जायगी, एक-एक करके, यहाँ तक कि वह अंतिम दिन तक गिन डालेगी, यहाँ तक कि वह नियत समय भी आ जायगा जब मलाशा, वह लाल सैनिक की पत्नी, एक जर्मन दोगले को जन देगी।

वह कान लगाकर सुनती रही, सुनती रही। और उसकी कनपटियों में और कलाइयों में उसका रक्त नन्हीं-नन्हीं हथौड़ियों की चोटें मारता रहा। उसने पेट पर अपना हाथ रखा, वहाँ भी रक्त-प्रवाह की नन्हीं-नन्हीं हथौड़ियाँ बज रही थीं। एक असह्य घृणा उसके अन्दर भर उठी अपने उस शरीर के प्रति, उस जर्मन के नीड़ प्रति, जिसका जीव अभी आया नहीं था, फिर भी जो आ चुका था, जो अस्तित्वहीन था, किंतु फिर भी जिसका अस्तित्व हो चुका था। अगर वह कुछ खाती थी, तो यह वह नहीं खाती थी, बल्कि यह वह जर्मन खाता था, जो सब कुछ मकोर जाता था, ताकि वह बढ़े, बड़ा हो और उसकी हीनावस्था में उसके लिए कलंक बने। अगर वह सोती थी तो नींद उसे स्वस्थ-मन नहीं करती थी—वह आराम नहीं करती थी, बल्कि वह जर्मन। वह एक बच्चे की तरह उसकी कल्पना कर ही नहीं सकती थी। बच्चा तो—ओलेना का बच्चा था जिसके चीख़ने की आज यहाँ तक, इस भारी लट्ठों के मकान में तालों के पीछे भी रह-रहकर सुनाई दे जाती थी; बच्चा—बच्चा तो, वह अज्ञात छोकरा था जिसे उन्होंने रात के वक्त गोली से मार दिया था, चेचोरिखा के तीन बच्चे और माल्युक के बच्चे बच्चे थे, वे सब बच्चे जो गाँव में पैदा हुए और बढ़कर बड़े हुए थे और जर्मनों के आने पर, देर या सबेर, जिनकी मौत अब निश्चित हो गई थी। ये सब थे बच्चे। माओं ने बच्चे जने थे, हलके रंग के बालोंवाले, गहरे रंग के बालोंवाले, हलकी नीली आँखोंवाले, और गहरी भूरी आँखोंवाले, पीं-पीं करते या ख़ुशी से किलकारियाँ मारते, गूँ-गाँ करते या उहुँक-उहुँक करते हुए बच्चे बच्चे थे, जो पालनों में झूलते थे। माएँ गर्भवती होती थीं, महीने पूरे करती थीं, बच्चों

को जनती थीं, उनका लालन-पालन करती थीं। लेकिन जिसे वह पेट में लिये हुए थी, और इसी तरह लिये रहेगी, वह जिसे जनेगी, वह बच्चा नहीं था, वह भेड़िए का बिल्ला, एक जर्मन था। और वह ऐसा कुछ था—उसने भयभीत होकर सोचा, कि जो बदल नहीं सकता था। अगर वह मर भी जाय—और वह तो स्वयं ही अपने नंगे हाथों से उसका गला घोंट देगी, फिर भी उसका कोई फल नहीं निकलेगा ; फिर भी वह यह बात, घोर तिरस्कार और घृणा के साथ क़यामत तक याद रखेगी कि उसने अपने रक्त से उसका पोषण किया था। लोग उसके बढ़ते हुए पेट को देखेंगे, उसकी गर्भावस्था की भारी चाल पर दृष्टि डालेंगे। हरेक उसे रास्ता देगा, इसलिए नहीं कि वह उनके बीच से ज़्यादा आराम से निकल जाय, बल्कि घोर उपेक्षा के कारण, इस डर से कि कहीं वे उससे छू न जायँ, एक जर्मन की पर्यंक-शायिनी से, जो अपने पेट में एक जर्मन का अंश लिये हुए थी।

निःसंदेह वे सब जानते थे। हरेक उसके लिए खेद प्रकट करता था और जर्मनों को कोसता था और उस घड़ी की चर्चा करता था जब सबों की तरफ़ से बदला लिया जायेगा। लेकिन मलाशा जानती थी कि यह सब महज उतना आसान नहीं था। बदला हरेक बात का लिया जा सकता था, पाश्चुक और लेवान्युक और ओलेना का बदला, धूल में मिले हुए घरों का और बच्चों की हत्या का बदला लिया जा सकता था, लेकिन उसका बदला कोई कभी भी नहीं ले सकता था। लेकिन यह एक ऐसी बात थी, जिसका इलाज नहीं हो सकता था। वह ख़ुद ही देख सकती थी कि यद्यपि इस विषय में कोई उससे कुछ बोलता नहीं था, दूसरी स्त्रियाँ उससे आँख से आँख मिलाकर बात नहीं करती थीं, लोग उससे इस तरह कतराते थे, मानो उसे प्लेग की छूत लगी हुई है। वह दिन जब वे तीन जबरदस्ती उसके घरमें घुस आये थे, उसके और गाँव के बीच एक अभेद्य दीवार की तरह आ गया था वह दिन, जब उन्होंने उसका सतीत्व हरा था और उसे गोली से मार भी नहीं डालना चाहा था, जैसा कि साधारणतया वे अपने अधीन क़ैदियों के साथ करते थे। वह जीवितों के बीच अपना व्यथा-पूर्ण जीवन बिताने के लिए रह गई थी। और मानो यह इतना सब काफ़ी नहीं था, मानो यह काफ़ी नहीं था कि उन्होंने

उसकी इज़्ज़त-आबरू ले ली थी, उसे एक नापाक चिथड़ा बनाकर डाल दिया था, अब वह दिन गिनने के लिए विवश थी, और हर बार उन दिनों का जोड़ वही आता था। वह हताश होकर टूटी हुई आशाओं में ही तिनके का-सा सहारा ढूँढ़ती थी, उस पागल विचार की मृगमरीचिका को पकड़ती थी कि शायद उसने भूल की है, कि यह सच नहीं है, ऐसा कभी-कभी हो जाता है और इसका कोई अर्थ नहीं है, एक दो दिन और बीतेंगे और फिर सब ठीक हो जायेगा। लेकिन यह सब निष्फल था, क्योंकि अपनी अंतरात्मा में वह जानती थी कि वास्तव में उसे गर्भ रह गया है और अब किसी तरह भी यह स्थिति बदल नहीं सकती।

उसे एक ग्रीष्म ऋतु की सुध हो आई, धूप, फूलों और ख़ुशबूओं से भरे हुए एक ग्रीष्म ऋतु की। ओस से भीगी हुई चाँदी की रातें, कमर-कमर तक, खड़ी हुई घासें, नदी-किनारे जानवरों के लिए घास सुखानेवालों के डेरे सोंधी-सोंधी पयाल के बीच में तंबुओं में बिताई हुई रातें, झिलमिलाते हुए तारे, पागलपन की तूफ़ानी रातें। उन प्यार और दुलार की घड़ियों ने किसी शिशु को जन्म नहीं दिया था। मधुर सुखद रातें, अधर से अधर मिले हुए, सुख-विभोर हृदयों की तेज़ धड़कन—वह सब बीत गया था और उसका कोई चिह्न अवशेष नहीं रहा था, मानों कभी कुछ था ही नहीं। ताहम कितनी रातें उस प्रकार गुज़र गईं थीं, घास-चारा सुखाने की पूरी की पूरी ऋतु। उसने प्रेम के पागल तूफ़ानों में पूर्णतः अपने को समर्पित कर दिया था, यद्यपि बाद में उसका कुछ फल नहीं निकला था, और उन्होंने बिना किसी रोष और लांछन के एक दूसरे से बिदा ली थी।

और अब यह एक क्षण आया, एक वीभत्स आधा घंटा, और इस आधे घंटे का दुर्गंध-सना फल फलेगा, उसके जीवन में एक नासूर बनकर पकेगा और सदैव के लिए अपना सड़ा हुआ मवाद का रस बहाता रहेगा।

उसे आइवन का ध्यान आया। सच था कि उनका विवाहित जीवन थोड़े ही दिनों का रहा था, फिर भी सुख और आनंद की रातें आई थीं, और उनकी मड़ैया के छेदों में से सितारों ने उनको झाँका था, और जून की रातों में सुखद उष्ण ग्रीष्म की पुरवाई उनको छूती हुई बही थी। लड़ाई पर

चले जाने के पूर्व ऐसा समय जीवन में आया था, और फिर भी—कुछ नहीं हुआ।

वह इसी गाँव में अपनी सुघड़ चाल से चलती थी, उसके स्तन छोटे और कठोर थे, जैसे कुआँरियों के होते हैं, कमर पतली थी, और सभी छोकरे उसकी ओर देखते और उससे बात-चीत करते, यह भूल जाते कि वह विवाहिता हो चुकी है और किसी के लिए अपने आइवन को नहीं छोड़ सकती। वे उसके दाँतों की चमक देखने, उसकी हँसी का प्रसन्न स्वर सुनने, उसकी श्यामल पंखड़ियों की एक हँसती झलक भर पाने के इच्छुक रहते थे।

उसके हृदय को पीसता हुआ कठिन दुःस्वप्न का एक आधा घण्टा इन सबको बदल देने के लिए काफ़ी था। इस वक्त तक कोई नहीं जानता था, इस वक्त तक बाहर से पता नहीं चलता था। लेकिन वह दिन आयेगा जब उस अभागिनी का संकट सब पर प्रकट हो जायेगा, मानो इतना काफ़ी नहीं था कि उसके दामन पर अमिट कलंक का दाग़ लग चुका था। उतना ही काफ़ी नहीं था। उसे अपने अन्दर जर्मन को लिये फिरना था। पूरी यातना के साथ उस जर्मन को जनना था। कौन उसकी सहायता करेगा, कौन उसकी मुसीबत के वक्त उसके पास रहना चाहेगा? कौन स्त्री होगी जो अपने हाथ एक भेड़िये के पिल्ले, लाल बालोंवाले एक ख़ूनी के पिल्ले के स्पर्श से अपवित्र करना चाहेगी? ओल्गा मृत्यु के डर से रो रही थी, लेकिन स्वयं उसके लिए, उसे विश्वास था, मौत नहीं आयेगी। वह नहीं जानती थी कैसे उनकी जान बचेगी। यह तो उसे कभी सम्भव ही नहीं लगता था कि कोई उस छोकरे की लाश वापिस करने आयेगा या उन लोगों को लाकर हाज़िर करेगा जो जर्मनों के हाथ से उसकी लाश छीन ले गये थे। और यह तो ख़ैर निश्चय ही था कि जर्मनों को अनाज कोई देनेवाला नहीं। वह यह नहीं जानती थी कि यह कैसे और क्यों सम्भव होगा, मगर उसे दिल में विश्वास था कि वह मरेगी नहीं, कि वे उसकी जान नहीं लेंगे। और अगर उसकी जान नहीं लेंगे तो बाकी सब लोग भी ज़िन्दों के साथ रहेंगे।

पहले तो चेचोरिखा ओल्गा के हाथ पर चुपचाप हाथ फेरती रही। लेकिन ओल्गा का बिसूरना बन्द ही नहीं हुआ और आख़िर उसके सब्र की हद हो गई।

वाली दुर्गन्ध के कारण दाँत-मुँह भींचकर उसने जर्मनों के मैले को साफ़ किया था और अच्छी तरह से घर का कोना-कोना देखा था कि कहीं वे लोग उसको भी तो सड़ा नहीं गये हैं। उस समय उसने यह केवल उनकी शरारत समझी थी, यानी कि वे उस मकान को गन्दा कर देते थे जो उनकी नज़र में नहीं चढ़ता था और फिर जिसे वे छोड़कर चले जाते थे। लेकिन जब गाँव में रहते उन्हें कुछ समय हो गया था, तो उसने देखा कि वे सभी जगह यही करतूत करते हैं, उनके लिए इसमें कोई अन्तर नहीं पड़ता था।

माल्युचिखा के घर उसके बच्चों का जी कैसे लग रहा होगा ? साशा के साथ कहीं ओस्का लड़ने न लगे ; वह उससे छोटा और कमज़ोर था और इतना दंगई कि हर वक्त परेशान ही किये रखता था। हमेशा वह पिटकर ही आता रहता, सारे जिस्म पर चोटें लिये हुए, हमेशा अपने से बड़े लड़कों से लड़ाई मोल लेना उसका काम था। सोन्या को सँभालना उसकी अपेक्षा आसान था, उम्र के लिहाज़ से वह चपल थी। लेकिन, वे और दोनों, ओस्का और नीना...माल्युचिखा आख़िर कैसे बच्चों के इस जमघट को सँभालेगी ? उसके ख़ुद ही अपने दो हैं। मुसीबत के इन कठिन दिनों में कैसे आख़िर वह इन सबों को खिलायेगी ?

दीवार के किनारे कोने बैठे-बैठे येवडोकिम ने एक आह भरकर कहा :

'ज़रा ग्रोखाच को तो देखो, उधर सो रहा है...'

'और तुम, दादा, तुम्हें सोने की इच्छा नहीं होती ?' चेचोरिखा ने उन तीन गहरे रंग के बालोंवाले मुंडियों की याद को मन से दूर हटाने का प्रयास करते हुए, पूछा।

'मैं अब ज़्यादा सोने का आदी नहीं रहा। मुद्दत हो गई जब सोने को जी किया करता था...दो घंटे, या तीन, बस, उसके बाद मैं बिलकुल आँख नहीं झपक सकता चाहे जान हार जाऊँ। दिन कितना लंबा होता है...'

'यहाँ आये हमें बहुत समय हो गया है क्या', ओल्गा ने सहसा पूछा।

'कौन जाने ? समय कटना भारी हो जाता है जब इस तरह बैठना पड़ता है।...शाम हो ही गई है, तुम देख सकती हो ; दूसरे कमरे में एक लैंप जल रहा है, इससे समझता हूँ कि शाम हो गई है...'

'शाम ही है अभी तक', निराशा से ओल्गा ने एक आह भरी, 'और मुझे ऐसा लगता है कि मालूम नहीं कितनी देर अब तक हो गई है...'

'बस! बस! अपने दिल को मज़बूत कर, रे लड़की, कौन जानता है हमें यहाँ अभी कब तक रहना पड़े...'

'वह जवान है। जवान लोग हमेशा जल्दी में रहते हैं', येवडोकिम ने एक आह भरकर कहा।

चेचोरिखा अँधेरे में उसकी ओर मुड़ी। उसकी आँखें अब तक अंधकार की अभ्यस्त हो चुकी थीं, और द्वार के नीचे तंग रास्ते से थोड़ी-सी रोशनी कमरे में आ रही थी। बूढ़े की सफ़ेद दाढ़ी दीवार के अँधेरे में धुँधली-धुँधली दिखाई दे रही थी।

'फिर भी, जल्दी क्या है! हमें जल्दी करके अभी कहीं नहीं जाना है, दादा।... जब तक हम यहाँ बैठे हैं यह समय हमारा है; फिर इसके बाद जो कुछ आता है, उसे ख़ैर फिर देख लेंगे...'

'और अगर हमारे अपने सैनिक आ गये?' कुछ साहस-सा करके ओल्गा बीच में बोल उठी। वह यह सोच ही नहीं सकती थी कि कोई आशा नहीं रह गई है, कि इस कबाड़-कोठरी के द्वार मौत के बाद ही खुलेंगे।

'मत भूल जाओ कि जर्मनों ने तीन ही दिन का अवकाश हमें दिया है।'

'लेकिन इन तीन ही दिनों के अंदर?'

'ऐसी बर्फ़ीली आँधी में? यह ऐसा आसान नहीं है। वे कैसे इसे पार करेंगे? मशीनगनों को और तोपों को खींचकर लाना? ऐसा भीषण बर्फ़ीला तूफ़ान उठा हुआ है कि इसमें आदमी को अपनी नाक तक तो सुझाई नहीं पड़ेगी और खाई-खड्ड में तूफ़ान बर्फ़ से उन्हें पाट देगा...'

चेचोरिखा शान्त स्वर में बोल रही थी, पर तुरन्त ही उसने महसूस किया कि उसका मन स्वयं उसकी इन बातों पर विश्वास नहीं कर रहा है।

बर्फ़ तो ज़रूर था वहाँ, मगर फिर भी वे प्रतीक्षा कर रहे थे, जमकर, दृढ़ विश्वास के साथ प्रतीक्षा कर रहे थे। आज की ही सुबह तो वह कल्पना कर रही थी कि वे आ रहे हैं, कि संभवतः वे लाश्चेन तक पहुँच भी गये हैं, कि शायद ऐन इसी समय वे खाई-खाले पार कर रहे हैं; या पहाड़ी रास्तों

से होकर आ रहे हैं—तो फिर क्यों न इसी समय वे आ जाँय ? बर्फ़ीला तूफ़ान तो कल भी था और उससे पिछले तीनों दिन भी—उनके लिए तूफ़ान क्या था ! वे पगडंडियों और तंग घाटियों से ही इस स्थान को पहचान लेंगे, आख़िर तो यह उन्हीं का अपना देश था। वे लोग तूफ़ानी आँधियों और बर्फ़ बारियों के आदी थे। वे कोई पहली ही बार तो इनका सामना नहीं कर रहे थे।...

हाँ, ठीक कहती थी ओल्गा। वे आ भी सकते हैं। इन्हीं तीन दिनों में से, जो मृत्यु की अवधि से पहले उनके लिए रह गये थे, वे किसी भी एक दिन आ सकते हैं। दरवाज़ा एकाएक खुल पड़ेगा, गोलियाँ चलेंगी, और वे उस अँधेरी कबाड़ कोठरी से निकलकर बाहर चौड़े खुले मैदान से जायेंगे, अपने सैनिकों को देखेंगे और फिर जल्दी-जल्दी घर जायेंगे, जल्दी-जल्दी माल्युक के यहाँ से बच्चों को लेने जायेंगे.....

शायद आ ही रहे हों वे लोग। अन्धकार के पर्दे में, रात में छिपकर, चक्कर खाते उस बर्फ़ीले तूफ़ान की आड़ लेकर जिसमें और सब आवाज़ें दब जाती थीं, वे दबे पाँव चुपचाप गाँव की तरफ़ आ रहे थे, और आकर एकाएक हमला करेंगे, बिजली की तरह सारे जर्मन दल को मारकर, उसका नाश करके, संक्रामक जंतुओं की तरह उन्हें पाँव-तले कुचल डालेंगे, जो गाँव में पड़े-पड़े मोटे हो गये थे और अब उसका रक्त-शोषण कर रहे थे।

'और हो सकता है, वे लोग आयें,' कुछ ऊँची आवाज़ में वह कह उठी, 'हो सकता है, उन्हें देखने को हम लोग ज़िंदा रहें।'

'ऐसा ख़याल है तुम्हारा, क्या तुम्हारा खयाल है कि वे लोग आ जायेंगे ?' ओल्गा ने एक साँस में पूछा।

'हो सकता है वे आ ही जायँ,' दबी ज़बान से येवडोकिम ने कहा, 'ओख़ अब तक तो आ जाना चाहिए था उन्हें, यही तो आने का वक्त है !'

'हमारा तो पता मिल ही जायेगा उन्हें, हर एक को मालूम है कि उन लोगों ने हमें कहाँ बन्द कर रखा है,' ओल्गा ने उत्तेजित स्वर में धीरे से कहा। उस क्षण उसके ख़याल में सबसे ज़रूरी बात यह थी कि लाल सैनिकों की किर्चों के आगे से जब जर्मन गाँव छोड़-छोड़कर बिखरे हुए बर्फ़ीले बवंडर में भाग रहे हों, तो उस समय स्वयं उनका पता सैनिकों को मालूम हो जाना

चाहिए, ताकि तुरंत ही हवालात के दरवाज़े खुल जायँ और एक क्षण भी अधिक वे वहाँ बैठे न रहें।

'उसकी चिंता तुम मत करो —उनको आने भर दो,' चेचोरिखा ने उसे आश्वस्त करते हुए कहा। 'तुम तो ऐसी बातें कर रही हो, मानो वे बस अब गाँव के पास आ ही गये हैं।'

'और सचमुच वे शायद आ ही गये हों?'

'शायद आ ही गए हों', विकल भाव से अपनी उँगलियाँ चटकाते हुए चेचोरिखा ने दुहराया।

मलाशा उस अंधकार में एक ही बिन्दु की ओर स्थिर दृष्टि से देखती रही। हाँ, ठीक ही था उनके लिए प्रतीक्षा करना, इस प्रकार बच जाने की आशाएँ वे कर सकते थे। लेकिन उसकी कोई सहायता नहीं कर सकता था, उसे कोई नहीं बचा सकता था। उनकी सेना लौटकर आयेगी—पर फिर क्या? वह उन्हें मिलने, उनका स्वागत करने, उनके हर्ष में भाग लेने न जा सकेगी। वह उन्हें एक प्याला पानी के लिये भी, या घर में दो क्षण के लिए बैठने को भी न कह सकेगी। वह क्या थी? एक जर्मन की अंक-शायिनी। वह अपने पेट में एक जर्मन को लिए हुए थी, उस पर युग-युग का शाप पड़ चुका था। उनकी फ़ौजें आयेंगी, गाँव में फिर जीवन की उमंग आयेगी, सड़कों और गलियों से लड़कियों के गीत लहराने लगेंगे, वे लाल सैनिकों को देखकर मुस्करायेंगी। सब घरों में प्रेमालाप शुरू हो जायगा, और कोई उसको बुरा न कहेगा—क्या वे अपने ही नौजवान नहीं होंगे? क्यों लड़कियाँ उनसे एक चुम्बन के लिए मान करें जब कि कोई नहीं जानता था कि यह या वह नौजवान अगले महीने या सप्ताह या कल तक भी जीवित रहेगा या नहीं? केवल उसी की ओर कोई एक नज़र भी नहीं देखेगा; हरेक उससे बचेगा। और अगर युद्ध समाप्त भी हो जाय और आइवन लौट आये, फिर भी वह कभी उसके पास नहीं आयेगा। सब उसे बता देंगे, वह घर से दूर ही रहेगा, और कभी अगर वह उसे सड़क में मिल भी गया तो उसके बराबर से एक अजनबी की तरह से निकल जायेगा। बल्कि हो सकता है कि घृणा से उसके मुँह पर थूक भी दे।

वह कोने में ओल्गा को फुसफुसाते सुन सकती थी। 'जितनी दूर मुझसे बैठ सकती थी, उतनी दूर जाकर बैठी।' उसने कटुता से मन में सोचा और वह यह भूल गई कि उसने पहले स्वयं और सबों के बैठ जाने की प्रतीक्षा की थी, तब वह सबों से दूर हटकर बैठी थी। हाँ, हाँ, ओल्गा प्रतीक्षा कर सकती थी, ओल्गा को मृत्यु से डरने का कारण था, कुछ तो था ही जिसके लिए ओल्गा ज़िन्दा रह रही थी। ओस्ताप् लड़ाई से वापिस आयेगा और तब वे दोनों भी और सबों की तरह जीवन बितायेंगे, काम में जुट जायेंगे, जैसे लड़ाई के पहले सब काम में तन्मय रहते थे और पति को संतान का मुख दिखायेगी। एक केवल वही, मलाशा ही, गाँव की सबसे लोकप्रिय लड़की, सबसे अच्छा काम करनेवाली, वैसी न हो सकेगी, जैसी वह इस लड़ाई से पहले थी।

वास्या के लिए फ़ेडोसिया का रोना भी धीरे-धीरे बन्द हो जायगा। दिन गुज़र जाएँगे, महीने हो जाएँगे, और वह अपने बेटे की याद शांत मन से करने लगेगी। आख़िर वही पहला या अंतिम व्यक्ति नहीं था जिसने अपने देश के लिए प्राण दिये दें। लेवोन्युक के माता-पिता भी उसे भूल जाएँगे, उनके दो बेटे और बेटियाँ और थीं। जब वे छोकरे लड़ाई से वापिस आएँगे तो घर भर जाएगा। जो घर जर्मनों ने मिटा दिये थे, फिर से उनकी नींव उठेगी, बाग़ों में जो पेड़ जर्मनों ने ईंधन के लिए निर्दयता से काट डाले थे, उनकी जगह नये पेड़ लगाये जाएँगे। ज़ख़्म भर जाएँगे और हर चीज़ जैसे पहले थी वैसी ही हो जायेगी। केवल उसी के लिए कोई आशा नहीं थी। उसके लिए कुछ भी दोबारा लौटकर नहीं आएगा। कुछ भूला नहीं जाएगा। हरेक के लिए कोई न कोई रास्ता खुला हुआ था, कुछ के लिए कठिन, औरों के लिए सुगम। केवल उसी के लिए कोई पथ नहीं था।

कभी जो सुख उसको मिलता था, वह इन्हीं बातों से कि वह गाँव की सबसे सुंदर लड़की थी, सामूहिक खेतों में वह सब लड़कियों से अच्छा काम करती थी, सब की दृष्टि उसी पर पड़ती थी, चाहे दर्जन भर लड़कियाँ और भी आस-पास क्यों न हों। जब वे गाते तो कानों में उसी का स्वर सब से साफ़ और शुद्ध सुनाई पड़ता था। किसी की ऐसी आँखें, ऐसी लटें, ऐसे धूप-से गेहुँए गुलाबी गाल, ऐसी पतली-पतली महराबदार भँवें नहीं थीं। और वह

अपने सौंदर्य में मगन, सुखी, सब के बीच अपना सिर ऊँचा करके चलती थी।

लेकिन इसी कारण से उसे बिपता और दुर्भाग्य ने घेर लिया था। इससे कहीं अच्छा होता अगर उसके भी झुर्रियाँ होतीं, सूखी-सूखी-सी खाल होती जैसी दादी मारफ़ा की थी। इससे कहीं अच्छा होता, अगर वह भी कुबड़ी होती, झुकी हुई उस्त्या की तरह, या मुहासों-भरी लाल बालोंवाली क्लावा की तरह कुरूप होती। वह उनकी तरह नहीं थी और यह उनकी नज़र लगाकर उसका अनिष्ट करने के लिए काफ़ी था।

थोड़ी-थोड़ी देर बाद बातें करने और चलने की आवाज़ें दरवाज़े से होकर आती रहती थीं। वे लोग, जर्मन, वहीं थे, वे ग्राम-सोवियत् की इमारत में अपनी अकड़ दिखा रहे थे। वे अपने को हाकिम महसूस करते थे। मलाशा ने अपनी मुट्ठियाँ भींच लीं। वे सिर्फ़ यहीं नहीं थे। वे कीफ़ में भी थे, जहाँ वह एक बार मेला देखने गई थी। वे कीफ़ की चौड़ी सड़कों में इधर से उधर, कीफ़ के सुनहरी गुंबदों के आसपास घूम-फिर रहे थे, अपने लंबे सैनिक बूट पहने हुए कीफ़ के पक्के रास्तों पर ज़ोर-ज़ोर से आवाज़ करते हुए चल रहे थे। वे ख़ारकोफ़ में थे, ख़ारकोफ़ के पक्के रास्तों को अपने जैकबूटों से रौंद रहे थे। वे युक्राइना की धरती पर अपने सैनिक जैकबूट पहने, अकड़ते हुए चल रहे थे। केवल उसी की, मलाशा की ही नहीं, बल्कि युक्राइना का सतीत्व भी अपहरण हो चुका था, वह भी अपमानित, गर्हित की जा चुकी थी, पाँव-तले रौंदी जा चुकी थी। नगर के नगर वीरान हो गये थे और गाँवों की राख हवाएँ उड़ाती फिरती थीं। मैदानों में लाशें बेदफ़नाई हुई पड़ी थीं, और मुर्दे अब भी फाँसी पर झूल रहे थे। पृथ्वी रक्त से भीगी हुई थी और आँसुओं से गीली।

लेकिन वह दिन आयेगा जब पुनः स्वाधीन देश पर सूर्य अपनी सुनहरी किरणें दूर तक बिछा देगा। नीपर एक बार फिर स्वतंत्र होकर लहराती हुई बहेगी; वोरस्क़ला, लोपान और स्पेल कल-कल नाद करती हुई तरंगित होंगी। उनकी उन्मत्त लहरें देश को धो देंगी, उसके तन का सब कलुष और मैल धोकर बहा देंगी और रक्त से सींची हुई धरती अनाज उगलेगी। बालियों से भरे हुए गेंहू के खेत असीम सागर के समान लहरायेगा। सूर्यमुखी फूलों के

खेत असली सोने की आभा झलकाएँगे, बागों में हालीहाक्स फिर फूलेंगे और बग़ीचों की क्यारियाँ टमाटरों के सुलगते हुए गेंदों से भर जाएँगी।

देश खिल उठेगा, धुल उठेगा, अपने शानदार ख़जानों से भर उठेगा।

लेकिन स्वयं मलाशा हमेशा के लिए वही रहेगी जो वह अब हो गई थी, एक निष्कासित अभागिन, जिसके लिए सब राहें बन्द हो गई थीं। सीने को छीलकर उठती हुई एक कराह को वह दबा न सकी।

'तुम सो नहीं रही हो, मलाशा ?' चेचोरिखा ने पूछा।

मलाशा चौंक उठी। उसे उसका स्वर बनावटी-सा लगा, जिससे उसके तन-बदन में आग लग गई। अगर बोलना नहीं चाहते तो मत बोलो। मगर बनते किस लिए हो ?

'मैं नहीं सो रही हूँ। तुम्हें इससे क्या ?' तड़ाक से उसने जवाब दिया।

'मैं तो पूछ भर रही थी।'

'पूछने की कोई बात नहीं है। तुम मेरे बारे में उत्सुक नहीं होओ तो अच्छा है।'

'नाराज़ क्यों हो रही हो ? हम सभी तो एक नाव में सवार हैं।'

मलाशा हँसी, एक कटु और रूखी हँसी।

'सभी एक नाव में ? नहीं, मैं एक अलग नाव में हूँ।'

'वह तो दुर्भाग्य की बात थी...'

'बहुत तुम जानती हो दुर्भाग्यों के बारे में !' उसने अपने अंदर एक अस्पष्ट द्वेष-भावना उठती महसूस की, और वह अपना रोष किसी पर उतारना चाहती थी। 'तुम जब तक कुशल से हो, कम से कम वहाँ बैठी हुई अपनी ज़बान तो बन्द रख सकती हो। सुनो ग्रोखाच खुर्राटे ले रहा है।'

'उससे मत बोलो...वह तुनुकमिज़ाज है,' ओल्गा ने चेचोरिखा की बाँह छूते हुए चुपके से कहा।

मलाशा ने सुन लिया।

'ठीक तो है, क्यों बोलो तुम मुझसे ? मैं—मैं तो तुनुकमिजाज़ हूँ, यानी सभी जानते हैं इसे। यहाँ तुम्हीं हो मधुर स्वभाव की, और क्या !'

स्त्रियों ने अपनी बातें बन्द कर दीं। मलाशा ज़ोर-ज़ोर से साँस ले रही थी। अंधकार में एकटक आँखें गड़ाये हुए देख रही थी।

फ़सल की कटाई के समय लोगों ने उसके बारे में अख़बारों में क्या लिखा था, उसे याद आ गया। आह, तब उसमें तुनुमिज़ाजी नहीं थी। सब लड़कियों और स्त्रियों ने उसे गोदी में उठा लिया था। उसकी तस्वीर निकली थी अख़बार में। मलाशा उस फ़ोटो में ठीक-ठीक नहीं आई थी; मुस्कराते हुए उसके दाँतों की आभा कुछ उजली हो गई थी, जब कि उसका चेहरा छाया में अस्पष्ट हो गया था। पर फिर भी अख़बार में उसकी तस्वीर निकल चुकी थी और एक आदर्श सामूहिक-कृषक-बाला के रूप में उसके, मलाशा के बारे में एक परिचयात्मक लेख भी था...और अब वही मलान्या विश्नेवा, आदर्श सामूहिक कृषिका, पिस्सुओं से भरे हुए जर्मन का एक पिल्ला अपने पेट में धरे हुए थी।

बाहर झंझा चीत्कार कर रही थी। मोटी-मोटी दीवारों के अंदर से, उन भारी-भारी लट्ठों के बीच से, जिनसे यह घर बना था, वह स्वर सुना जा सकता था। ग्रोखाच सहसा जाग उठा और ज़ोर से एक जमुहाई ली।

'सचमुच तुम बहुत गहरी नींद सोते हो,' बूढ़े येवडोकिम ने ईर्ष्या से कहा।

'क्यों न सोएँ? एक झपकी नींद लेने से तो कुछ दुखता नहीं। कौन कह सकता है आगे क्या हो।'

'क्या हो सकता है? हम जानते हैं जो कुछ होनेवाला है।'

'शायद हमारे सैनिक आयें,' ओल्गा जल्दी से बोल उठी। वह चाहती थी कि ग्रोखाच उसका अनुमोदन करे कि वे आ रहे हैं, कि वे आ सकते हैं।

'बेशक, वे आ सकते हैं......लेकिन ऐन इन्हीं तीन दिनों में ऐसा हो जाय......'

'या हमारे छापेमार ही आ जायँ...'

'इस तरह अभी से सोचना तो बहुत बड़ी उम्मीदें बाँधना है,' उस किसान बन्दे ने आपत्ति करते हुए कहा। 'कैसे आ सकते हैं वे यहाँ? वे बहुत दूर पर जंगलों में हैं और वहीं वे लोग फँसकर रह गये हैं। ऐसी बर्फ़ में तो वे यहाँ आने की सोच भी नहीं सकते। उनका पीछा होगा और वे सब मारे जायँगे।

गर्मियों की दूसरी बात है। गर्मियों के मौसम में तो तुम जहाँ चाहे जा सकते हो, हरेक झाड़ी तुम्हारी रक्षा करेगी, तुम्हें छिपा लेगी। लेकिन ऐसी मौसम में तो तुम खुले मैदानों में नहीं निकल सकते।'

'और फ़ौज ?'

'फ़ौज दूसरी चीज़ है। फ़ौज लड़ती हुई अपना रास्ता बना सकती है।'

ओल्गा ने एक आह की।

'लोग कहते हैं कि ऐसी ही रातों को मौत बाहर घूमती है' येवडोकिम बोला।

ओल्गा को ठंड की एक झुरझुरी-सी अपनी कमर के बीच में लहरती महसूस हुई। उस कबाड़-घर में अँधेरा था, और भय लगता था। इस बूढ़े को क्यों ऐसी बातों की चर्चा करना अच्छा लगता है ?

'सच तो है जो लोग कहते हैं,' चेचोरिखा ने उदास स्वर में समर्थन किया। 'वह हमारे देश के ऊपर मँडला रही है...'

सब मौन हो गये, मानो मोटी दीवारों के पीछे से वे मृत्यु के पदचाप सुन रहे थे, मानो सड़क से मृत्यु गुज़र रही थी और वे लोग उसे देख रहे थे।

'दो मौतें हैं आजकल' बूढ़े ने कहा।

'कैसे, दो मौतें ?'

'साफ, दो हैं...एक जर्मन मौत है जो आकर हम लोगों के प्राण लेती है। दूसरी वह मौत है जो जर्मनों के लिए इन्तज़ार कर रही है।'

चेचोरिखा के साथ ओल्गा और भी लगकर बैठ गई।

'तुम्हें ऐसी-ऐसी बातों की चर्चा नहीं करनी चाहिए, दादा......भयानक लगता है।'

'भयानक बातों से डरो नहीं तुम लोग' ग्रोखाच ने सख्ती से कहा, 'दुनिया भयानक है आजकल और आम जनता भी भयानक है...क्या तुम्हें चाहिए—बस, यही तुम्हें मालूम होना चाहिए और किसी बात से डरना नहीं चाहिए। एक बार वे तुम्हारे अंदर डर बैठा भर लें, फिर जो चाहें वे तुम्हारे साथ कर सकते हैं।'

'कौन ?'

'कौन? यही जर्मन लोग. यही तो ख़ास उद्देश्य है इनका, जनता के दिल में डर पैदा करना। एक बार जहाँ उनसे डरे कि तुम गये। लेकिन अगर तुम अपने आपको भयभीत नहीं होने देते, तो जर्मन तुम्हारा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते।'

'वास्का उनसे नहीं डरता था, फिर भी उन्होंने उसे गोली से उड़ा दिया और पाश्चुक...'

'क्या मैं कह रहा हूँ कि वे गोली से नहीं उड़ायेंगे? इसी काम के लिए तो उनके हाथों में रायफ़ल हैं—जिससे वे गोली-सा उड़ायें—और वे लोग जान ज़रूर लेते हैं, क्योंकि वे जर्मन हैं। मैं उसका ज़िक्र नहीं कर रहा था, शक्ति इस बात में नहीं है...'

'तब किस बात में है?'

'तुम ख़ुद नहीं जानतीं?'

उसने उत्तर नहीं दिया, वह नहीं जानती थी क्या कहे।

'शक्ति होती है अपनी जगह पर डटे रहने में, हार न मानने में। शक्ति होती है एकदक मौन रहने में, जब कि तुम्हें एकदम मौन रहना ही है, ताकि तुम्हारे अन्दर की आवाज़ भी वे लोग न पा सकें। सबसे ज़रूरी बात है इस बात को याद रखना कि इस सब का एक दिन अन्त होगा, कि एक भी उन लोगों में से जीता बचकर यहाँ से नहीं जा सकेगा। और अगर वे गोलियाँ चलाते ही हैं...एह! तुम अभी बहुत छोटी हो...कितने लोग मारे गये थे पिछली लड़ाई में और गृह-युद्ध से...और देखो सन् १८ में जर्मनों ने हमारे साथ क्या किया? फिर उसका नतीजा क्या निकला! उनका कोई नाम-निशान तक कहीं नहीं रह गया, लेकिन हम लोग बाकी रहें, यह धरती बाक़ी रही और इस धरती पर बसनेवाली जनता...दूसरे शब्दों में, सब कुछ बाक़ी रहा।'

'ओख़, लेकिन अब तो वे लोग सन् १८ से भी बुरी तरह लोगों को मारते चले जा रहे हैं, बस मारते ही चले जा रहे हैं।'

'ज़रूर पहले से बुरी हालत है। मगर यही है कि वे हम सबको ख़त्म नहीं कर सकते। कोई न कोई रह जायगा नये सिरे से नींव उठाने के लिए।

ज़रा-सा इंतज़ार करो; अगर हम लोग ज़िन्दा रहते हैं तो हम लोग देखेंगे, अगर हम लोग नहीं रहते, तो दूसरे लोग देखेंगे कि अन्त कैसा होता है। देश लड़ाई के पहले से कहीं आगे तरक्की कर जायेगा, फलता-फूलता हुआ और शान से भरपूर...'

'फिर भी मैं यह सब ख़ुद देखना चाहूँगी...' ओल्गा ने उच्छ्वास छोड़ी।

'कहता तो हूँ,—क्यों नहीं! कै साल की हो तुम?'

'उन्नीस।'

'उन्नीस...कितना अर्सा हुआ जब हम उन्नीस साल के थे, दादा येवडोकिम?'

'बस, रे, बस!' येवडोकिम ने खीझकर ज़ोर से कहा, 'मेरी दाढ़ी तब पक चुकी थी जब तू मेज़ पर चढ़ भी नहीं पाता था...'

'वह तो जो है सो है। लेकिन इसके मुकाबले तो मैं एक पुराना ही आदमी ठहरा। कुदरती बात है यह, तू अपनी आँखों देखना चाहती है, लड़की...उन्नीस साल, ओह हो! दादा और मैं दोनों ही तुझसे बड़े हैं, और फिर हम भी यह देखने के लिए ज़िन्दा रहना चाहते हैं...'

'बस यही देखना चाहती हूँ कि लड़ाई के बाद कैसा होगा' हसरत भरे स्वर में ओल्गा ने कहा।

ग्रोखाच एकाएक उछलकर खड़ा हो गया।

'नहीं, सिर्फ़ यही नहीं है जो मैं देखना चाहता हूँ! मैं आख़िरी जर्मन की मौत यहीं अपने गाँव में देखना चाहता हूँ! मैं आख़िरी जर्मन को कीफ़ में फाँसी के तख़्ते से झूलता देखना चाहता हूँ। जहाँ से नीपर नदी दिखाई देती है उस पहाड़ी पर फाँसी का तख़्ता खड़ा करके, वहाँ मैं आख़िरी जर्मन को झूलता हुआ देखना चाहता हूँ। और फिर जो लोग उधर, घर पर बैठे हमारी गर्दन में डालने के लिए फंदे तैयार कर रहे हैं, उनको मैं चाहता हूँ कि यहाँ लाया जाय। जो गाँव जला डाले गये हैं और जो नगर धूल में मिला दिये गये हैं, उनकी फिर से नींव उठाते हुए, ईंट पर ईंट जमाते हुए, मैं उन्हें देखना चाहता हूँ। तुम्हें याद है अख़बारों ने क्या लिखा था? ईंट पर ईंट!'

'उनकी शक्लें फिर यहाँ देखने से तो अच्छा है कि यह सब हम अपने आप ही करें,' चेचोरिखा बोल उठी।

येवडोकिम ने एक आह भरी :

'हमारे देश के लोग ज़माने भर से अधिक उदार हैं, ज़माने भर से बढ़कर नर्मदिल है...आज उन्हें ग़ुस्सा आ रहा है तो कल वे उसके बारे में सब कुछ भूल जाएँगे। ..हमारे देश के लोग जानते ही नहीं कि दिल में किसी के लिए द्वेष रखना कैसा होता है।'

'चिन्ता मत करो, दादा, वे काफ़ी भलेमानुस हो सकते हैं, लेकिन जब कलेजे तक चोट पहुँच जाती है, तब तुम देखो उनके तेवर! और वहाँ तक पहुँच चुकी है यह चोट...कैसे भूल सकते हैं वे? यह एक ऐसी बात है जिसे लोग मरते दम तक भी कभी नहीं भूलेंगे! कभी नहीं!'

कोने में बैठी हुई मलाशा उनकी बातें सुन रही थी। ग्रोखाच के शब्दों में बहुत कुछ तो उसी के विचारों की प्रतिध्वनि के समान था। हाँ, आख़िरी जर्मन को फाँसी से लटकते हुए देखना, उन्हें इतना श्रम करते हुए देखना कि उनके पसीने की नदियाँ बहने लगें...लेकिन उसे कोई सहायता नहीं मिलेगी। उनमें हरेक अपना बदला ले सकता था और अपना कलेजा ठंडा कर सकता था; लेकिन उसके जी को चैन कभी नहीं पड़ सकती थी। उसकी स्मृति का काँटा हमेशा खटकता रहेगा, और कोई भी ख़ून, कोई भी बदला, कोई भी समय, उस काँटे को निकालकर उसके स्मृति-पटल को धोकर उसका चित्त शांत नहीं कर सकता था।

ग्रोखाच के आख़िरी शब्द तो हवा में स्थिर टँगे हुए से लगे, मानो वे छत की काली शहतीरों पर आग के अक्षरों में सुलगा दिये गये हों।

'यह एक ऐसी बात है जिसे लोग मरते दम तक भी कभी नहीं भूलेंगे!'

और मलाशा के मुख से भी प्रतिध्वनि निकली :

'कभी नहीं!'

'मुझे प्यास लगी है', ओल्गा ने धीरे से कहा।

'इसके बारे में सोचो ही मत', ग्रोखाच ने कहा। 'वे लोग हमें ज़रा भी पानी नहीं देंगे। तुम्हें तीन दिन पानी के बग़ैर बिताने पड़ेंगे! यहाँ गर्म नहीं है,

और ख़ाली बैठे रहकर और कुछ न करते हुए तुम इसे काट ले जाओगी! बस इसके बारे में सोचना ही मत, नहीं तो तुम्हें पानी पीने की इच्छा होगी।'

'ओह...'

'तुझे अपने ऊपर शर्म आनी चाहिए, लड़की;' चेचोरिखा ने बीच में टोका। 'झींख रही है इस तरह...क्या तू सोचती है कि तू ही है जो ऐसी परेशानी में है? गाँव में कौन है जो इत्मीनान से है?'

'मगर हम लोग तो ज़मानती हैं। उन्होंने हमें तीन दिन के अंदर गोली से उड़ा देने का वचन लिया है। तो, फ़िर? तूने सुना नहीं अपने कानों से? हुक्म लगा है अनाज जमा करने के लिए, हमें धमकी दी गोली से उड़ा देने की। पर क्या तेरा ख़याल है कि उन्हें कोई कुछ भी देगा? हरेक के सिर पर मौत नाच रही है आजकल...'

मौन। ओल्गा ध्यान से सुनने लगी, जैसे मानो वह गाँव के बीच घूमती हुई मृत्यु का पद-चाप सुनने का प्रयास कर रही हो।

देखने से ऐसा मालूम होता था कि चीख़ती हुई आँधी और चक्कर खाते हुए बर्फ़ीले अंधड़ में गाँव शांति के साथ पड़ा सो रहा है। सब घर बर्फ़ में आधे दबे हुए थे, मानो वे पृथ्वी से लग कर, दुबक कर बैठे हों। ओलेना की चीखें आँधी की चीखों में खो जाती थीं। प्रकटतः उसने अभी तक बच्चा नहीं जना था। लेकिन इन लंबी चीखों के अलावा और कोई आवाज़ कहीं सुनाई नहीं पड़ती थी। सारा गाँव गहरी निद्रा में पड़ा जान पड़ता था।

लेकिन लोग घरों के अन्दर सो नहीं रहे थे। येवडोकिम जो कुछ कहता रहा था, उसे प्रत्येक जन सुन रहा था—कि मृत्यु गाँव में चक्कर लगा रही है। मृत्यु सड़क पर सफ़ेद बादलों का बवंडर उड़ा रही है, बगूलों पर सवार होकर घरों के ऊपर उड़ रही है, दीवारों के रंध्रों में से सफेद छाया सी रेंगकर निकल रही है, छप्परों को उखाड़ रही है, और सड़क के किनारे के उन थोड़े से नीबू के पेड़ों को जो जर्मन कुल्हाड़ियों से अब तक बचे रह गये थे, निर्दयता से झकझोर रही है, अपने शक्तिशाली पंखों से सम्पूर्ण प्रदेश को छाती हुई वह पृथ्वी पर अपने बर्फ़ीले वक्ष के बल ढह पड़ती है।

नीचे, नाले की ढाल में, मरे हुए लोग पड़े हुए थे। मृत्यु ने बर्फ़ को

समेटकर उनके शव और वस्त्र के अवशेष को ढक दिया। एक चीत्कार करते हुए उसने वास्या क्रावचुक के काले चेहरे को ढक दिया जिसे उसकी मा इतनी एहतियात से हर रोज़ साफ़ करती थी। उसने बर्फ़ का एक ताज़ा ढेर उन लाल सैनिकों के ऊपर जमा कर दिया, जिन्होंने एक मास पूर्व इस गाँव के पास अपने प्राण दिये थे। यहाँ, इस खाईं और नाले में उसका साम्राज्य था; यहीं शवों का ढेर था, जिसे बर्फ़ और पाले ने पत्थर कर दिया था।

मृत्यु उस लेवान्युक के लटकते हुए शव को हिला और झुला रही थी, जिसने छापेमारों के पास पहुँचने की कोशिश की थी। यह शरीर भी काला था और पत्थर हो चुका था। रस्सी चर्र-चर्र करती थी। जब आँधी शव को ज्यादा ज़ोर से हिलाती थी, तो फाँसी से लटके उस लड़के की टाँगें, गड़े हुए लट्ठे से टकराकर, भद्दा से एक भारी अस्पष्ट आवाज़ करती थी।

घुमड़ती हुई पागलों की तरह हो-हो करती हुई, टपरी के दरवाज़ों को पीटे जा रही थी जहाँ पयाल के ऊपर ओलेना बच्चा जन रही थी।

मृत्यु अपनी घड़ी का इन्तज़ार कर रही थी, हँसी के ठहाके लगा रही थी, रूखी खिलखिलाहट लिये गाँव के ऊपर से गुज़र रही थी। लोग सुन रहे थे। वे अपने घरों में सो नहीं रहे थे। वे स्थिर अपने बिस्तरों में पड़े थे, उनकी आँखें छतों पर लगी हुई थीं। वे अंधकार में उसको सुन रहे थे, इस ऊँचे हो-हो स्वर को सुन रहे थे, सुन रहे थे जर्मन मृत्यु का स्वर। वह उभार ले रही थी, रह-रहकर ठहाके लगा रही थी, अपने पंजे पैने कर रही थी। उसे बहुत बड़ी फसल काटने की आशा थी। अब केवल खाईं में पाश्चुक के ही मारे जाने तक नहीं था, केवल एक जर्मन फंदे में लेवांन्युक के ही फाँसी लटकने तक नहीं था। जर्मन फंदा सबों के ऊपर लटक रहा था, रायफ़ल की काली नली का निशाना सबों के हृदय के ऊपर सधा हुआ था।

× × ×

उस कबाड़-घर में ये लोग उन्हीं बातों की चर्चा कर रहे थे, जो उन सबों के मन में थीं, जिन्होंने हुंकारते हुए अंधड़ और मौत की इस रात्रि में सबों की आँखों से नींद को भगा दिया था। दीर्घ मौन को पहले बूढ़े येवडोकिम ने ही तोड़ा।

'वे सबों को गोली से नहीं उड़ा सकते...कैसे उड़ा सकते हैं ? गाँव के गाँव को ? कोई उन्हें ज़रा-सा भी अनाज नहीं देगा...'

'तो उनको क्या ?' ओखाच रूखी हँसी हँसा। 'क्या पहली ही बार ऐसा हुआ है ? लेवांका में उन्होंने क्या किया ? साहदी में उन्होंने क्या किया ? और कोस्टिका में ?'

उन गाँवों की प्रेत-छायाएँ जो अस्तित्वहीन हो चुके थे उनकी आँखों के आगे खड़ी हो गईं। भूमिसात् लेवांका—जहाँ चारों दिशाओं से जर्मनों ने गाँव में आग लगा दी थी, किसान जब लपटों से बचकर भागते थे, उन्हें गोली से मार देते थे, माँओं की आँखों के सामने उनके बच्चों को पकड़-पकड़-कर धू-धू जलती उस होलिकाग्नि में झोंक देते थे, और यह सब इसलिए हुआ था कि किसी कोने से एक जर्मन सैनिक पर किसी ने गोली चलाई थी। साहदी का भूतावासा—जहाँ डेढ़ सौ आदमियों की सारी आबादी को उस खड में हँका दिया गया था, जिसमें से पजायों के लिए मिट्टी खोदी जाती थी और वहीं उन्हें दस्ती बमों से उड़ा दिया था। कॉस्टिका जहाँ उन्होंने सब पुरुषों को मरवा डाला था और नंगी स्त्रियों और बच्चों को चालीस डिग्री के ठिठुरते पाले में खदेड़कर निकाल दिया था, जिसके फल-स्वरूप उस दूर पड़ोसी गाँव के रास्ते में ही, जहाँ वे सहायता के लिए जा रहे थे, उनका अंत हो गया था।

'साहदी; लेवांका, कॉस्टिका...सब हमारे ही ज़िले में तो हैं। और दूसरों का क्या हुआ ? कीफ़ में, ओडेसा में और दूसरे शहरों में, उन्होंने क्या किया ? हमारे देहात के छोटे-छोटे क़स्बों और गाँवों में से क्या रह गया है ? और सन्' १८ ? एख़्, दादा, कोई सोचेगा यह पहली ही बार तुमने ऐसी बातें सुनी या देखी हैं...'

ओल्गा ने अपनी आँखें चुपचाप हाथों से ढाँप लीं। अभी ही तो उसे ऐसा लग रहा था, मानो सब कुछ ठीक ही होगा, शीघ्र ही वह गोलियाँ चलने की आवाज़ सुनेगी, जिसके बाद सुपरिचित 'हुर्रा !' के नारे और बंदीगृह के द्वार एकाएक खुल जायँगे।...स्वाधीनता, जीवन ! और अब उनकी सारी चर्चा का विषय था मृत्यु, मृत्यु ; मानो मृत्यु का आना अवश्यम्भावी है, वह

आये बिना नहीं रह सकती। जिसकी चर्चा वे लोग इतनी शांतिपूर्वक कर रहे थे, मानो वह एक बहुत मामूली-सी बात हो। उससे उसका हृदय आतंकित हो उठा। 'इन लोगों के लिए सब ठीक है,' उसने कटुता से सोचा। येवडो-किम अब जितने भी साल हो चुके हों अपने, बिता ही चुका है। अस्सी का लोग बताते हैं, वह है; इस उम्र पर आकर मरना आसान है... ग्रोखाच... ग्रोखाच सन् १८ की लड़ाई में था, उसकी बड़ी-बड़ी लड़कियां हैं, और एक बीवी, जो कुत्ते की तरह गुर्राती रहती है, क्या परवाह है उसे? चेचोरिखा... ओल्गा कुछ रुकी, हिचकिचाई। 'ख़ैर, हाँ, चेचोरिखा के तीन बच्चे हैं, और पति लड़ाई में है। फिर भी उसने पति का मुँह तो देख लिया, तीन बच्चे तो हो गये उसके, मैंने जीवन में क्या देखा है? इन लोगों के लिए इस तरह की बातें करना आसान है...'

'फिर चाहे कुछ हो जाय, अनाज तो कोई उन्हें देगा नहीं' येवडोकिम बोला।

'बेशक, कोई नहीं देगा,' चेचोरिखा ने अनुमोदन करते हुए कहा।

और प्रत्येक व्यक्ति, सारा गाँव, नाले के पासवाले आख़िरी घर तक मन में यही बात दुहरा रहा था। अनाज बहुत सावधानी से, ज़मीन में बहुत गहरे गाड़ दिया गया था। वह दूर खेतों में खुदे हुए गड्ढों में पड़ा था, उस धरती के नीचे जो जमकर पत्थर हो गई थी। सुनहरी गेहूँ, रई और जौ, वह सब जो वह लाल सेना को नहीं दे पाये थे, वह सब जो उनके पिछले हेमंत की भरी-पूरी अपूर्व सुनहरी फ़सल से बच रहा था, ज़मीन के नीचे दबा पड़ा था। वह बर्फ़ की एक मोटी चादर के नीचे पड़ा था, बर्फ़ के तूदों के नीचे, आंधी ने जिसके ढेर लगा दिए थे। कोई उसे नहीं पा सकता था, कोई कल्पना भी नहीं कर सकता था वह कहाँ दबा पड़ा है। क्या जर्मन लोग कभी हज़ारों एकड़ ज़मीन दो-दो तीन-तीन गज़ की गहराई तक खोदने जाएंगे?

क्योंकि यह सुनहरी दाना जो ज़मीन में दबा पड़ा था, केवल दाना ही नहीं था कि जिससे गाँव की रोटी बनती थी। अपने जीवन के लिए वे उस रोटी का भी त्याग कर सकते थे। लेकिन धरती के नीचे पड़ा हुआ था—

जर्मनों की दृष्टि से ओझल—प्रांत का सुनहरी हृदय, गुप्त, सुरक्षित। वहाँ दबी हुई थी वह फ़सल जो इस भूमि की मिट्टी ने किसानों को दी थी, इस मिट्टी का फूल, इसका सुनहरा वज़नी फल। अन्नाहार देने का मतलब था जर्मन सेना को रोटी देना। अन्नाहार देने का मतलब था पिस्सू जर्मनों को खाना देना, उनके खाली पेटों को भरना, उनके सड़ते हुए ठिठुरकर जमते हुए शरीरों को गर्मी देना। अन्नाहार देने का मतलब होता था उन लोगों के हृदय पर आघात करना जो आँधी-पाले में निःस्वार्थ रूप से, प्राण-पन से, वीरता के साथ दुश्मन का मुक़ाबला कर रहे थे। अन्नाहार देने का मतलब होता था देश को शत्रु के हाथ बेच देना, अपने ही जन-लोक के साथ विश्वासघात करना, सारी दुनिया के सामने यह स्वीकार करना कि जर्मन युक्राइना-की सोना उगलनेवाली धरती का मालिक था। युक्राइना के गाँवों का अधिपति था। अन्नाहार देने का मतलब था अपने आपको और अपने आदमियों को शत्रु के हाथ में सौंप देना, उसका मतलब था उस आज्ञा का पालन न करना जो एक गाँव से दूसरे गाँव तक सब ओर हरेक के कान तक पहुँच चुकी थी; हरेक के दिल पर मुहर हो चुकी थीः शत्रु को रोटी की एक पपड़ी भी मत दो! दुश्मन के हाथों अन्नाहार देने का मतलब होता था उसको अपना देश हार देना, अपने आपको उसके हाथों बेच देना, उन लोगों से विश्वासघात करना जो अपने देश के लिए इस युद्ध में, गृह-युद्ध में, सन् १९१८ में, और उससे भी पहले, प्राण दे चुके थे—उन सभी लोगों के साथ विश्वासघात करना था, जो मानव-स्वाधीनता के लिए लड़ चुके थे, जिन्होंने अपने जीवन का रक्त देकर स्वाधीनता प्राप्त की थी।

और इस गाँव में जहाँ पहले के किसान-मजूरे आज अपनी ही भूमि पर, अपने ही उन्नतिशील सामूहिक खेतों में बसते थे, किसी भी हृदय में झिझक पैदा नहीं हुई। स्त्रियों ने हिसाब लगा लिया, योजना बना ली, कि जब वे स्वयं वहाँ नहीं रहेंगी, तब सब कैसे होगा।

अधेड़ उम्र की कोवाल्युक अँधेरे में अपने आठों बच्चों की साँस का चलना सुन रही थी, जो चारपाइयों में और अलाव के ऊपर दीवार के लंबे ख़ानों में बिछे हुए बिस्तरों पर सो रहे थे। एक शांत गृहस्थिन की तरह उसने

हिसाब लगाया कि लीना अब बड़ी हो ही गई है। वह बाक़ी और बच्चों को सँभाल लेगी, उनका सीना-धोना सब कर लेगी। जब उनके अपने सैनिक लौटकर आयेंगे, तो उन सबों को खिलाने के लिए ज़मीन के अंदर काफ़ी नाज होगा। तब तक वे लोग और सबों की तरह किसी प्रकार चलते रहेंगे।

अँधेरे में विशेन्कोवा अपने बच्चे के पालने पर झुक गई और मन ही मन सोचने लगी, कि किसकी गोदी में बच्चा है, कौन उसके नन्हें को दूध पिला लेगी। उसे पूर्ण विश्वास था कि कोई उसे मरने नहीं देगा, माँ कोई न कोई मिल ही जायगी जो अपनी छाती का दूध पिलाकर उसे पाल लेगी।

ग्रोखाचिखा अँधेरे में शांत मन से इस परिस्थिति पर विचार कर रही थी ; ग्रोखाच ज़मानत में क़ैद था, अस्तु शत्रुको अनाज न देने का ज़िम्मेदार कौन समझा जायगा; पति या वह ? उसने निश्चय कर लिया कि इसके लिए अब वही ज़िम्मेदार समझी जाएगी, लेकिन इससे वह चिंतित नहीं हुई। उसके कोई छोटे बच्चे नहीं थे, लड़कियाँ बड़ी हो गई थीं और घर की देख-भाल कर सकती थीं।

युवती वान्युक का हृदय दुःख से फटा जा रहा था, उसने सोचा कि अब वह फिर अपने पति को कभी न देख सकेगी। महीना भर हुआ उसका पत्र आया था, जिसमें उसने लिखा था कि वह ज़ख्मी होकर अस्पताल में पड़ा है, और वहाँ से फ़ारख़ती पाने पर सभवतः कुछ दिनों की छुट्टी लेकर घर आयेगा। एक महीना बीत गया था और जर्मन गाँव में घुस आये थे। जब उनकी अपनी फ़ौजें लौटेंगी, तब वह वहाँ नहीं होगी। वह दुखी और खिन्न थी, अपने लिए नहीं अपने पति के लिए। कोमल प्रकृति के असहाय-से उस आदमी के लिए अकेले सब निभाना कठिन हो जायगा।

लोग विचार में मग्न अँधेरे में पड़े हुए थे। हरेक के अपने विचार थे। हर व्यक्ति अपने परिवारवालों के बारे में सोच रहा था। अनाज के ही बारे में वे सोच रहे थे। उसकी सुनहरी धार बरसती हुई आती थी, सब कुछ अपने आगे से बहाती हुई, एक सजीव बाढ़, धरती का सोने-सा रक्त। जब अपने आदमी लौटकर आयेंगे, उन दिनों की प्रतीक्षा में वह जीवन पृथ्वी के नीचे जा रहा। लोग अपने-अपने बिस्तरों में पड़े थे, सब एक दूसरे से इतने भिन्न

कि आपस में ज़रा भी समानता नहीं ! लेकिन उस रात वे सब एक ही बात जानते थे, एक ही बात सोच रहे थे ; और सबने, इस बारे में परस्पर कोई बातचीत या विवाद लिये बिना ही, प्रत्येक व्यक्ति ने अपने दायित्व पर, दृढ़ और अमिट रूप से निश्चय कर लिया था कि अनाज धरती में ही दबा रहेगा ; जीवन से भी अधिक महत्त्वपूर्ण थी यह बात कि जर्मन पजे उन गड्ढों से उसे खोद न निकालें, जहाँ वह मूँद दिया गया था।

और जर्मन मौत गाँव के सर पर मँडला रही थी, झंझा-रोर में कड़-कड़ करती हुई, कराहती हुई मर्म को भेदती हुई। भयानक हल्ला मचाती हुई, हृदयहीना अपने बंदियों के ऊपर ठहाका मारती हुई। घरों में प्रत्येक व्यक्ति उसका स्वर सुन रहा था।

और जर्मन सैनिक जो उस रात खड़े पहरा दे रहे थे, अपनी चौकियों पर ठिठुरकर जमे जा रहे थे, सिहरकर बार-बार अपने चारों ओर देखते थे, बर्फ़ पर और अधिक आहिस्ता से क़दम रखने की कोशिश करते थे। वे भी सुन सकते थे मौत के स्वर को। मौत छिपती रहती, चुपके-चुपके आती, उनके बिलकुल पास से गुज़र जाती, अपनी मौन बर्फ़ीली साँस उनके चेहरों पर फूँकती हुई। वे महसूस कर रहे थे कि वह नाले में घात लगाये बैठी है, घरों के कोनों के पीछे छिपी हुई खड़ी है, छप्परों के ऊपर से कुछ खोजती हुई निःशब्द गति से फिर रही है। वह उनकी ओर हज़ारों सूनी वीरान आँखों से घूर रही है और होंठ मज़बूती से बंद किये हुए मौन रूप से उनका फ़ैसला कर रही है। बिना आवाज़ किये वह गाँव के बाड़ों के बराबर होकर गुज़र जाती, छोटे-छोटे झाड़ों के पास खड़ी हो जाती और कूओं में झाँकती। वह सब जगह थी और जर्मन सैनिक उसका निवास सब स्थानों में महसूस कर रहे थे। गाँव की सड़कों में मौत उनके बराबर से होकर निकल जाती, मकानों के पास, उनके संग खड़ी हो जाती, जब वे घर को लौटते, तब भी उनका साथ नहीं छोड़ती थी। और वही उनकी आँखों पर गहरी नींद की काली छाया तान देती थी। अपने शरीर पर वे उसकी ठंडी, सिहरा देनेवाली दृष्टि महसूस करते थे ; उसकी अदृश्य दृष्टि उनके अन्दर तक चुभ जाती थी और उसके अदृश्य मुख की साँस उनका ख़ून जमा देती थी। जब वह मौन, दया-

हीन युक्राइना की मौत अपनी हड्डही उँगलियों से बार-बार उनको गिनती थी तो उनकी हड्डियों की मज्जा तक भेद जाती थी।

५

हवा हूकें मार रही थी और चीख़ रही थी। वह टपरी हिल-हिल जाती थी, मानो किसी भी क्षण उखड़कर नाले में जा गिरेगी। शहतीर कड़-कड़ कर रहे थे और जब आँधी फूँस के टुकड़ों को कहीं-कहीं से खींचकर दूर उड़ा ले जाती थी, गाँव से भी पार खुले मैदानो में, बर्फ़ के खेतों में, जहाँ वे बर्फ़ीले बवंडर की धुंध में खो जाते थे, तो छाये हुए छप्परों में सर्राहट की आवाज़ बढ़ जाती थी।

ओलेना चीख़ रही थी। वह अपनी शक्ति भर चीख़ रही थी। उसका शरीर अत्यधिक पीड़ा से टुकड़े-टुकड़े हुआ जा रहा था। ये एक ज़च्चा की ही पीड़ाएँ नहीं थीं—रायफ़ल के कुन्दों की मारें, किर्चों की कोंचे, उस रात को सड़क पर लड़खड़ा-लड़खड़ाकर गिरने की पीड़ाएँ, जब सैनिक उसे दौड़ा रहे थे; भूख, प्यास और पाले की ठंड—इन सबको वह इस समय अनुभव कर रही थी। ये सभी यातनाएँ भेड़ियों के झुंड के समान उस पर आक्रमण कर रही थीं, उसे नोच रही थीं, अपने विषाक्त हिंस्र दाँतों से उसे चबाये डाल रही थीं। उसे लग रहा था जैसे उसके शरीर को फाड़कर टुकड़े-टुकड़े किये जा रहे थे, जैसे एक सजीव अग्नि-चिता पर वह पड़ी हो, जैसे हज़ारों विष में बुझे चाकू उसकी देह में घोंपे जा रहे हों।

ओलेना चीख़ रही थी। अब वह चीख़ सकती थी। वह एक शिशु को जन्म दे रही थी, और वह अब उस मौन को तोड़ सकती थी जिसने सहन-शक्ति की अंतिम सीमा तक उसकी आत्मा को अपने भार से दबा दिया था। जब जर्मनों ने उसको घर से घसीटकर बाहर निकाला था, उस क्षण से लेकर इस समय तक जब उसे मालूम हो गया कि अब वह सब बातों के बावजूद बच्चा ज़ान रही है, उसने मौन क़ायम रखा था। उसके बच्चे को न रायफ़ल के कुंदे की चोटें मार सकी थीं, न उसका बार-बार लड़खड़ाकर गिरना और न बर्फ़ और पाले की ठिरन। वह जीवित था और संसार में आने का इच्छुक

था, उसके ज़ख्मी बदन को निर्दयता से तोड़कर अपना रास्ता आप बनाता हुआ वह बलपूर्वक प्रकाश में आ जाना चाहता था।

उसकी चीखें पशु की-सी अमानव चीत्कारें थीं, और चीखने से उसे आराम मिलता था। उसमें उसकी मर्म-पीड़ा डूब जाती थी, ठंड मिट जाती और आँधी का वेग जो बाहर ऊँचे स्वर से विलाप कर रही थी, खो जाता था।

टपरी का द्वार चरमराया। उसने सिर भी नहीं घुमाया। प्रसव-पीड़ा अब जल्द-जल्द और अधिक तीव्र होकर उठने लगी थी और वह अपने यातना-व्यथित शरीर की माँग को पूरा करने के लिए जी भरकर हूकें मार रही थी।

सैनिक उसके कमरे के द्वार पर आकर रुका और चिल्लाकर उसे डाँटने को ही था कि उसने देखा वह बच्चा जन रही है। एक क्षण बाद दूसरा सिपाही भी आया। वे उसे देखते रहे, बेशर्मी से चुपके-चुपके हँसते रहे और आपस में फबतियाँ कसते रहे। लेकिन उसके लिए सब बराबर था। उसका पयाल पर नंगी पड़े रहना, अपरिचित मर्दों का बेहयाई से उसको देखना, उनका उसके बारे में ठट्ठा करना। एक बच्चे को वह जन्म दे रही थी, और यह बात उसे उस बाकी दुनिया से पृथक् कर देती थी जिसमें जर्मनों का शासन था—उनकी निर्लज्ज दृष्टि पर पर्दा-सा डाल देती थी, एक कवच की तरह उनके ज़लील ठट्ठे से उसकी रक्षा करती थी। वह बच्चा जन रही थी, और मालूम होता था कि उन लोगों ने तय कर लिया था कि बच्चे का जन्म हो जाने देंगे, क्योंकि वे दरवाज़े पर खड़े उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे, और अंदर नहीं आ रहे थे।

उसकी चीखें और बढ़ गईं। पड़ौसवालियाँ सुन-सुनकर सीनों पर हाथों से क्रास के चिह्न बनाती थीं ताकि सब कुशल से बीते और त्रस्त आँखों से अंधड़ को देख रही थीं। ओलेना कॉस्टयुक ही केवल थी जो बिना किसी की सहायता के एक ठंडे खाली बाड़े के अंदर बच्चा जन रही थी। वे लोग समझते थे कि वह मर भी चुकी होगी, कि पाले में वह कब की समाप्त हो चुकी होगी। मगर अभी वह बच्चा जन रही थी, और कोई उसके निकट नहीं था, कोई उसके सूखे पपड़ीले होंठों को तर करनेवाला, उसके सिर के

नीचे तकिया रखनेवाला, उसके साथ मित्रता का सलूक निभानेवाला, नहीं था। वह इस तरह एक बच्चा जन रही थी जैसे कि उसके पहले गाँव में किसी ने नहीं जना था, नंगी, पाले की घोर ठिरन में केवल एक टपरी के अंदर खाली मिट्टी के फ़र्श पर ज़ोर से अपने होंठ भींचे हुए, कानों को मूँदे, स्त्रियाँ अपने हाथों से क्रास के चिह्न बना रही थीं, ताकि सब कुशल-मंगल हो; लेकिन उत्सुकता उनकी भावनाओं पर विजयी होती थी और उन्हें विवश करती थी कि फिर उसका स्वर सुनें। क्या वह अबकी बार फिर चीखेगी? हाँ, वह फिर चीख़ रही है। कानों को बहरा कर देनेवाली, तेज़ चीखें फिर उठने लगती हैं—उस सताये हुए, टूटे हुए, यातनाओं से भरे हुए शरीर में से कैसे यह चीख़ें निकलती हैं!

आख़िरकार उसकी चीख़ों ने दहाड़ने का रूप ले लिया, और उसके बाद उसका स्वर बंद हो गया।

'वह बच्चा जन चुकी है', माल्युचिखा ने, जिसका घर सब से निकट था, धीरे से कहा और बेंच पर धम्म से बैठ गई।

'वह बच्चा जन चुकी है' नन्ही जीना ने दुहराया।

क्षण भर को ओलेना इस तरह पड़ी रही मानो संज्ञाशून्य हो गई है। और वहीं पड़ा था उसका बच्चा भी। हर तरह की परिस्थिति और व्यक्तियों के विरोध के बावजूद वह इस संसार में आ गया था, एक ऐसे बाप का बेटा, जो लड़ाई में पहले ही मर चुका था, ऐसी माँ का पुत्र, जिसकी मौत अब तक दस बार आ लेनी थी। वहीं पड़ा था वह—उसका पुत्र। एक नन्हा-सा, छोटा-सा, लाल-लाल जीव।

उसने उसे गोदी में उठा लिया। वहाँ कोई दाई नहीं थी, जो बातें ज़रूरी होती हैं, उन्हें करनेवाला कोई नहीं था, और उसने स्वयं एक कुतिया की तरह अपने दाँतों से बच्चे की नाल काट दी और एक लत्ते से उसको बाँध दिया जोकि पहले ही दिन उसकी शाल से फटकर रह गया था, जब वह हवालात में जिरह से पहले यहाँ बंद पड़ी थी। अपनी बर्फ़ से ठंडी हथेली से उसने बच्चे को पोंछा और रगड़ा और पानी की एक घड़िया, पानी

की कुछ बूँदों का वह स्वप्न देखने लगी, जिससे कम से कम उसका मुँह तो धुल जाता।

एक स्वस्थ शिशु के स्वस्थ स्वर में वह रो उठा। ओलेना अवाक् रह गई। वह पुत्र था। उसका पहला पुत्र, उसके तन-तरुवर का पहला फल, जिसमें चालीस साल तक कोई फल-फूल नहीं आये थे। और अब उसका जन्म हुआ था, सारी परिस्थितियों के बावजूद, उसका जन्म हो गया था।

'मिकोला, लो...बेटा', वह पति को सुखी करने के लिए, उसके सारे स्नेह और कृपाओं का प्रतिदान उसे देने के लिए उससे कहना चाहती थी। यद्यपि उसे पुत्र की अत्यधिक चाह थी, लेकिन उन सारे वर्षों में उसने कभी एक बार भी जो उसे स्पष्ट किया हो, एक शब्द भी कभी लांछन का उसे कहा हो, या कभी लानत दी हो कि कैसी बाँझ स्त्री से उसने विवाह किया जो देखने में तो सशक्त और स्वस्थ थी, मगर अंदर से जान पड़ता था एक दम बेकार थी, और स्त्रियों की तरह नहीं थी जो गर्भ धारण करती थीं, बच्चे जनतीं और उन्हें पालती-पोसती थीं।

बल्कि उसने पहले पहल स्वयं विश्वास भी नहीं किया, जब उसे सहसा पता चला कि उसके पेट में जीव आया है। अधेड़ वह हो ही चुकी थी, चालीस की थी। और फिर भी यह प्रत्यक्ष सत्य था।

उसके बाद मिकोला फ़ौज में भर्ती हो गया था। उसने उससे बिदा ली थी और वह जानती थी कि उसके लिए सबसे कठिन अपने उस बच्चे से बिदा लेना था जिसने अभी जन्म नहीं लिया था।

और मिकोला अब हमेशा के लिए चला गया था, मोर्चे पर वह अपने प्राण विसर्जन कर चुका था और बच्चे का जन्म भी हो गया था। उसने एक जर्मन बंदी-गृह में जन्म लिया था जर्मन सैनिकों की बेहया दृष्टि के आगे, जो एक स्त्री का जच्चापन की हालत में भी आदर नहीं कर सकते, उनकी बेशर्मी के हँसी-ठट्ठे के बीच जन्म लिया था।

बच्चा फूँस पर, गीले, ठंडे फूँस पर पड़ा था। उसने उस नन्हे नंगे शरीर को उठाया और छाती से चिपका लिया, उसको गर्माई देने के प्रयास से उस पर अपनी साँस से फूँका। इस कल्पना से ही उसका हृदय एक भीषण

अनिर्वच भय से भर उठा कि वह, जिसने सारी परिस्थियों के बावजूद जन्म लिया था, एक पंखहीन चिड़िया के बच्चे या जिसकी आँखें भी अभी नहीं खुली हैं, ऐसे बिल्ली के बच्चे की तरह ठिठुरकर रह जायगा। वह कोशिश करने लगी कि अपने शरीर की गर्मी से ही उसे गर्म कर दे, कुछ अपनी साँस की गर्मी ही उसमें भर दे, लेकिन उसने महसूस किया कि उसके हाथ खुद बर्फ़ हुए जा रहे हैं, चुभती हुई ठंड उसके शरीर में समाई जा रही है और नाड़ियों में उसका रक्त जमा-सा जा रहा है। दरवाज़े पर सिपाहियों ने आपस में कुछ कहा। फिर उनमें से एक गया और शीघ्र लौटकर आया।

'यह लो' वह लापरवाही से बोला।

एक कमीज़, ब्लाउज़ और साया फूँस पर आ पड़े। ये उसी के कपड़े थे, जो उन लोगों ने शाम को, सड़क पर उसे दौड़ाने से पहले, उसके बदन पर से उतार लिये थे। ओलेना ने अविश्वास की दृष्टि से सैनिक की ओर देखा। वह हीनता से मुस्करा दिया। काँपते हाथों से उसने कमीज़ उठाया और बच्चे को उसमें लपेट दिया, उस सूती कपड़े से अच्छी तरह उसको गठरिया दिया। उसका मुन्ना-सा मुँह, उस कपड़े के बीच में से निकला हुआ इतना हास्यास्पद लगता था, ऐसा गुड़िया-सा—और उसकी बेधुली हलकी नीली-सी आँखें जो जैसे किसी पिल्ले ने अभी-अभी आँखें खोली हों। आनंद से उसकी हिचकियाँ बँध गयीं। आख़िर कुछ तो था उसके पास, जिसमें अपने बच्चे को वह लपेट सकती थी। यही सबसे महत्त्व की एक बात थी। उस क्षण वह और सब कुछ भूल गई। अब सब ठीक ही होगा, ऐसा लगता था, भयानक दुःस्वप्न का अंत हो गया था। वह साया और ब्लाउज़ पहन रही थी, उसके हाथ काँप रहे थे। इससे उसे कोई गर्माई विशेष नहीं मिली, लेकिन अपने नंगे पीड़ा-व्यथित शरीर को इन लत्तों से ढकने के बाद वह कुछ अच्छा-सा महसूस करने लगी। उसका कोट और शाल...कहीं अगर उसे उसका वह कोट और शाल मिल जाते जो अफ़सर के कमरे में रह गये थे...लेकिन उसने अपने को मौन रहने पर बाध्य किया। वह जो कुछ उसके पास था, उसी से काम चला लेगी। बच्चा अब स्वच्छ कपड़े में लिपटा पड़ा था, लपेटों के अन्दर ठंड अब उसे नुक्सान नहीं पहुँचा सकती थी। उसने उसे अपनी

गोदी में बिठा लिया और अपना साया उसके चारों तरफ़ तहा दिया। वह चुपचाप गोदी में पड़ा था, प्रत्यक्षतः उसे ठंड नहीं लग रही थी—वह और क्या इच्छा कर सकती थी? उसके कुछ कपड़े उसे वापिस दे दिए गये थे, यह एक बड़ी अनहोनी घटना, कुछ दैवी लीला-सी थी, कुछ एक ऐसी बात जो उसकी समझ में नहीं आती थी। उसने जर्मन सैनिक को कपड़े फेंककर देते हुए देखा था, फिर भी यह बात उसकी समझ में नहीं आती थी। ऐसा लगता था कि वह साया, ब्लाउज़ और क़मीज़ छत से आ गिरे हैं या हवा ने उन्हें सीधे बर्फ़ से पटे हुए मैदानों से लाकर इस टपरी में डाल दिया है।

दरवाज़ा चूँ-चर्र करके बंद हो गया। उसने अपना सिर दीवार के सहारे टेक दिया और ज्वर की-सी अर्ध-सुप्त दशा में ऊँघने लगी। एक ठंडी सर-सराहट उसकी पीठ में दौड़ गई, उसका शरीर कभी एकदम ठंडा और गर्म हो उठता था; और वह ऊँघ रही थी कि तभी उसने स्वप्न देखा। मिकोला सड़क पर चला आ रहा था और सामने ही उसके खड़ी थी वह ठिंगनी काली-सी नरक की कीट, वह उस अफ़सर की रखेल। मिकोला ने उससे कुछ कहा और एक असह्य, बर्बर ईर्ष्या सहसा ओलेना के हृदय को मथने लगी। वह सिहर उठी, होश में आई, और संयमित नेत्रों से अपने चारों तरफ़ देखा। न, न वहाँ मिकोला था और न उस अफ़सर की औरत। वहाँ तो थी केवल वह टपरी—मुट्ठी भर पयाल और उसकी गोदी में उसका बेटा—एक सफ़ेद-सी गठरी, जिसमें गोल-मोल लाल-लाल नन्हा-सा एक मुँह निकला हुआ था। वह अकस्मात् यह सोचकर सिहर उठी कि नींद ही नींद में वह बच्चा कहीं गिर जाता तो! और दीवार से वह और भी लगकर बैठ गई। वह फिर ऊँघने लगी।

स्मृतियों के बिखरे हुए चित्र एक में गडमड होकर अंतहीन ढंग से उसके मस्तिष्क में उभरने लगे। कुर्की करनेवाला खड़ा चिल्ला रहा था...लेकिन यह कैसे हो सकता था? वह तो मारा भी जा चुका था, कुल्हाड़ी से उसका धड़ अलग हो चुका था; मगर फिर भी वहाँ वह खड़ा था और चिल्लाये जा रहा था, और लाल सैनिक उसके पास से निकले चले जा रहे थे। लेकिन मिकोला उनमें नहीं था। वहाँ कर्लों था। कर्लों ने अपने हाथ हिलाये। वह सूती कपड़े का एक थान लिये हुए था, और एक सीमाहीन पथ पर जो

गाँव से गुज़रता था, उसकी तह लगातार खोलता चला जा रहा था और इसी सँकरे उज्वल पथ से होकर उसका नवजात शिशु कुदकता हुआ चला आ रहा था।

'देखो, वह, अभी से दौड़ने लगा है', फ़ेडोसिया कावूचुक आश्चर्य से कह रही थी। ओलेना को इतना अचम्भा हुआ कि फिर नींद की झोंक से वह जाग गई।

उसका तालू और गला जल रहे थे। प्यास की यातना असह्य थी। उसकी जीभ निर्जीव-सी उसके मुँह में पड़ी थी, खुरखुरी और कड़ी, मानो वह उसकी थी ही नहीं। उसके होंठ चटख गये थे और जब वह उन्हें छूती थी तो उँगलियों पर ख़ून के निशान बन जाते थे। उसके कानों में झन-झनाहट हो रही थी, उसकी हड्डियाँ दर्द कर रही थीं और एक अन्तहीन शैथिल्य उसको दबा रहा था। उसने बच्चे की ओर देखा, उसके नन्हे-से माथे को छुआ और वह उसे ऐसा ठंडा लगा, जैसे बर्फ़, यद्यपि फिर उसे ख़याल आया कि उसका शरीर खुद बुखार से जल रहा है। वह फिर ऊँघने लगी। उसने स्वप्न देखा पानी का, पानी ही पानी, पानी ही पानी, कहीं उसका अन्त ही नहीं, एक बहता हुआ दरिया है, जो एक झील में गिर जाता है; लेकिन उसकी बाल्टियों में सूराख़ है और वह उनसे कुछ भी पानी नहीं भर पाती। वह घुटनों के बल झुक गई, और वास्तविक से भी अधिक स्पष्ट रूप से उसने देखा, बर्फ़ में एक सूराख़ था। उसके किनारे हरे थे, और उसके अन्दर अँधेरे में पानी उभर रहा था, एक जीव की तरह चल रहा था, हुड़क-हुड़ककर खुली हुई जगह में ऊपर उठकर आता था, फिर बर्फ़ के नीचे ही केवल अदृश्य हो जाने के लिए, जहाँ वह फिर अपने सुदूर भ्रमण पर चल देता था। मुरमुरी नर्म बर्फ़ की एक मोटी तह जमी हुई कड़ी बर्फ़ पर पड़ी हुई थी, और एक स्थान पर पतली-सी धार में पानी के अन्दर गिर रही थी जैसे चक्की के पाट के नीचे छेद में से आटा धीरे-धीरे गिरता रहता है। सहसा पानी में गिरते ही उस मुलायम बर्फ़ का रंग हरा हो गया, चक्कर खाकर वह एक गेंद के रूप में हो गया, जो वहीं सूराख़ में नाचने लगी। ओलेना चाहती थी बर्फ़ की इस गेंद को उठा लेना, उसे अपने

पपड़ीले होंठ से लगा लेना, लेकिन पानी उसे जमी हुई कड़ी बर्फ़ के नीचे ही नीचे बहा ले गया और वह वहाँ से लोप हो गई।

सहसा लम्बे-लम्बे दरार सूराख़ के चारों तरफ़ दिखाई दिये, और जमी हुई बर्फ़ टूटने लगी। ओलेना ने अपने शरीर की शृंखला टूटती हुई महसूस की, उसने महसूस किया कि पानी की गहराइयाँ उसे समा लेने को उठती आ रही हैं। वह सचेत हो गई, लेकिन सिर उठा सकने की शक्ति उसमें नहीं थी। बच्चा चुपचाप शान्ति से साँस ले रहा था, वह सुन रही थी। शायद उसे दूध पीने की इच्छा नहीं थी। लेकिन जब वह दूध माँगे तो उस वक्त उसकी छातियों में दूध उतरेगा भी? इतने अर्से से उसने कुछ भी नहीं पिया था। उसे लगता था कि एक युग बीत गया था। जर्मनों की कड़ी निगाह के नीचे जो बर्फ़ के दो-तीन निवाले वह किसी तरह निगल सकी थी, उसकी मुश्किल से कोई गिनती थी। ओह, कितना चाहती थी वह अपनी प्यास बुझाना, कितना तड़प रही वह पानी के लिए। उसके होंठ, जीभ और मुँह दुख रहे थे और पीड़ा और ख़ुश्की से उसका गला जकड़ा हुआ था। अन्दर से सूखी खाँसी के भयानक दौरे से उसका सारा शरीर हिला जा रहा था। फिर वह ऊँघ गई, और सफ़ेद बालू-सी फिर छन-छनकर नीचे गिरने लगी, वह ऐसी सफ़ेद थी जैसे दिन को गर्मियों में नदी-किनारे की तपती हुई बालू होती है, वह धूल की तरह उड़ रही थी, जैसे सफ़ेद आटा, जो चक्की के पाट के नीचे से गिरता रहता है। सारा संसार सफ़ेद आटे के बादलों से छा गया था। वह साँस नहीं ले सकती थी। उसका मुँह उस सफ़ेद धूल से भर गया और फिर भी उस धूल-भरी सड़क में से होकर उसे अपना रास्ता पार करना ही था, चाहे जो कुछ हो जाय; उसे चलना ही था, जल्दी करनी ही थी, क्योंकि वह जानती थी कि एक मिनट भी खोने के लिए उसके पास नहीं है। वह उसी बालू में अपने पाँवों को घसीट रही थी, सूर्य का ताप भी भीषण था, घरों में आग लग गई थी—गाँव जल रहा था। सारे जोखम उठाकर भी उसे लपटों में से बच्चे को बचा ही लेना था और हवा तेज़ चलने लगी थी जो शोलों को चारों दिशाओं में उड़ा रही थी। बल्कि लपटों ने उसके साए और उसकी शाल को भी पकड़ लिया था। और ऐसी

गर्मी में उसने अपना कोट और शाल क्यों पहन रखे थे ? उन्हें उतार फेंकने का बिलकुल समय नहीं है, उसे दौड़ते जाना था ; ताकि लपटें उसके नन्हें से सिर को न छू सकें। आह, और उधर वह पुल जल रहा था, लपटें हवा में ऊँची उठ रही थीं। अरराकर वह सब का सब नीचे आ रहा... लग रहा था कि उसने बहुत देर कर दी, वह समय से दौड़कर नहीं आ सकी, और अब सब कुछ उसके सर पर टूट-टूटकर गिर रहा था। हताश होकर वह बच्चे को ढूँढ़ने लगा, वह उसकी गोद से गिर पड़ा था और उसके ऊपर मलबे का ढेर लग गया था, जिसे लपटें चाट रही थीं। वह जंगल के अन्दर से जर्मनों को देख सकती थी कि वे जलते हुए पुल के चारों तरफ़ व्यस्त हो रहे हैं और अपने हाथ हिला रहे हैं और चिल्ला रहे हैं।

उनके शोर से वह जाग गई। एक जर्मन उसके सिर पर खड़ा था, उसे अपने बूट से ठोकर मारकर उठा रहा था।

एकदम वह सचेत हो गई। इशारे से जर्मनों ने उसे उठने का आदेश दिया। अपनी कमज़ोरी पर क़ाबू पाने का एक महान् प्रयास करते हुए वह घुटने के बल उठी, बच्चे को छाती से चिपटाए हुए, बड़ी मुश्किल से उसने अपने आप को सीधा किया। सैनिक ने अपनी रायफ़ल के कुन्दे से उसे धक्का देकर दरवाज़े की तरफ़ उसका रुख़ कर दिया। एक सफ़ेद बर्फ़ीला संसार उसकी आँखों के आगे फैल उठा, जिसने उसे अन्धा-सा कर दिया। आज्ञानुसार वह सैनिक के आगे-आगे एक मद्यपी की तरह लड़खड़ाती हुई चली। वह समझ गई कि फिर जिरह के लिए ले जाई जा रही है।

वर्नर ने घृणा से उसकी ओर देखा। उसकी दशा देखने में कितनी भयानक लग रही थी। उसके चेहरे का रंग अमानव-सा विकर्षित पीला था। रक्त की एक पतली धार उसके फटे हुए होटों से बह आई थी और ठोढ़ी पर आकर जम गई थी। चोट का एक बड़ा-सा काला, लाल और बैंगनी निशान उसकी आँख के नीचे फैलाया हुआ था। मालूम होता था जैसे एक आँख किसी धक्के से ऊपर की दिशा में उलट गई है। चिपकती, उलझी लटें उसके गड्ढे पड़े हुए गालों के दोनों तरफ़ पड़ी थीं। उसके नंगे सूजे हुए पैरों का रंग काला होना शुरू हो गया था।

अफ़सर ने अपनी उँगलियों से मेज़ को ठकठकाया और अपने सिर के एक इशारे से सैनिक को आदेश किया कि वह स्त्री को कुर्सी दे। उसे आश्चर्य हुआ, मगर बिना अनुमति की प्रतीक्षा किये वह तुरन्त उस पर बैठ गयी और एक-टक बे-रंग भवौं के नीचे पनिहाई-सी आँखों की तरफ़ देखने लगी।

'बेटा है या बेटी?' उसने बच्चे की तरफ़ सिर हिलाते हुए यह अनाशित प्रश्न किया।

'बेटा' एक कमज़ोर खुरखुरी आवाज़ में उसका उत्तर था। आदेश पाकर एक सैनिक पानी का एक लोटा ले आया। ओलेना को लगा कि वह फिर विक्षिप्त दशा में आ गई है। उसने लोटा लिया और बड़ी उत्सुकता से, जल्दी-जल्दी, जिससे बहुत-सा ठंडा पानी गले में अटक जाता था, उसे गटक-गटक करती हुई पी गई। उसने अपने दुखते होठों, अपनी सूखी जीभ और जलते हुए हलक में उसकी तरी महसूस की।

'बस, बहुत है' वर्नर ने कहा।

निराशा से वह पागलों की तरह उस ओर देखती रह गई। लेकिन उसे फिर पानी नहीं मिला, वह मेज़ के एक किनारे पर रखा रहा। उसकी सतह पर अब भी बुलबुले उठे हुए थे, वह उसके बिलकुल पास रखा था, वह ठंडे पानी का प्याला। पीड़ा से उसके होंठ अब पहले से भी अधिक दुख रहे थे; लेकिन अब कुछ ताज़गी और तरी अपने हलक़ में महसूस कर रही थी, जिसने उसकी प्यास को, अगर यह सम्भव हो सकता है, पहले से भी अधिक भड़का दिया।

'अच्छा तो, बेटा है..' शिथिल उत्साहहीन स्वर में कप्तान ने कहा।

वहाँ जैसे कोई आतंक की चीज़ छिपी हुई थी, वह कमरा किसी आने-वाली विपत्ति से उसे डरा रहा था, जिसकी कल्पना करने का भी उसे साहस नहीं होता था। पानी, जिसके कुछ घूँट उसे पीने दिये गये थे; कुर्सी, जो उसके लिए रख दी गई थी; कप्तान का एकदम मानवोचित प्रश्न—सब कुछ ऐसे आतंक से उसे भयभीत करने लगे कि वह काँपने लगी। तेज़ी से उसके सारे शरीर पर एक हलकी सिहरन होने लगी जो उसकी प्रत्येक

मांस-पेशी पर छा गई। वह अपनी दृष्टि कप्तान के चेहरे पर जमाये रही।

'तो तुम्हारे एक बेटा हुआ है,' उसने फिर कहा। 'एक ज़िन्दा तन्दुरुस्त बेटा...'

वह इस प्रतीक्षा में रही कि अब इसके बाद क्या आता है।

'तो मैं उम्मीद करता हूँ कि अब तुम ज़्यादा समझदारी दिखाओगी। अब यह सिर्फ़ तुम्हारा ही सवाल नहीं है। अब तुम अपने बेटे को चाहो तो बचा सकती हो, चाहो तो मिटा सकती हो। है न यह बात? उसको बचाना या मिटाना,' धीरे-धीरे और शब्दों पर ज़ोर देते हुए वह बोला।

स्वाभाविक प्रेरणा से उसने बच्चे को छाती से और भी ज़ोर से चिपका लिया। कप्तान ने एक गहरी दृष्टि से उसको परखा, उसकी प्रत्येक हरकत, उसके भावों की प्रत्येक अभिव्यक्ति को वह ध्यान से देखने लगा।

'पिछली रात किसी ने तुम्हें रोटी पहुँचाने की कोशिश की थी। कौन था वह?' उसने मुलायमियत से धीमे स्वर में पूछा, मानो उसका प्रश्न ज़रा भी महत्त्व का नहीं था।

'मैं नहीं जानती।'

'क्या मतलब तुम्हारा, नहीं जानतीं?'

'मैं नहीं जानती,' उसने सीधा उसकी आँखों में देखते हुए दोहराया और इतने विश्वास के स्वर में बोली, कि वह आश्वस्त हो गया। निश्चय ही यह संभव था कि वह सचमुच न जानती हो।

'तुम्हारे कौन-कौन से पड़ौसियों के बाल-बच्चे हैं?'

'बच्चे?' वह आश्चर्य से कह उठी। 'सबों के बच्चे हैं। कैसे न होते?'

हाँ, उसको छोड़कर उन सबों के बच्चे थे। और अब उसके भी एक बेटा, नन्हा-सा बेटा था। वह जर्मन कमांडेंट के आफ़िस में अपनी माँ के कमीज़ में लिपटा हुआ उसकी गोदी में पड़ा गहरी नींद सो रहा था। अभी वह यहाँ तक नहीं जानता था कि जर्मन कौन होता है। नहीं, अभी उसे यह नहीं मालूम था।

'रोटी लानेवाला तुम्हारे ख़याल में कौन हो सकता है? किसने भेजा होगा एक दस-ग्यारह साल के लड़के को?'

वह मन-ही-मन सब पड़ोसियों को सोच गई। इसलिए नहीं कि वह उसे उत्तर देना चाहती थी; बल्कि वह स्वयं जानना चाहती थी कि वह कौन होगा जिसने उसके उस परम आवश्यकता के समय सहायता पहुँचाने का प्रयास किया और उसे रोटी पहुँचाने के लिए जर्मन गोली का ख़तरा सहन किया। सबों के बाल-बच्चे थे और उनमें कितनों के लड़के क़रीब दस-ग्यारह साल की उम्र के थे। वह स्वयं भी अटकल न पा सकी।

'मैं नहीं जानती। गाँव के बहुत से लड़के हैं। हर घर में बच्चे हैं...'

वर्नर ने त्योरी चढ़ाई; उसने महसूस किया कि सचमुच वह नहीं जानती थी।

'अच्छी बात है...अब मुझे यह बताओ कि कर्ला इस वक्त कहाँ होगा?'

ओलेना को जूड़ी चढ़ गई। तो अब फिर दोबारा वही सब होनेवाला है! उसने महसूस किया कि उसके बेटे का गर्म-गर्म शरीर उसकी बाँहों पर था, और इससे उसके हृदय को शक्ति और साहस मिला। जर्मन जिरह की दोहरी मार के मुक़ाबले में अब वह अकेली नहीं थी। अबकी उसका बेटा भी उसके साथ था, बेटा, जो एक टपरी के और मिट्टी के खाली फ़र्श पर पैदा हुआ था, वह बच्चा जो बीस साल की तपस्या के बाद उसको मिला था।

वह उसके साथ था और शांतिपूर्वक सो रहा था, चिड़िया का-सा उसका नन्हा हृदय तेज़ गति से अस्पष्ट-सा उसके हाथ के नीचे स्पंदन कर रहा था। उसका लाल-लाल छोटा-सा गोल-मोल मुँह, अभी मुश्किल से स्पष्ट उसकी भवें, उसका बटनिया-सा नाक—वह एक अत्यन्त सुन्दर, अत्यन्त अद्भुत बच्चा था, जैसा उसने जीवन में कभी नहीं देखा था। असीम शांति, एक महान आत्म-विश्वास उसने अपने अन्दर महसूस किया—कि अब कोई उसका कुछ नहीं कर सकता, क्योंकि उसका बेटा उसके साथ है।

'इस समय कहाँ होगा वह?' वर्नर ने शान्त स्वर में, उसे आतंकित करते हुए दुहराया।

उसने अपना सर हिला दिया।

'मुझे नहीं मालूम...'

'तुम्हें नहीं मालूम...और कहाँ थे वे लोग जब तुम गाँव में वापिस आई?'

'मैं नहीं जानती...जंगल में।'

'किस जंगल में?'

उसने अपने कंधे उचका दिये।

'जंगल में..'

उसके उत्तर से उसे कुछ भी मालूम नहीं हुआ। सफ़ेद मैदान जो गाँव के चारों तरफ़ फैले हुए थे, उनके सब तरफ़ जंगल ही जगल थे। उत्तर और दक्खिन पूरब और पच्छिम, सब तरफ़ जंगल ही जंगल फैले चले गये थे। ज़िले का एक यही इलाका जंगलों से ख़ाली था और यही वजह थी जो उसका पड़ाव यहाँ इतनी शांति से पड़ा हुआ था। लेकिन और फ़ौजी पड़ावों में हर तरह की आकस्मिक दुर्घटनाएँ होती रहती थीं; यही कारण था जो ऐसी किसी सूचना के लिए, जिससे कर्ला और उसके जत्थे का पता लगाने में सहायता मिल सके, सदर दफ़्तर बार-बार विवश होकर लिखता था।

'...यहाँ तो बहुत से जंगल हैं...तुम किस तरफ़ से गाँव में दाख़िल हुई थीं?'

'मुझे याद नहीं, मैं नहीं जानती...सभी तरफ़ बर्फ़ पड़ा हुआ था और वे लोग मुझे सड़क तक छोड़ गये; बस कुल इतना ही मैं जानती हूँ...'

'अच्छा तो...किस सड़क तक?'

'मुझे याद नहीं...'

'तुम इतनी जल्दी भूल भी गईं? कुल चार ही दिन तो तुम्हें हुए गाँव में आये।'

बड़े विस्मय के साथ उसे याद आया कि उसे गाँव में आये कुल छै ही दिन हुए थे। तो फिर, दो दिनों के बारे में वर्नर को कुछ पता नहीं था। छै दिन, और ऐसा लगता था कि चुपचाप जंगल में अपना डग-आउट छोड़कर आए हुए एक पूरा जीवन बीत गया है।

धीरे-धीरे वर्नर ने एक सिगरेट लपेटी, फिर अपनी दृष्टि उठाई और उसके पीले ज़ख़्मी चेहरे की ओर देखा।

'इधर देखो, तुम एक मा हो...'

फिर वही शब्द। इस बार वह सच कह रहा था, उसका बच्चा उसकी

बाहों में था, एक नन्हा-सा शिशु जो एक टपरी के अन्दर फ़र्श के ऊपर पैदा हुआ था, और अपनी मा के कुर्ते में लिपटा हुआ था।

'तुम्हारे एक बेटा है।'

उसके उतरे हुए चेहरे पर एक मुस्कराहट की चमक दौड़ गई जो उसके अन्तरतम से निकली थी। हाँ, उसके एक बेटा था, एक बेटा...

'क्या तुम चाहती हो कि तुम्हारा बेटा ज़िन्दा रहे और तन्दुरुस्त हो, क्या तुम चाहती हो कि वह बढ़े और बड़ा हो?'

ओह, वह कितना चाहती थी उसका बेटा कुशलता से जीवित रहे! कितना वह चाहती थी कि वह बढ़े और बड़ा हो...वह अपने आपको ज़मीन से उठाने लगेगा...अपने नन्हें-नन्हें पाँवों पर खड़ा होगा। वह घर भर में पाँव-पाँव फिरेगा और ड्योढ़ी के दरवाज़े से घिसटकर बाहर जायगा। वह अपनी नन्हीं-नन्हीं उँगलियों से मेज़ पर से चम्मच पकड़कर उठायेगा। वह बिल्ली और कुत्ते और बछड़े का पीछा करेगा। वह सब्ज़ी के बग़ीचे में जा पहुँचेगा। और अपने लिए अपने हाथ से मूली उखाड़ेगा। फिर वह और बड़ा हो जायगा, और स्कूल जाएगा, अपनी किताबों का थैला हाथ में लिए कितना जिम्मेदार और गंभीर वह लगेगा। और इसके बाद? वह कल्पना नहीं कर सकी कि इसके बाद क्या होगा—कल्पना नहीं कर सकी कि वह छोटा-सा नन्हा-सा जीव जिसे वह अपनी गोदी में लिये हुए थी, जवान हो जायगा, शादी करेगा और उसके भी बच्चे होंगे...

'उसको बचाने का तुम्हारे पास एक मौक़ा है। खुद तुम्हारे हाथ में अपने और अपने बच्चे के जीवन के बचाने का एक मौक़ा है। मैं यह मौक़ा तुम्हें दे रहा हूँ। बेवक़ूफ़ मत बनो, इस मौक़े से फ़ायदा उठाओ।'

ओलेना ने कोई उत्तर नहीं दिया। एकदम ठीक-ठीक उसकी समझ में नहीं आया कि इस जर्मन का मतलब क्या था, लेकिन उसका मन शंका और घबराहट से भर गया और एक कँपकँपी उसके शरीर भर में दौड़ गई। क्या चाहता था वह? क्यों वह इतने धीमे-धीमे, शान्त स्वर में इतने विश्वास के ढंग में बातें कर रहा था, मानों सचमुच वह उसे समझता था और एक इंसान से इंसान की तरह बात करना चाहता था?

'कुछ भी हो, हम उन्हें खोज तो निकालेंगे ही। इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता, एक दिन पहले या एक दिन देर से। याद रखो कि सब कुछ हमारे हाथ में है। लाल फ़ौज का ख़ातमा कर दिया गया है। सब ख़ात्मा हो गया है, फिर यह बेवकूफ़ी और इतनी ज़िद किस लिए? तुम्हारे आदमी जंगलों में हैं, उन्हें पता नहीं है कि चारों तरफ़ क्या हो रहा है। वे सब ओर से घेरे में पड़ गये हैं, और उनके लिए अब कोई रास्ता नहीं रह गया है, बचाव का का कोई मौक़ा नहीं रह गया है। अगर आज नहीं, तो कल, वे हमारे हाथ पड़ेंगे और सज़ा पायेंगे। लेकिन उनकी संगत में रहकर जो-जो जुर्म तुमने किये हैं, मैं उन्हें माफ़ करने को तैयार हूँ। उनके सिखाने-पढ़ाने में तुम आ गई, उन्होंने तुम्हें धोखे में डाला। तब कोई बेटा नहीं था तुम्हारा.. हम बल्कि इसका भी ख़याल नहीं करेंगे कि तुमने एक पुल उड़ा दिया था। तुम शांति से गाँव में रह सकोगी और अपने बच्चे को पाल-पोसकर बड़ा कर सकोगी...'

उस पर से अपनी दृष्टि बिना एक बार भी हटाये वह ध्यानपूर्वक सुनती रही।

यह मत सोचो कि मैं कोई खूँखार पशु या दानव हूँ। और मैं कर ही क्या सकता हूँ, यह तो कर्तव्य है।...एक सैनिक के कर्तव्य की जो माँग होती है, वही मैं पूरा करता हूँ, अपने देश के लिए जो मेरा कर्तव्य होता है...मुझे तुम्हारे लिए अफ़सोस है, तुम्हारे बच्चे के लिए अफ़सोस है। तुम्हीं ने उसे जिन्दगी दी है, लेकिन तुम्हें कोई हक नहीं है कि तुम उसे छीन लो।'

'छीन लूँ?' यन्त्रवत् उसने दुहराया, मानो वह किसी और विचार-धारा में लीन रही हो।

वर्नर अधीर होकर अपनी सिगरेट के किनारे से मेज़ को खुट-खुट करने लगा।

'तुम अच्छी तरह जानती हो, मेरा क्या मतलब है, तुम ख़ूब अच्छी तरह समझती हो कि अगर तुम मुझे जवाब देने से इनकार करती हो तो तुम अपने बेटे को मौत की सज़ा दे रही हो। सोच लो इसको। इसको ज़रा फिर से सोच लो; मैं और ठहर सकता हूँ। तुम कोई बयान दोगी या नहीं? मेरा

ख़याल है कि तुम इस बारे में समझदारी से काम लोगी। कुछ भी हो, उन्हें किसी भी हालत से कोई बचा नहीं सकता, और तुम अपनी और अपने बच्चे की जान बचा लोगी।'

उसने अपनी मेज़ की दराज़ से कुछ तमाखू और सिगरेट के काग़ज़ लिए और धीरे-धीरे दूसरी सिगरेट लपेटकर तैयार करने लगा। ओलेना उसकी उँगलियों को ध्यान से देखती रही, उसकी गुट्ठल उँगलियों को, जिनपर घने लाल रोएँ थे। बिना किसी भाव के उसकी आँखें तमाखू के गिरते हुए टुकड़ों को देखती रहीं, सफ़ेद काग़ज़ की सलवटों को ध्यान से देखती रहीं। भक् से एक दियासलाई जल उठी और नीले धूएँ के चक्र छत की ओर उठने लगे।

'तो फिर ?'

उसने अपने कंधे हिला दिये।

'तुम जवाब नहीं दोगी ?'

'मैं कुछ नहीं जानती।'

वह उठ खड़ा हुआ और मेज़ पर अपने हाथ टेककर उसकी तरफ़ को झुका। उसका चेहरा क्रोध से विकृत हो गया था।

'तो फिर यह है तुम्हारा रूप एँ ? मैं तो तुम्हारे साथ यहाँ इन्सान का बर्ताव करता हूँ और तुम...तुम ठहरो ज़रा, मैं तुम्हें अभी दिखाता हूँ...हैंस!'

एक सिपाही दरवाज़े में आया।

'यहाँ आओ, दोनो !'

दो सशस्त्र सैनिक अन्दर आये। उसने पहचान लिया उन्हें। ये ही थे जो टपरी पर पहरा देते रहे थे और जो अश्लील मज़ाक़ करते हुए उसका बच्चा जनना देखते रहे थे।

'पकड़ो उसे। बच्चा मुझे दो।'

इसके पूर्व कि वह समझ भी सके, यह क्या हो रहा है, एक सिपाही ने उसकी गोदी से बच्चे को खींच लिया। वह कूदी उसके पीछे, मगर लोहे के हाथों ने उसे दोनों तरफ़ से जकड़कर दबा रखा था। बच्चे को सैनिक अपने हाथों में बड़े बेढंगे तौर से लटकाए हुए था। वह डर रही थी कि कहीं वह उसे गिरा न दे।

'मेज़ पर धर दो इसे !'

बच्चा अब मा और जर्मन के बीच में मेज़ पर पड़ा था। सिपाहियों के पंजे उसके कंधों की खाल में गहरे गड़े हुए थे, अस्तु वह समझ गई कि इनसे मुक्त हो सकना असंभव है।

उस तरफ़ मेज़ पर एक छोटी-सी गठरी पड़ी हुई थी, और एक लाल नन्हा-सा चेहरा मुश्किल से सूती क़मीज़ की उन भारी लपेटों के बीच में से झाँक पा रहा था, जो उसे सर से पैर तक चारों तरफ़ से ढँके हुए थीं। वर्नर ने उस शांत, सोते हुए शिशु को अरुचि से देखा। सहसा उसकी नन्हीं-सी पलकों में कंपन हुआ और दो धुँधले नीले जलाशय खुल उठे। उसकी छोटी-सी ठोढ़ी काँपी। एक तीर-सा ओलेना के मर्म को पार कर गया। नव-जात शिशु का करुण असहाय रोदन उठा। उसका छोटा-सा मुँह साँस के लिए हाँफता हुआ-सा खुल पड़ता था, उसका माथा और भी लाल हो उठा था जिससे उसके हलके रंग की भँवें सफ़ेद धारियाँ-सी मालूम होती थीं। उसने उस तक पहुँचने की कोशिश की, लेकिन भारी-भारी हाथों ने अब भी उसको मज़बूती के साथ कुर्सी पर दबाये रखा।

'अब और ज़्यादा तुम्हारा दायीपना मुझसे नहीं हो सकता,' वर्नर रूखी आवाज़ में बोला। 'तो फिर, अब तुम बताने जा रही हो कि नहीं ?'

उसने उसकी ओर देखा तक भी नहीं, उसकी दृष्टि शिशु पर केंद्रित थी। वह एक पिल्ले की तरह कूँ-कूँ कर रहा था। ओह, केवल यदि वह कहीं उसे लेकर छाती से लगा सकती, उसे गोदी में झुला सकती, पुचकार सकती, सुला सकती...

'सुन रही हो, मैं तुमसे क्या कह रहा हूँ ? तुम बोलने जा रही हो ? मैं आख़िरी बार तुमसे पूछता हूँ।'

उसने ज़बरदस्ती अपनी आँखें बच्चे पर से हटा लीं और धीरे से स्पष्ट शब्दों में कहा :

'नहीं, मुझे कुछ नहीं कहना है...'

कप्तान ने बच्चे के बदन पर से लिपटे हुए कुर्ते को खींचकर अलग डाल दिया। ओलेना का छोटा-सा पुत्र, नंगा, पेट फैलाये, छोटी-छोटी मुट्ठियाँ

भींचे, पाँव ऊपर को उठाये—मेज़ पर पड़ा रो रहा था। वर्नर ने उसके गर्दन की खाल पीछे से पकड़कर एक पिल्ले की तरह दो उँगलियों से पकड़कर उसे ऊपर उठाया। फूल की पंखड़ियों-से गुलाबी पारदर्शक नाखूनोंवाले उसके छोटे-छोटे पाँव असहाय हवा में हिलने लगे।

'बोलो, अब ?'

धीरे-धीरे उसने अपना रिवाल्वर ऊँचा किया।

ओलेना को काठ मार गया। उसके हाथ और पाँव बर्फ़ की सिल हो गये। कमरा फैलने लगा और वह जर्मन उसकी आँखों में भीमाकार लेने लगा। वह मनुष्य जो मेज़ के पीछे खड़ा हुआ था, अब वह मनुष्य नहीं था जो अब से पहले उससे बातें कर रहा था ; बल्कि असंभव से आकार का एक दानव हो गया था जिसका सिर बादलों तक पहुँच रहा था। और उस सीमा-हीन शून्य में, अकेला पृथ्वी और आकाश के बीच उसका पुत्र लटका हुआ था, नन्हा-सा, गुलाबी-सा, और नंगा। उसकी कसी-कसी खाल मानों उसकी साँस घोंट रही थी। उसने अपना रोना बंद कर दिया था और अब कोई आवाज़ नहीं निकाल रहा था। केवल उसकी टाँगें ही ऐंठन के साथ इधर से उधर हिल रही थीं और उसके छोटे-छोटे हाथ हवा में अपनी मुट्ठियाँ खोल रहे थे और बंद कर रहे थे, मानों हवा से हाथापाई कर रहे हों।

'अब देखें, क्या हो तुम, एक सड़ी हुई बोलशेविक की लोथ या एक मा !'

ओलेना सँभली। अब उसके सामने कप्तान दीर्घ पर्वताकार नहीं था। कमांडर फिर अपने साधारण रूप-आकार में आ गया।

'जवाब दो !'

'मैं माँ हूँ', उसी नाम से अपने को पुकारते हुए, जिस नाम से जंगल में वे लोग उसे पुकारते थे, ओलेना ने जवाब दिया। जो कुछ भी उसने उनकी ख़बरगीरी की थी, उनको स्नेह और आश्वासन दिया था, उनका खाना बनाया था, उनके कपड़े धोये थे, उस सबके लिये इसी नाम का प्रयोग करके उन्होंने अपनी कृतज्ञता प्रकट की थी।

'तो फिर तुम मुझे बता रही हो कि वे कहाँ हैं ?'

'उसने अपने लड़के की तरफ़ नहीं देखा। उसने सीधे उसकी बेरंग बरौनियों के बीच पनिहायी-सी आँखों की तरफ़ देखा।

'मैं कुछ नहीं बताऊँगी, कुछ नहीं। मैं कुछ नहीं बताऊँगी।'

धीरे-धीरे रिवाल्वर की नली नन्हें शिशु के चेहरे के निकट आती हुई उसने देखी। वह अनदेखी आँखों उसे देखती रही।

'यह तुम्हारा इकलौता बच्चा है, है न?' वर्नर ने पूछा।

उसने नहीं के अंदाज से अपना सिर हिलाया।

'नहीं...'

रिवाल्वर लिये हुए हाथ हवा में जड़ होकर रह गया।

'एँ! तुम्हारे और भी बच्चे हैं? बेटे? बेटियाँ? यहीं, इस गाँव में?'

एक मुस्कान सहसा उसके सूजे हुए, फटे हुए पपड़ियों से भरे हुए होंठों पर फैल गई।

'बेटे...सिर्फ़ बेटे...बहुत, बहुत से बेटे...वहाँ जंगल में...कर्ली...और वे सब, वहाँ जंगल में...'

गोली की आवाज़ गूँज उठी। सीधी उस नन्हें-से चेहरे के ऊपर।

बारूद और धूएँ की बदबू वहाँ फैल गई।

'यह लो, 'माँ'...'

छोटे-छोटे पाँव और कसकर भिंची हुई मुट्ठियाँ निर्जीव होकर लटक रहीं। चेहरा अब वहाँ नहीं था...केवल एक खुला, खून से भरा, ज़ख्म था।

'यह है जो तुमने अपने बच्चे के साथ कर डाला', वर्नर ने कहा।

उसने सिर हिला दिया। उस क्षण वह बहुत दूर जंगलों में थी।

वे वहाँ क्या रहे होंगे इस समय? वे अँगीठी के चारों तरफ़ बैठे होंगे, याके जर्मन टुकड़ियों की तरफ़ जंगल के रास्तों से होकर चुपके-चुपके जा रहे होंगे? क्या वे अब उस इमारत के चारों ओर घेरा डाल रहे थे, जिसमें जर्मनों का सदर दफ़्तर था? या वे अपने ज़ख्मियों को लिये हुए जंगलों में वापिस आ रहे थे? सैनिक भय से उसकी ओर देख रहे थे। कप्तान ने देखा कि बच्चे के शरीर से खून फ़र्श पर टपक रहा है। अरुचि और घृणा से उसका शरीर सिहर उठा।

'ले जाओ इसे !'

सिपाही हिचकिचाया।

'क्या हो गया तुम्हें ?' तीखे स्वर से कप्तान फुफकारा और सैनिक ने उसके शव को उठा लिया।

'मैं आखिरी बार तुमसे पूछता हूँ, तुम बोलोगी या नहीं ?'

ओलेना ने उत्तर नहीं दिया, उसने सुना तक नहीं। वह खिड़की के बाहर उस बर्फ़ीले तूफ़ान की ओर देख रही थी जो मैदानों पर ज़ोरों से चल रहा था।

'अगर तुम जवाब नहीं देतीं, तो मैं तुम्हारा भी ख़ात्मा करता हूँ !'

उसने उसको सुना नहीं और न उसको उत्तर दिया। सब कुछ, सब कुछ तो समाप्त हो चुका था। उसका बेटा संसार में अब नहीं था, वह लड़का जिसकी उसने बीस साल तक प्रतीक्षा की थी, चला गया था। उसका हृदय मौन हो गया था, उसके अंदर सिवाय निष्प्राण शून्य के कुछ नहीं रह गया था। वह अब निर्भय, निश्शंक, निष्कंप थी।

ओलेना कप्तान को सूने नेत्रों से देखती रही। उसका भाव पूर्णतया उपेक्षा का था। मानो वह किसी निर्जीव वस्तु, किसी लकड़ी या पत्थर के टुकड़े की ओर ताक रही थी।

'ले जाओ इसे और इसे भी ख़त्म कर दो !' कप्तान ने हुक्म दिया। 'बस यहाँ इस घर के पास मत करना, यहाँ काफ़ी खून-ख़ान फैल चुका है। नदी ही सबसे अच्छी जगह होगी !'

आज्ञानुसार उसी दिशा की ओर वह चल पड़ी जिधर वे उसे अपनी रायफल के कुंदों से ठेलते हुए ले जा रहे थे। हाँ, यहीं वह गाँव था, जहाँ वह पैदा हुई थी, जहाँ उसने शादी की थी और उस बच्चे के लिए निष्फल प्रतीक्षा करती रही थी, जो अंत में चंद घंटे उसके साथ बिताने आया था। उसने अपने हाथों उसे मृत्यु को सौंप दिया था; उसने अपनी आँखों से देखा था कैसे रिवाल्वर की नली उसके निकट और अधिक निकट आती गई थी और एक शब्द भी उसने मुँह से नहीं निकाला था जो उस रिवाल्वर को दूर हटा ले जाता, जो अपने धक्के से उस छोटे-से चेहरे के सामने से रिवाल्वर को दूर कर देता। नहीं, वह शब्द उसने अपने मुँह से नहीं निकाला था।

'नहीं, मेरे बेटे, मैं वह शब्द मुँह से नहीं निकाल सकती थी' उसने धीमे स्वर में कहा, मानो वह मरा हुआ बच्चा सुन ही तो सकता था।

फिरकर उसने देखा—एक सैनिक उस नन्हे-से शव को बड़े बेढंगे तरीके से घृणा के साथ सिर को नीचे लटकाये लिये चल रहा था। ओलेना ने अपने हाथ पसारे। सैनिक एक क्षण हिचका, फिर चूँकि स्वयं उसे ले चलना उसे बहुत बुरा लग रहा था, उसने अपनी ही ज़िम्मेदारी पर उस मरे हुए बच्चे को उसकी माँ को सौंप देना तय कर लिया। उसने उस बेजान शरीर को अपनी छाती से चिपका लिया। वह अभी तक गर्म था, हाथ और पावों को कड़ा होने के लिए अभी काफ़ी समय नहीं मिला था। अगर वह भयानक खुला हुआ जख़्म वहीं न होता, जिसने अब चेहरे का स्थान ले लिया था, तो कोई देखकर यही कहता कि बच्चा सो रहा है।

ओलेना दोनों सिपाहियों के बीच में बिना यह सोचे हुए कि वे उसे कहाँ ले जा रहे हैं, चलती गई। आदेश जर्मन भाषा में चिल्लाकर दिया गया था और वह उसे समझ नहीं सकी थी। वह बस यही समझती थी कि अब अंत निकट आ गया है, लेकिन इस विचार से वह चिंतित नहीं थी। उसके बेटे की मौत के साथ उसका सब कुछ समाप्त हो गया था।

आँधी के कारण मुलायम बारीक बर्फ़ की धूल हवा में उड़ रही थी। रास्ते में ओलेना ने जमी हुई बर्फ़ से ढंकी खिड़कियों पर दृष्टि डाली। दरवाज़ों से कोई बाहर को नहीं देख रहा था, एक आदमी भी कहीं दिखाई नहीं दे रहा था। घर सब मुर्दा पड़े थे। इधर-उधर कुछ जर्मन लोग अपने किसी न किसी काम पर लगे हुए थे, लेकिन उन्होंने रत्तीभर भी ध्यान क़ैदी की ओर नहीं दिया।

रायफल के कुन्दे की एक ठोकर ने उसे सड़क से पगडंडी की तरफ़ मोड़ दिया। वह कुछ चकित-सी हुई, लेकिन जिधर वह धक्का देकर उसे लिये जा रहे थे, वह चलती गई। उसने समझा था कि वे उसे गिर्जेघर के चौराहे पर ले जा रहे हैं जहाँ वे जर्मन शासन के विरोधियों को फाँसी पर लटकाते थे। मगर यह पगडंडी गाँव की बस्ती से कुछ हटकर जाती थी और फिर नाले की तरफ मुड़ जाती थी। यहाँ मुश्किल से हवा चल रही थी, क्योंकि नाले के दोनों तरफ़ कगार थे।

ओलेना जमी हुई बर्फ़ के पथ पर ऐसे चल रही थी, मानों वह टूटे हुए काँच के टुकड़ों पर चल रही हो। इन चार दिनों में उसके पाँव ज़ख्मों और फोड़ों से भर उठे थे। वे अब केवल खून से लिथड़े हुए मांस का लोथड़ा थे, जिसमें खाल के टुकड़े इधर-उधर हिलग रहे थे। स्त्रियाँ इसी रास्ते से पानी ले जाती थीं, अतः यहाँ जमी हुई बर्फ़ कड़ी थी। उसके खून से लथपथ पाँव बर्फ़ पर फिसल-फिसल जाते थे और कड़ी बर्फ़ के पतले-पतले काँच उसकी सूजी हुई खाल में घुस जाते थे। ओलेना एक बार ठोकर खाकर गिरी और फिर उसके बाद से वह हर क़दम पर ठोकर खाकर गिरती गई। ठीक उसके पेट के नीचे एक असह्य पीड़ा उसकी जान खींचे ले रही थी। वह गर्म-गर्म खून की धार अपने पाँवों पर बहती हुई महसूस कर रही थी।

नीचे, नदी अपने पथ पर मुड़ गई थी। उसके ऊपर एक मोटी तह बर्फ़ की पड़ी थी, जिसके ऊपर उस मुलायम बर्फ़ का ढेर था, जिसे आँधी ने वहाँ इकट्ठा कर दिया था, अस्तु अगर वह सूराख उसमें खुला हुआ न होता, जहाँ गाँव के इस तरफ़ के लोग पानी भरने आते थे तो नदी का कहीं भी पता भी न चलता। दूरी पर ओलेना ने वह काला सूराख़ देखा जिसका मुँह नये सिरे से हर रोज़ खोल दिया जाता था। उसकी समझ में नहीं आया कि वे उसे कहाँ लिये जा रहे थे। और आगे इस नाले में वे लोग मरे पड़े थे, जिन्हें दफ़नाने की जर्मनों ने गाँववालों को मनाही कर रखी थी। कहीं, उसी जगह उसे गोली मार देने का उनका इरादा तो नहीं है? वह जो एक सीधी-सादी मामूली गाँव की स्त्री थी, लाल सैनिकों की पाँति में गोली खाकर मरे, उन लोगों की पाँत में जिन्होंने युद्ध में लड़कर अपने प्राण दिये थे!

'एह क्या समझ रखा है, किधर जा रही हो तुम?'

वह उनके शब्द नहीं समझती थी, लेकिन रायफल के कुन्दे की चोट ने उनका आशय समझा दिया और आदेशानुसार वह ढाल में नीचे की तरफ़ मुड़ गई। सैनिक, एक आगे, एक पीछे, सीधे उसे बर्फ़ में खुले हुए सूराख़ की तरफ़ ले चले।

'उस पिल्ले को इधर दो!' चिल्लाकर एक सैनिक ने कहा और उसके हाथ से बच्चे को छीन लिया। डर से उसने उस मृत शरीर को और भी

अपने बदन से चिमटा लिया, मानो अब भी वे उसका कुछ बिगाड़ सकते थे, मानो अब भी उसके लिए कोई ख़तरा बाक़ी रह गया था।

'रहने दो, बस, लाओ इधर!' सैनिक को धमकी दिखाते हुए दुहराया, और उसके हाथों से उसे खींच लिया। वह नन्हा-सा शव बर्फ़ पर जा गिरा। ओलेना उसके बराबर में ही घुटनों के बल गिर पड़ी। उसके नन्हें-नन्हें हाथ और पाँव रास्ते में ही नीले पड़ गये थे, और गुलाबीपना उसकी खाल से ग़ायब हो चुका था। घंटा-भर पहले जहाँ पर उसका नन्हा-सा मुँह था, वहाँ ख़ून अब काला हो चुका था और जगह-जगह गुट्ठल होकर जम गया था।

इससे पूर्व कि उस नन्हें से शव को उठाने का उसे समय मिले, सैनिकों में से एक ने अपनी किर्च से उसे उठाकर हवा में उछाल दिया। बच्चा बर्फ़ के सूराख़ के पास आकर पड़ा। दूसरा सैनिक दौड़कर वहाँ पहुँचा, अपनी किर्च पर से उठाया और उसे फिर उछाला। उसका निशाना ज़्यादा सही पड़ा था—पानी छींटे देकर उछला, काले पानी की सतह पर बुलबुले उठे, और लहरें शव को जमी हुई बर्फ़ के नीचे-नीचे बहा ले गईं।

ओलेना घुटनों के बल निष्कंप बैठी रही। अब उसने अपना स्वप्न पहचाना। उसने वह स्थान और बर्फ़ में वह काला सूराख़ पहचान लिया। जमी हुई बर्फ़ के किनारे हरे-से थे और काला-काला पानी एक जीव की तरह उभरता और हिलता रहता था। वह गुड़क-गुड़क करके बर्फ़ में खुली हुई छोटी-सी जगह में वेग से उभरकर उठता था, मगर फिर बर्फ़ के नीचे लोप हो जाने के ही लिए; सुदूर स्थानों की अपनी यात्रा पर चले जाने के ही लिए। नदी-तट की जमी हुई कड़ी बर्फ़ पर जहाँ शव गिरा था, एक साफ़ लाल निशान बना रह गया था जैसे कोई मुहर हो।

अपनी मुर्दा आँखों से ओलेना धीमे-धीमे उभरते हुए काले-काले जल को देखती रही। वही उस छोटे-से शरीर को बहा ले गया था। उसके बेटे का अस्तित्व अब कहीं नहीं था। उसका अस्तित्व कभी संसार में था, इस बात का एकमात्र प्रमाण, एकमात्र चिह्न बर्फ़ पर ख़ून का वही एक दाग़ था, जैसे उजले कफ़न पर लाल मुहर का निशान। अब जमी हुई बर्फ़ के नीचे-

नीचे पानी उसे अपने दूर अपरिचित रास्तों पर बहाये लिये जा रहा था। वह उसे बर्फ़ के नीचे से ले जा रहा था, उसे ज़बर्दस्ती नीचे दबाये रखने की कोशिश कर रहा था, चट्टानों के ख़िलाफ़ वह उसे टक्करें दे रहा था; फिर सतह तक वह उसे उछाल देता था, बर्फ के संसर्ग से जैसे उसे चोटें लगाता हुआ! नहीं, नहीं, ओलेना जानती थी, इतनी भली प्रकार जानती थी कि जैसे वह खुद अपनी आँखों से हिम और बर्फ़ के पार देख सकती थी कि उनकी अपनी प्यारी नदी उस नन्हें-से शरीर को एहतियात से, कोमलता से ले जा रही थी, एक माँ की तरह उसकी रक्षा करती हुई, अपनी कोमल लहरियों में उसे अच्छी तरह लपेटे हुए। नदी उस नन्हें शरीर को उसके रक्त, बारूद के जले हुए घावों, जर्मन के पंजों के संसर्ग से जैसे धोकर स्वच्छ किये दे रही थी। उनकी अपनी, देशज नदी, उनके अपने देश का पवित्र जल! खुली हुई बाँहों से उस जल ने उस नन्हें मांस के लोथड़े को अङ्गीकार किया था, जो पूरे एक दिन भी जीवित नहीं रहा था। उनका अपना जल, अपने देश का पानी।

सिपाही आपस में बातें कर रहे थे, आगे के लिए कुछ तैयारी कर रहे थे, पानी के तूँदलों की परीक्षा और उसकी माप कर रहे थे। ओलेना मिनक तक नहीं रही थी। उसकी आँखें उन लहरियों पर जमी हुई थीं जो बर्फ़ के नीचे से उफनकर ऊपर आती थीं और फिर नीचे जाकर ग़ायब हो जाती थीं...वह अभी भी खूब अच्छी तरह छिप गया था, कोई भी अब उसे पा नहीं सकेगा। बर्फ एक मोटी-सी पर्त में जम गई थी और उसके ऊपर मुलायम बर्फ के गाले जैसे रज़ाई की तरह बिछे हुए थे। जहाँ तक भी दृष्टि पहुँच सकती थी, गहरी, खूब गहरी बर्फ जमी हुई थी और पानी अब भी अपने अदृश्य रास्ते पर बर्फ़ की ऊपरी और निचली पर्त के नीचे से, जर्मनों की दृष्टि से खूब अच्छी तरह छिपा हुआ बहा चला जा रहा था। 'यह बहकर कहाँ जाता है?' ओलेना ने दुःखी मन से सोचा और उसे याद आया कि वह पूर्व की ओर बहता है। हर्ष की जैसे एक बाढ़-सी उसके दिल में आ गई। उसका लड़का अपने ही लोगों की ओर उतराकर चला जा रहा था, उसका लड़का एक ऐसे प्रदेश की ओर ले जाया जा रहा था, जो जर्मन शृङ्खलाओं से मुक्त था।

हो सकता है कि वह किसी ऐसे स्थान पर जा पहुँचे, जहाँ पानी के तूँदले थे—पानी के तूँदलों का होना अवश्यम्भावी था—जहाँ लोग उसे देख लेंगे और भली प्रकार अनुमान भी लगा लेंगे कि अस्ल में क्या हुआ होगा। वे गोली से छिन्न-भिन्न किये हुए उसके सिर को देखेंगे और समझ जायेंगे। वे उसे समुचित रूप से दफ़नायेंगे—उस नन्हे से शव को दफ़ना देंगे, उसे स्वदेश की भूमि में दफ़ना देंगे। लेकिन संभवतः वह उतराकर सतह पर नहीं आयेगा, और केवल वसंत में ही, जब बर्फ़ गलेगी और नदी का जोशीला पानी खेतों में बढ़कर फैलेगा, तभी लोग उस नन्हें-से शव को पायेंगे...

सैनिक आपस में बहस कर रहे थे। वे कुछ क़दम पर हट गये। और फिर कुछ नापा। फिर उनमें से एक ने उस सूराख़ की मेढ़ पर अपनी रायफल का कुन्दा मार-मारकर जमी हुई बर्फ़ का एक भारी टुकड़ा उसमें से तोड़ दिया। एक लंबी काली दरार उस बर्फ़ के बीच मुड़ी हुई दिखाई देने लगी। बर्फ़ फिसलकर पानी में गिर गई जहाँ वह इधर से उधर ऊपर-नीचे हिलती रही। सूराख़ का हरा-सा चमकता हुआ किनारा उससे कुछ दूर रह गया।

पगडंडी पर से किसी के आने की चर्र-मर्र सुनाई दी। सैनिक देखने को मुड़े। कप्तान वर्नर उसी रास्ते से चला आ रहा था। ओलेना ने उस तरफ़ को मुँह नहीं फेरा। वह उसी तरह झुकी हुई पड़ी रही, मानो अभिमंत्रित हो, उसकी आँखें पानी पर ही जमी हुई थीं, झिलमिलाती लहरियों पर।

कप्तान ने अपने बूट की ठोकर से उसे उसकाया। उसने सिर उसकी तरफ़ घुमाया; मगर उसकी आँखें कुछ नहीं देख रही थीं।

'अरी, ओ! तू अब मरने जा रही है, समझती है? छापेमार कहाँ हैं?'

वह मुश्किल से अपना क्रोध ज़ब्त कर पा रहा था, वह हाँप रहा था। वह ओलेना को सैनिकों के साथ भेज चुका ही था कि सदर दफ़्तर ने टेलिफ़ोन पर उसे बुलाया। उसको आदेश हुआ था कि चाहे कुछ भी उसे करना पड़े, छापेमारों की रहने की जगह के बारे में कुछ न कुछ पता वह अवश्य ही लगा ले। सदर दफ़्तर को निश्चित रूप से मालूम हुआ था कि छापेमारों में से अधिकतर लोग उसी गाँव के थे, जहाँ वर्नर की फ़ौजी टुकड़ी तैनात थी। उसको आदेश हुआ था कि वह अविलंब आवश्यक समाचार प्राप्त करे।

और यह कम्बख़्त औरत जिसे, सदर दफ़्तर की माँग पूरी करने के लिए सिर्फ़ थोड़े-से शब्द मुँह से निकालने थे, कुछ उत्तर नहीं दे रही थी, बल्कि ऐसी चुप्पी साध ली थी मानों उस पर किसी ने जादू कर दिया हो। वर्नर आपे से बाहर हो रहा था; क्योंकि अपना आख़िरी फ़ैसला सुनाने और हुक्म दे देने के बाद उसको इस आँधी-पाले में यहाँ तक आना पड़ा था और सिर्फ़ अपने वही जिरह फिर से शुरू करने, उस ज़ख्मी सूजे हुए अमानव-से चेहरे को फिर से देखने के लिए। हताश होकर वह उस ज़िद्दी बर्बर स्त्री से कुछ उत्तर पाने के लिए उससे प्रार्थना तक करने को तैयार था। मगर वह जानता था कि उसका कोई फल नहीं निकलेगा। सदर दफ़्तर में लोगों के लिए यह कह देना आसान था कि हम "ज़ोर देकर इसकी माँग करते हैं!" "सूचना अविलंब भेजो!" हुक्म देना आसान था। "सभी उपायों का प्रयोग करो!" उन्होंने लिखा था। अपनी जान में वह अब तक सभी तरह के उपायों का प्रयोग कर चुका था। सौभाग्य ने स्वयं सबसे अच्छा उपाय उसके हाथ में दे दिया था—एक नव-जात शिशु, किन्तु किसी बात से सहायता नहीं मिली...

"बच्चा कहाँ है?" मुड़कर उसने सैनिकों से पूछा।

"हमने उसे इस सूराख़ में फेंक दिया," नाटे सैनिक ने डरते-डरते कहा। क्या बात हो गई होगी, क्यों वह बच्चे के बारे में पूछ रहा था, जब कि अभी चौथाई घंटा पहले स्वयं उसने उसे ले जाने का हुक्म दिया था? सैनिक डर गया। शायद वे आदेश का तात्पर्य नहीं समझे थे, शायद जो वह चाहता था, वह उन्होंने नहीं किया था?

वर्नर ने हाथ हिलाकर संकेत किया।

'सुनो, यू! छापेमार कहाँ हैं?'

ओलेना ने जवाब नहीं दिया। जितने ध्यान से वह पानी की ओर देखती रही थी, उसी मुद्रा से, स्थिर दृष्टि, वह कतान के चेहरे को घूरने लगी। वह सब देख रही थी, रत्ती-रत्ती चीज़: हलके रंग की भवें, जिनमें एक बाल औरों से कुछ बड़ा होकर उसके माथे पर, मानों उपहास-सा करता हुआ, उभरकर उठा हुआ था; सिगरेट के काग़ज़ का एक ज़रा-सा टुकड़ा

जो मुँह के एक कोने पर, एक छोटे-से सफ़ेद निशान की तरह चिपका रह गया था; उसके गालों पर बारीक लाल नसों का जाल; उसकी सफ़ेद बरौनियाँ जो बराबर झपती रहती थीं; उसके एक कान पर पाले का असर, जिसके कारण वह दूसरे कान से बड़ा लग रहा था।

"क्या देख रही हो तुम? मैं तुमसे पूछ रहा हूँ, छापेमार कहाँ हैं?"

वह समझ गया कि प्रश्न उसके मस्तिष्क में नहीं घुसा, उसके कानों ने उसको नहीं सुना—कि उसके दोहराने से भी कुछ हासिल नहीं होगा। तीव्र घृणा से कप्तान का हृदय भर उठा। उसे खेद था कि उस स्त्री का बच्चा वह अब फिर उसके हाथ नहीं आ सकता था, उसने जल्दी करके, समय से पूर्व ही, उसे ख़त्म कर दिया था। मा की आँखों के आगे ही उसकी खाल उतारना थी उसको, उसके कान साफ़ कर देने थे, उसकी आँखें बाहर निकाल लेनी थीं। शायद वह तब अपने निश्चय से डगमगा जाती, शायद इससे उसकी बुद्धि कुछ ठिकाने लगती। लेकिन उसने बहुत जल्दबाज़ी से काम लिया और कल वे फिर सदर दफ़्तर से उसे टेलिफ़ोन पर खुटखुटायेंगे, क्योंकि उसने उन्हें बता दिया था—कितना मूर्ख था वह—कि एक स्त्री छापेमार को उसने पकड़ लिया है। यह बात तो ख़ैर निश्चित ही थी कि सदर दफ़्तरवाले कभी भी नहीं समझ सकते थे कि उस स्त्री से कोई भेद पा लेना कितना असम्भव था। और उस पर तुर्रा यह था कि उसके मेहरबान दोस्त ऊपर से और 'एहसान' करेंगे, यानी अपने आला अफ़सरों को यह रिपोर्ट देते हुए उन्हें हार्दिक संतोष हासिल होगा कि कप्तान वर्नर साहब कुछ नहीं जानते कि क़ैदियों से सब भेद लेने के लिए उनके साथ क्या बर्ताव करना चाहिए; और यह कि स्थानीय लुटेरों की बस्ती के साथ वह प्रकटतः आवश्यकता से अधिक नर्मदिली और रिआयत का सलूक करते थे।

वह अपने होंठ चबाने लगा, और एकाएक उत्तेजित होकर इस तरह सैनिकों में से एक के हाथ से रायफल छीनी कि वह बेचारा डरकर पीछे की तरफ़ उछल गया। ओलेना कप्तान की तरफ़ अब बिलकुल नहीं देख रही थी। उसकी आँखें फिर पानी की झिलमिलाहट पर जम गई थीं, उसी के अनवरत बहते हुए जीवन पर।

वर्नर एक कदम पीछे हटा और फिर अपनी पूरी शक्ति से झुकी हुई स्त्री की पीठ में किर्च घुसेड़ दी। वह सूराख के किनारे पर मुँह के बल गिर पड़ी। उसके गिरने से पानी में बर्फ़ की एक पतली भुरभुरी धार गिरने लगी जैसे मिल की चक्की के नीचे से आटा गिरता है। ओलेना उसे देखती रही, उसका मुँह काले-काले पानी को लगभग छू रहा था। पानी में गिरती बर्फ़ की पतली धार हरे से रंग की हो गई और भँवर में चक्कर खाकर उसने एक गेंद का आकार ले लिया। और नाचने लगी।

कप्तान ने प्रयास करके किर्च को उसके शरीर में से निकाला और फिर फिर कोंचा। जमी हुई बर्फ़ पर स्त्री का शरीर सिहरा और काँपते हुए पसर-सा गया। उसके हाथ-पाँव फैल गये। बालों की कुछ लटें पानी में झूल रहीं थीं। वे पानी की लपेट में पड़कर लहरियों पर झूलती हुई ऊपर-नीचे उठकर नाचती हुई सजीव-सी लग रही थीं।

"धक्का दे दो उसे पानी में!" कप्तान ने हुक्म दिया।

सैनिक उसके शव पर टूट पड़े। रायफल के कुन्दों से मार-मारकर उसे नीचे ठेलने लगे। सूराख छोटा था। उसका सिर पानी में लटक रहा, लेकिन बाँहें किनारे के बाहर ही फैली रह गई थीं, मानो विरोध कर रही हों।

"क्या हो गया है तुम लोगों को, क्या तुम एक औरत का भी क़िस्सा तय नहीं कर सकते?" क्रोध से उफनते हुए कप्तान ने गरजकर कहा। सैनिक और भी तत्परता से उस लाश पर पिल गये। उन्होंने उसकी बाँहें तोड़ दीं और ज़बर-दस्ती उसे पानी में बर्फ के नीचे ठेल दिया। वह पहले छाती तक डूबी, फिर कमर तक। सैनिकों ने अब अपने जूतों और रायफ़ल के कुन्दों दोनों की मदद से उसे ठेलना शुरू किया। कप्तान ऊपर से देख रहा था, इसलिए वे और भी जल्दी दिखा रहे थे। आख़िरकार समूचे शरीर के अन्दर गिरते ही पानी के छींटे ऊपर ऊठे। केवल उसके नीचे सूजे हुए पाँव, जो बिलकुल मानव के-से नहीं लग रहे थे, अब भी उस सूराख के बाहर को निकले हुए थे। अपने रायफल के कुन्दों से उन भयानक विकृत टाँगों को मार-मारकर वे उन्हें नीचे को ठेलने लगे। आख़िरकार फिर पानी ऊपर उछला, हुड़ककर ऊपर उठ आया। शव अंदर विलीन हो गया था। बर्फ़ के नीचे से एक

छोटी-सी लहर बुदबुद करती हुई उभरी और फिर विलीन हो गई, वह सुदूर स्थानों की यात्रा पर चली गई।

वर्नर अपने भाग्य को कोसता हुआ उलटा वापिस फिरा। उसका पाँव बर्फ़ीले रास्ते पर एक बार फिसला। सैनिक दीन मुद्रा से उसके पीछे-पीछे चल रहे थे और चलते हुए कुछ झिझककर अपनी रायफलों का सहारा ले रहे थे।

नीचे काला पानी बर्फ के सूराख़ के अन्दर गुड़गुड़ शब्द कर रहा था, चमकते हुए किनारों के पास जहाँ-जहाँ वह चक्कर खाता था, हरा-सा दिखाई देता था। सैनिकों के बूटों के निशान रौंदे हुए बर्फ़ पर साफ़ दीख रहे थे। केवल एक तरफ़ को, उज्ज्वल बर्फ़ पर एक लाल धब्बा रह गया था, जहाँ बच्चे का शव पहली बार गिरा था। सफेद ज़मीन पर लाल सुर्ख निशान, जो कि साफ़ चमक रहा था, और ऐसा लग रहा था, मानो यहाँ से यह कभी नहीं मिटेगा, मानो वह इसी तरह बना रहेगा जब तक वसंत के सुखद धूप के दिन आ जायँगे जब कि बर्फ गलेगी और मुलायम बर्फ़ छोटे-छोटे झरनों में बहने लगेगी, जब उन्मुक्त होकर नदी, सुदूर मैदानों को सींचती हुई, अपना सारा तूफानी जल, बहुत दूर अनंत समुद्र की ओर, ले जायगी—स्वदेश के प्रिय समुद्र की ओर!

६

पुस्या स्नान कर रही थी। गुमसुम, मौन, फेडोसिया क्रावचुक उसके लिए पानी ला रही थी और टब में गर्म पानी भर-भरकर डाल रही थी। और वह टब में बैठी अपने पतले-पतले कंधों पर साबुन मल रही थी। इस तरह बैठे हुए उसे, अपने उस जर्मन के सामने, ज़रा भी झिझक नहीं मालूम हो रही थी—वह उसके बराबर ही बैठा सिगरेट पर सिगरेट उड़ा रहा था। वह भला रसोई के कमरे में कैसे नहाती! लेकिन कल्पना तो करो ऐसी मिज़ाजदार महिला और रसोईखाने में! ऐसी-जैसों के लिए वहाँ नहाने का काम नहीं था, क्योंकि उसे तो अपना नाज़ुक हाड़-मांस अपने जर्मन को

दिखाना था, उसे तो फ़र्श पर पानी फैलाना था, ताकि उसके उठने पर कुछ तो समेटकर साफ़ करने के लिए रहे।

पुस्या गर्म पानी का मज़ा ले रही थी, यद्यपि रह-रहकर वह एक तिरछी नज़र कुर्ट पर भी डाल लेती थी। सारी शाम वह मुँह लटकाये हुए, मौन ही रहा था।

"कुर्ट..."

वह अपने विचारों से जाग उठा।

"क्या बात है?"

"तुम तो ऐसे चुप हो...! तुम्हें तो ऐसा ख़याल है मेरा जैसे मैं यहाँ हूँ ही नहीं..."

"मैं थका हुआ हूँ," रूखे स्वर में उसने उत्तर दिया।

"मैं दिन भर तुम्हारा इंतज़ार करती रही, और तुम ज़रा एक दफ़ा को भी नहीं आये।

उसने स्पंज का पानी निचोड़ा और अपने कुचों पर छोटी-छोटी साबुनी सफ़ेद धाराओं का बहना देखने लगी।

"आज दिन भर मुझे इधर-उधर बुरी तरह दौड़ते बीता है।" वह बुड़बुड़ाया। सारे समय उसको सदर दफ़्तर के टेलिफ़ोन का ही ध्यान बना रहा। कल उसे रिपोर्ट दे देना होगी कि वह उस औरत से कोई भी भेद नहीं मालूम कर सका। मेजर आग-बगूला होगा, हुआ करे। यह देखना मज़ेदार होता कि वह ख़ुद कौन-सा भेद उसके अन्दर से निकाल लेता! हमेशा वह यही समझता रहा है कि सब कुछ आसान और मामूली बात है। इस झगड़े में सबसे कमज़ोर पहलू यह था कि वर्नर को जल्दी ही अपनी तरक्की की उम्मीदें लगी हुई थीं, मगर छापेमारों के इस वाहियात धन्धे ने बीच में आकर सब खेल बिगाड़ दिया था। फिर आख़िर छापेमार कोई उसे थोड़े ही परेशान किये हुए थे। वे तो सदर दफ़्तरवालों की जान को आये हुए थे; तो फिर उन्हें ख़ुद ही उनकी खोज लगानी चाहिए, उनके छिपे हुए स्थानों का पता लगाना चाहिए,...मगर उन्होंने तो यही तय कर लिया कि बस, सबसे आसान यही है कि सारा काम कुर्ट के मत्थे मार दो और

उसी को इसके लिए ज़िम्मेदार ठहरा दो। वह अपनी ही बेवकूफ़ी पर झल्लाने लगा। जब ख़ुद उसे अभी इस बात का इत्मीनान नहीं हो सका था कि उससे कुछ भेदों का पता उसे मिल सकेगा या नहीं, तो क्यों उसने उस कॉस्ट्युक औरत की गिरफ़्तारी की रिपोर्ट उन्हें दी?

एक बात उसे सूझ गई थी। पुस्या ने महसूस किया कि उसकी दृष्टि उसी के ऊपर जमी हुई है।

"क्या है?"

बहुत धीरे-धीरे उसने सिगरेट का कश खींचा।

"सुनो," उसने प्रकटतः कुछ हिचकिचाहट के साथ कहना शुरू किया।

चिमटी से सुधारी हुई अपनी भवें उठाये हुए पुस्या उसके बात की प्रतीक्षा करने लगी।

"क्या तुम ज़रा अपनी उस बहन से जाकर बात नहीं कर सकतीं, क्यों?"

अचानक ही वह इस तरह मुड़ी कि पानी फ़र्श पर उछल पड़ा। ऐन उसी वक्त बाल्टी लिये फ़ेडोसिया अन्दर आई।

"तुम यहीं मत हर वक्त लटकी रहा करो," एकदम क्रोधित होकर उसने कहा।

उस स्त्री ने अपने कन्धे उचका दिये। वह उठा और उसके जाते ही दरवाज़े में अन्दर से चाबी लगा दी।

"अपनी बहन से—बात?"

"हाँ, तुमने सुन तो लिया जो मैंने कहा!" वह आवेश में था।

"मगर मैं क्यों करूँ उससे बात?" अपनी बड़ी-बड़ी गोल-गोल आँखें उसने फैला दीं और एक बीमार बँदरिया की-सी अपनी सामान्य मुद्रा बनाकर सिर कन्धे पर एक तरफ़ को झुका दिया।

"तुम्हें मेरी इतनी मदद करनी ही है। हाँ, मेरी मदद। इसमें कोई वैसी बात तो नहीं, कि है कोई? तुम्हें उस मास्टरनी से बात ज़रूर कर लेनी है। देखो न, बहुत-सी बातें हैं जो मैं मालूम करना चाहता हूँ और वे उसको पता हैं।"

यंत्रवत् पुस्या ने स्पंज को पानी में डुबोया और उसका पानी निचोड़ने लगी।

"वह मुझे कुछ नहीं बतायेगी..."

"ख़ैर, मगर यह काम तो तुम्हारा होगा कि उससे इस ढङ्ग से बातें करो कि वह तुमसे कुछ बोले...उसको समझा दो यह, कि इस तरह से खिलवाड़ करने का बहुत बुरा नतीजा होगा ; अब तक तो मैं टालता रहा हूँ, लेकिन जब मेरे सब्र की हद हो जायगी..."

"कैसा खिलवाड़ ?"

"ओह, कैसी बेवक़ूफ़ हो तुम !" उसके मुँह से निकल पड़ा।

पुस्या को बुरा लग गया, मुँह बनाकर वह अपने पाँवों पर ज़ोर ज़ोर से साबुन मलने लगी।

"उसको यह समझा दो कि अगर वह हम लोगों के साथ मिलकर काम करेगी तो यह उसके लिए अच्छा होगा। आख़िर वह इतनी बेवकूफ तो न होगी कि अब भी उसे रूसियों के वापिस लौटने की उम्मीद हो, या होगी ?"

पुस्या ने उत्तर नहीं दिया, और अब उसने देखा कि उसके चेहरे पर नाराज़गी का भाव है।

"आख़िर किस बात पर कुढ़ गईं ?"

"मैं तो बेवकूफ हूँ, मैं कैसे उसको कोई बात समझा सकती हूँ ?"

"बुरा मान गईं ? देखो, सुनो, मैं असल में थका हुआ हूँ। आज का सारा दिन बड़े भारी कामों में बीता है। रूठो नहीं, पागल न बनो। उससे जाकर बात करोगी, करोगी न तुम ?"

"वह मुझसे बात ही नहीं करना चाहेगी।"

"क्यों ?"

उसने एक बार उसकी ओर देखा और कन्धे उचका दिये।

"क्या तुम अपने आप नहीं देखते कि यहाँ कोई मुझसे बात नहीं करता, जैसे कि मैं कोढ़िन हूँ।...तुम्हारे लिए तो सब बराबर है, मुझे यहाँ अकेले हर रोज़ छोड़ जाते हो..."

"अभी तक वही राग अलाप रही हो...छोड़ो उसे, मैं एक ज़रूरी बात तुमसे कह रहा हूँ इस समय।"

उसके माथे पर दबे हुए क्रोध की सलवटें देखकर पुस्या सहम गई।

"ओह, अच्छी बात है। लेकिन किस बारे में मैं उससे बात करूँगी ?"

एक नज़र दरवाज़े की तरफ़ कप्तान ने देखा।

"हमें ख़बर मिली है कि छापेमारों से उसका सम्बन्ध है। उसको यह भेद हमसे बताना है कि वे लोग कहाँ छिपे रहते हैं, समझीं।..."

"वह मुझे नहीं बतायेगी!"

"तुम पहले ही से क्यों तय किये लेती हो कि वह नहीं बतायेगी। अगर तुम काफ़ी होशियारी से काम लोगी तो वह बात करेगी।"

पानी ठण्डा होता जा रहा था। पुस्या ने धीरे-धीरे अच्छी तरह अपना बदन पोंछा। फिर उसने हाथ ऊँचा करके कुर्सी पर से अपने रात के कपड़े उठाये। मुलायम रेशम का स्पर्श उसे बड़ा सुखकर लग रहा था। रात का वह वस्त्र कुछ पीलापन-सा लिये हुए हलके नीले रंग का था, जिस पर हाथ का कशीदा कढ़ा हुआ था। वर्नर उसको फ्रांस से लाया था, लेकिन रास्ते में उसे अपनी पत्नी को देने का समय नहीं मिला था, अस्तु अब पुस्या उसे पहन रही थी। उसके जिस्म पर उसकी रेशमी तहें चारों तरफ़ झूलती थीं और उसका स्पर्श उसे ऐसा लगता था, जैसे कोई प्यार के हाथ फेर रहा हो। स्नान करने के बाद उसे कुछ थकावट-सी आ गई थी और वह अब सोना चाहती थी।

"कपड़े क्यों नहीं उतार देते ?" उसने माख के साथ कहा।

"मेरे पास इस वक्त सोने के लिए समय नहीं है...इधर देखो, छापेमारों वाली बात ध्यान में रखना। मुझे ज़रूर-ज़रूर मालूम हो जाना चाहिए..."

पुस्या आकर उसके बराबर में बैठ गई और अपने गाल उसके फ़ौजी कोट पर रखकर दबाने लगी।

अधीर होकर वह अलग हट गया।

"सचमुच, तुमसे कोई भी काम की बात करना असम्भव है।"

"रात का वक्त कोई बातें करने के लिए नहीं होता," उसने होंठ बिचकाते हुए और अपने बालों को कान के पीछे करते हुए कहा। लेकिन यह देखकर कि वह नाराज़ हुआ जा रहा है, वह जल्दी से कह उठी, "अच्छी बात है, फिर, लेकिन कैसे तुम्हें पता लगा कि उसे कुछ मालूम है ?"

"मुझे पता है, तुम इसके लिए चिन्ता मत करो। इस बारे में तो तुम्हारा

चिन्ता न करना ही अच्छा। उससे तुम कह सकती हो कि मुझे सब कुछ पता है; अगर वह कुछ बात नहीं करती तो मैं उसे गिरफ़्तार करा दूँगा।"

"ऊ-ऊ-ह!"

"तुम क्या सोचती हो, चूँकि वह तुम्हारी बहन है, इसलिए वह हमारे ख़िलाफ़ यहाँ काम करती रह सकती है, और हम लोग योंही इत्मीनान से देखते रहेंगे?"

पुस्या ने अपने सिर को एक झटका दिया।

"मेरे लिए सब एक है। तुम चाहो गिरफ़्तार करा दो। मुझे उससे क्या? मैं उससे बात कर सकती हूँ, बेशक, मगर वह मुझे अपने दरवाज़े के अन्दर घुसने तक नहीं देगी, देख लेना।"

"कुछ भी हो, तुम कोशिश तो कर ही सकती हो।"

"मैं कोशिश करूँगी," उसको सन्तोष-सा देते हुए उसने कहा; वह सोच रही थी कि जो भी हो, यह तो कल की बात है और यह कोई समय कुर्ट से झगड़ने का नहीं।

"बिस्तर में आ जाओ..."

वह उठा और उसे भरे हुए टब की टक्कर लगी।

"कहाँ गई वह औरत? और तुम भी तो रसोई-घर में नहा सकती थीं।"

"उस रसोई-घर में? उसके कमरे में?" पुस्या अरुचि के भाव से सिहर उठी।

वर्नर ने हाथ के इशारे से बताया। अपने होंठ कसकर भींचे हुए फ़ेडोसिया बाल्टियाँ बाहर ले गई, टब को झटके के साथ खींचकर बाहर किया और गीले फ़र्श को कपड़े से पोंछ दिया। पुस्या जो इस समय बिस्तर में थी, इत्मीनान से उसको देखती रही। क्या वह कह दे वास्या के बारे में इस समय? नहीं; बुढ़िया को अभी ज़रा और इसकी यातना सहने दो, प्रतीक्षा करने दो। मौक़ा तो हमेशा ही रहेगा...

× × × ×

द्वार बन्द हो गया। वर्नर ने अपना चुस्त कोट उतारा। ढीला करके उसने बूट-जूतों को फ़र्श पर डाला। और उनकी खड़बड़ हुई, लाइट बुझ

गई। फ़ेडोसिया ने टब से डुबोकर पानी भरा और बाल्टियों को ख़ाली करने बाहर चली गई। हवा का एक झोंका उसके मुँह पर लगा। सन्तरी ने मुड़कर देखा, लेकिन उसके हाथ में बाल्टियाँ देखकर कुछ नहीं बोला। वह घर के पीछे को घूमकर गई और बाड़े के पीछे कूड़े के ढेर पर पहुँची। उसने जैसे ही पानी उँड़ेलकर फेंका, एक मर्म-स्पर्शी मद्धिम-सा स्वर उसके कानों में पड़ा।

'माँ !'

वह चौंक पड़ी और बाल्टियाँ उसके हाथ से छुट गईं। बर्फ़ के कारण रात कम गहरी लग रही थी, और वहाँ बाड़े के पीछे उसने उड़ती हुई बर्फ़ की सफ़ेद पृष्ठ-भूमि में एक आकृति देखी। एक परिचित टोपी। उसकी साँस अन्दर की अन्दर, बाहर की बाहर रह गई।

'उधर कौन है ?' दबे स्वर में उसने पूछा। यद्यपि वह पहले ही समझ गई थी। एक हल्की-सी आह करके, वह घुटनों के बल बैठ गई, उसने अपने हाथ फैलाये और ओवरकोट के खुरदुरे कपड़े को छुआ, उसकी पेटी के चमड़े को छूआ। लाल तारा साफ़ दिखाई दे रहा था, उसकी खाकी नीली-सी फ़र की टोपी पर। हिचकी से उसका गला भर आया। लाल सैनिक सशंक और सतर्क हो उठा।

'क्या बात है, तुम्हें क्या तकलीफ़ है ?'

'यह तुम हो . तुम हो...तुम...' उसे लगा मानो वह सपने में बोल रही है, मानो वह सपना देख रही है। खुशी के मारे उसका हृदय ज़ोर-जोर से उछल रहा था।

'तुम हो यह...तुम...'

वह आगे को झुका और कंधा पकड़कर आहिस्ता से उसे हिलाया। बर्फ़ की हलकी चमक से जो धुँधला प्रकाश आ रहा था, उसमें उसके आँसुओं से गीले चेहरे पर उसने मुस्कान की आभा देखी।

'क्या तकलीफ़ है ?'

'कुछ नहीं, कुछ नहीं...' अत्यधिक प्रयास से उसने अपने भावों पर

विजय पाने की कोशिश की। सहसा उसे संतरी की याद आ गई। उसने लाल सैनिक की बाहें थाम लीं।

'मेरे घर में जर्मन हैं! गाँव के अंदर जर्मन हैं।'

'मुझे मालूम है। मैं तुमसे कुछ बात करना चाहता हूँ, मा। क्या तुम यहीं रहती हो?'

'बिलकुल इसी गाँव की तो हूँ मैं...'

'मैं चाहता हूँ तुम मुझे यहाँ की सब कैफ़ियत बताओ। कौन-क्या-क्या...'

'सुनो, बेटे, मेरे घर के आगे एक संतरी खड़ा है, और अगर मैं ज़्यादा देर के लिए बाहर रह गई, तो वह मेरी टोह लेने लगेगा। तुम एक क्षण ज़रा ठहरो। मैं दौड़कर घर जाती हूँ—एक दूसरा रास्ता है, जिससे मैं बाहर आ सकती हूँ: एक-दम मैं सीधी यहीं आऊँगी। अच्छा हो तुम ज़रा पीछे को चले जाओ, बाड़े के उधर, टपरी के अंदर, वहाँ पयाल पड़ा है और हवा इतनी तेज़ भी नहीं है।'

सहसा वह शंकित हो उठा और उसकी तरफ़ बड़े ध्यान से देखने लगा। वह समझ गई।

'क्या बात है, बेटे? घबराओ नहीं, मैं इसी गाँव की हूँ, यहीं के सामूहिक खेतों की...मेरा एक बेटा, एक लाल सैनिक उस तरफ़ नाले में मरा हुआ पड़ा है...वह एक महीने से वहाँ पड़ा है, वे लोग उसे दफ़नाने नहीं देते, सूअर कहीं के...उसके कपड़े-लत्ते उतारकर वहीं उसे नंगा छोड़ गये हैं...'

उसके शब्दों से उतना नहीं, बल्कि जिस लहजे से वह बोली थी उससे नौजवान को इतना पक्का विश्वास हो गया कि अपने ऊपर उसे शर्म आने लगी।

'तुम स्वयं जानती हो, मा, सब तरह के लोग होते हैं...'

'तुम उधर जाओ, मैं अभी वापिस आती हूँ...'

काँपते हाथों से उसने बाल्टियाँ उठाईं और लौटकर घर में आई। संतरी के पास से गुज़रते हुए वह मुश्किल से अपनी भरी हँसी रोक सकी। मुस्तैदी से टहले जाओ इधर से उधर, उधर से इधर। अपने जूतों से ज़मीन

को पीटे जाओ। हमारे आदमी तो गाँव में दाख़िल भी हो गये। बाड़े के उस तरफ़ लाल सैनिक मौजूद हैं और तुम्हें कुछ ख़बर नहीं, तुम इस अफ़सर की रखेल की, अपने अफ़सर के शयनागार की, पहरेदारी कर रहे हो... ख़ूब होशियारी से पहरा दो, तुम्हारा जल्दी ही ख़ात्मा होनेवाला है...'

बाहरी कमरे का बड़ा दरवाज़ा उसने बहुत होशियारी से बंद किया और रसोई में से बेंच को खींचकर आहट की, ताकि ऐसा मालूम हो कि वह अब सोने का उपक्रम कर रही है। सोने के कमरे से जर्मन के खुर्राटे उसके कान में आ रहे थे। ऊपर छोटे-से टाँड में एक अलग से जमाया हुआ तख्ता था। उस तख्ते को उसने हटाया, उस रास्ते से रेंगकर वह बाहर निकली और बहुत सँभलकर मकान के एक कोने की तरफ़ नीचे को लटक गई। उसका नीचा दामन चलने में बाधा पहुँचा रहा था। कैसा अजीब था यह, उसने सोचा, उस जैसी बुड्ढी औरत के लिए, एक बिलौटे की तरह चढ़ते-उतरते फिरना और मन ही मन उसे अपने ऊपर हँसी आ गई।

फूस की छत में हवा से खड़का हो रहा था। अस्तु, घर के दूसरी तरफ़ से संतरी कुछ भी नहीं सुन सकता था। जब वह ज़मीन पर झुककर बैठी और एक-दो सेकेंड रुककर आहट लेने लगी तो उसका हृदय पागल-सा होकर ज़ोर से धक्-धक् करने लगा। न, यह बात तो उसकी खोपड़ी में कभी नहीं आ सकती थी कि घर के पीछे भी कुछ हो रहा है। पीछे की अरक्षित दीवार की तरफ़ का मैदान ख़ाली पड़ा था और वह सामने की खिड़कियों के आगे टहल रहा था। इधर से ही वह घर के अंदर दाख़िल भी हो सकती थी। एकाएक उसके मन में ये उल्लासपूर्ण विचार घूम गये।

बिल्ली की तरह दबे-पाँव घूमकर बाड़े के उधर गई और फिर एकाएक जैसे वहीं जमकर रह गई—वहाँ कोई भी नहीं था। बाड़ा ख़ाली था। तो क्या यह सपना ही था, पागलों की-सी मृग-तृष्णा जो प्रतीक्षा और यातना के फलस्वरूप उसकी आँखों के आगे झलक उठी थी? नहीं, यह हो नहीं सकता था, मुमकिन नहीं हो सकता था।

"कहाँ हो तुम?" उसने सतर्क होकर बहुत धीरे से पूछा।

पयाल हिली और फेडोसिया का चेहरा खिल उठा। निश्चय ही वह यहीं

था, और अकेला भी नहीं। तीन थे वे, तीन !—और दोनों को देखते ही मगन होकर उसने मन में सोचा। बाड़े के दरवाज़े के पास ही वे उकड़ूँ बैठ गये और फेडोसिया भी उन्हीं के पास बैठ गई।

'कितना हमने तुम्हारा इंतज़ार किया है। दिन-रात हम तुम्हारी बाट देखते रहे हैं।' फ़ौजी ओवरकोट की एक बाँह पर हाथ फेरते हुए धीरे-धीरे वह बोली। 'और फिर आह, आज मैं यह दिन देखने के लिए ज़िंदा भी रही, यह देखने जो ज़िंदा भी रही...'

'बिलकुल ठीक है अब, मा, लेकिन हमें ज़रूरी बातें तो पहले ख़त्म कर लेनी हैं।'

'अच्छा तो फिर, पूछो...लेकिन तुम्हें भूख तो नहीं लगी हुई है?' उसने सहसा पूछा।

लाल सैनिक मुस्कराये।

'नहीं, धन्यवाद, हम यहाँ भोजन करने नहीं आये हैं।'

'अच्छा तो पूछो मुझसे जो कुछ तुम जानना चाहते हो।'

'तुम इसी गाँव की हो?'

'और क्या, यहीं की तो हूँ ही, और कहाँ की होती?' आश्चर्य फेडोसिया ने उत्तर दिया। 'यहीं मेरा जनम हुआ, यहीं मेरा घर-बार...'

'कुछ बातें हम जानना चाहते हैं...जर्मनों के क्वार्टर किस तरफ़ हैं? उनके पास यहाँ क्या-क्या सामान हैं?'

बड़ी उत्सुकता से अपने हाथ बाँधकर उसने पूछाः

'हमारे सैनिक गाँव में आयेंगे?'

'आएँगे वे ज़रूर...पहले हम सिर्फ़ यह मालूम कर लेना चाहते हैं कि कहाँ पर क्या है।'

'अच्छी बात...' उसने अपने हाथ घुटनों पर रख लिये।' बड़ा-सा गाँव है हमारा—तीन सौ घर। दो सड़कें यहाँ मिलती हैं, और जहाँ उनका चौराहा है, वहाँ पर एक मैदान है। कभी वहाँ पहले एक गिरजा था, लेकिन अब तो उसके सिर्फ खँड़हर रह गये हैं।'

'ज़रा एक मिनट, मा।'

उन्होंने एक नक्शा निकाला, और उस पर टार्च की रोशनी डालते हुए अपने ओवरकोट से उसको चारों तरफ़ से ढक लिया और उस पर झुक गये।

'यह रहा...ठीक, चौराहा, बीच में चौराहे का मैदान...'

'अपनी तोपें उन लोगों ने इसी चौराहे पर गिरजे के पास लगा रखी हैं।'

'क्या बहुत-सी तोपें हैं?'

फेडोसिया कुछ देर तक सोचती रही।

'रुको...एक, दो,...तीन...हाँ, ठीक— चार हैं! गिरजे के दाहिनी तरफ़ एक बड़ा-सा मकान है। वह ग्राम-सोवियत् था पहले, अब उसी में इन लोगों का सदर-दफ़्तर है...और उसी में हवालात भी है; उसमें, इस समय, हमारे पाँच जमानती क़ैद हैं...'

'और कहाँ-कहाँ हैं जर्मन लोग?'

'वे लोग चौराहे के पास, तुम समझ लो कि हरेक घर में हैं। गाँव के इस छोर पर तो, जहाँ मेरा मकान है, इतने ज़्यादा नहीं; फिर भी थोड़े से इस तरफ़ भी हैं। गाँव से निकलने पर जो नीबू के पेड़ मिलते हैं, वहाँ उनकी आड़ में और बहुत-सी तोपें छिपी हुई हैं। लेकिन वे और तरह की हैं, कुछ छोटी हैं।'

'हवाई जहाज गिरानेवाली?'

'हो सकता है, कौन जाने?...उनके मुँह सीधे ऊपर को उठे हुए हैं, लंबे-लंबे-से, पतले मुँह...'

'अच्छा समझ गया। और तुमने मशीनगनें भी कहीं देखी हैं?'

'हाँ क्यों नहीं। मशीनगनें भी हैं। वे सब गाँव के दूसरे किनारे की तरफ़ हैं...यहाँ से सीधे जाकर, फिर बाईं तरफ़। उस तरफ़ के घरों की दीवारों में उन्होंने सूराख बना रखे हैं, और हर सूराख़ के पीछे मशीनगन रखी है।'

लाल सैनिक नक्शे पर झुका, उस पर कई गोल और काट के निशान बनाये।

'उन घरों में से उन्होंने लोगों को बाहर खदेड़ दिया है और उनमें ख़ुद रहते हैं। देखें तो, उनमें से कितने लोग वहाँ होंगे। एक...तीन...हाँ, पांच घर...फिर एक और मकान है, यहाँ से चौराहे के रास्ते में जाते हुए...'

'क्या बहुत-से जर्मन हैं?'

'कह नहीं सकती ...वे बराबर आते-जाते रहते हैं, एक उनका वह कप्तान ही यहाँ से नहीं टलता, बस यहीं धरा रहता है...सुनते हैं वे क़रीब दो सौ के हैं।'

'संतरी बहुत-से हैं ?'

'अरे वे तो योंही खड़े रहते हैं इधर-उधर, जैसे वह मेरे दरवाज़े के बाहर खड़ा है। उनकी कोई बड़ी ताक़त नहीं—रात के वक्त डर से तो उनकी जान निकलती है; इतनी-सी दूर भी जाने की उनकी हिम्मत नहीं होती कि जिसे कहा जाय, और फिर निकलते हैं तो दो एक-साथ। दिन में उनकी हिम्मत खुल जाती है, लेकिन रात को उनकी हिम्मत नहीं पड़ती; हालाँकि यह हुक्म निकला हुआ है कि अँधेरा होने पर हममें से कोई बाहर नहीं निकल सकता। अगर किसी को देख भी पायें तो उससे कोई सवाल-जवाब नहीं करते, बस शूट कर देते हैं...'

'सड़क पर कोई पुल पड़ते हैं ?'

'पुल ? नहीं, बिलकुल सीधी-सादी सड़क है...'

'जंगल ?'

'आसपास तो कोई जंगल नहीं। बाग़ीचों के पेड़ हैं, बस, और इन सूअरों ने उनमें से भी जलाने के लिए बहुत से काट डाले हैं। गर्मी उन्हें अच्छी लगती है। चौराहे के उस तरफ़ सड़क के किनारे-किनारे अब भी कुछ नीबू के पेड़ हैं। लेकिन और कहीं जंगल-झाड़ी नहीं, मीलों तक बस खुले हुए मैदान ही मैदान हैं। नाले में झाड़ियाँ हैं, और कुछ नहीं। हमें ईंधन की बड़ी तकलीफ़ है। हम लोग कंडे जलाते हैं।'

कुछ घबराहट के साथ उसने चारों तरफ़ देखा।

'क्या बात है ?'

'मैं ज़रा एक नज़र देख आऊँ, कहीं उस संतरी को यह देखने की न सूझ गई हो कि पीछे अँगनारे में क्या हो रहा है।' वह चुपके से बाहर गई और खड़ी होकर आहट लेने लगी। आँधी निराशा की कराह लिये हुए चल रही थी और छत पर फूँस को खड़खड़ा रही थी। जब वह ज़रा क्षण भर के लिए मद्धिम पड़ी तो वह घर के आगे संतरी के जमकर उठते हुए

भारी क़दम और उसके नीचे बर्फ़ के कचरने की आवाज़ सुन सकती थी। फेडोसिया लौटकर बाड़े में वापस आई।

'सब ठीक है, वह अब भी उधर ही गश्त लगा रहा है...'

लाल सैनिक ने नकशा तह कर लिया।

'अच्छा, अब हमें चल देना चाहिए। धन्यवाद, मा।'

'मुझे धन्यवाद देने की इसमें क्या बात? मेरा वास्या भी तो लाल सेना में था। उसे यहीं मार डाला उन्होंने, बिलकुल गाँव के पास...'

टार्च की रोशनी बन्द हो गई।

'कब तक तुम्हारे आने की हम उम्मीद बाँधे?'

'यह तो, एकदम अभी नहीं कह सकते...कमांडर क्या तय करते हैं, यह उसी पर निर्भर है और इस पर कि आया हम लोग कामयाबी से इस काम को कर ले जायँगे...'

'कामयाबी से क्यों नहीं कर ले जाएँगे! बस अब जल्दी ही करो, ऐन समय आ गया...पूरे महीने भर तक हम लोग इन्तज़ार करते रहे हैं... तुम्हारा रास्ता देखते-देखते आँखें अंधी हो गई हैं।'

'यह इतना आसान नहीं है, मा।'

'मैं जानती हूँ, यह इतना आसान नहीं है, लेकिन यहाँ हमारे लिए भी तो अब और अधिक खींचना आसान नहीं रह गया...अपनी भरसक कोशिश करो, जवानो, अच्छी तरह से उसके लिए डट जाओ...'

अचानक एक विचार उसके मन में उठा।

'एक मिनट और ठहरो? एक बात और है...'

'वह क्या?'

'इन लोगों का अफ़सर—एक तरह का कमांडर है—वह मेरे ही घर में है...आस-पास इधर कोई नहीं, बस वह संतरी ही है बाहर, वह अफ़सर लकड़ी के कुन्दे की तरह बेख़बर अपनी लौंडिया-रखैल के साथ सो रहा है। संतरी को तुम मार ही सकते हो। नहीं, मैं तुम्हें चुपचाप छत के रास्ते से अंदर पहुँचा सकती हूँ। जाकर तुम उसे चूहेदानी में फँसे हुए चूहे की तरह पकड़ सकते हो।'

सबसे छोटे लाल सैनिक की आँखें चमकने लगीं।

'क्या कहते हो, जवानो...'

'सब्र करो, एक मिनट, इस पर विचार करने की ज़रूरत है...उस पाजी को। चुटकी बजाते का काम है।'

"ओह, हाँ ? ऐसे तुर्ती-फुर्ती काम करने हमेशा आसान होते हैं ! तुम ख़त्म कर देते हो उसको, और उसके बाद ? सुबह को एक तूफ़ान खड़ा हो जाता है, वे लोग सदर दफ़्तर को इत्तला दे देते हैं और फिर वे लोग इतनी फौजें यहाँ भेज देते हैं कि हम अपना एक काम भी नहीं बना सकते...'

'हाँ, बेशक, इसमें कुछ तुक है...'

'हमारी स्काउटिंग का यह बड़ा अच्छा नतीजा होगा ! ऐन इस समय ये लोग मज़े में यहाँ पड़े हुए हैं, शांति के साथ। ख़ुद ईसामसीह का उन पर साया है। तुम ख़ुद ही अपनी आँखों से देख सकते हो कि कप्तान के घर के आगे सिर्फ़ एक संतरी पहरा दे रहा है। अगर तुम ज़रा-सा उन्हें डरा देते हो तो सब गड़बड़ हो जाता है।'

'लेकिन उस 'जैरी' को खींचकर बाहर लाने की मेरी कितनी ख़्वाहिश थी...'

'अभी सब्र करो। फिर दूसरे मौक़े पर। और अब तो, बस घर को वापिस !'

'और यह घर तुम्हारा कहाँ है ?' उत्सुकता से फेडोसिया ने पूछा।

'यह तो हमारे बात करने का एक तरीक़ा है, मा। हमारे घर बहुत दूर हैं। लेकिन लड़ाई के ज़माने में घर वहीं है जहाँ हमारे फ़ौज की टुकड़ी है। बस अब तुम हमें यह बता दो कि यहाँ से कैसे बाहर निकला जाय ; यहाँ आते वक्त तो हम लोग बर्फ़ में क़रीब-क़रीब बिलकुल धँस ही गये थे...'

'मैं बताती हूँ तुम्हें—इधर से, सीधे उतरते हुए नाले की तरफ़ जाओ, और सारे रास्ते नदी के बराबर चले जाओ। हाँ, उस तरफ़ हमारे नौजवान बेकफ़न पड़े हुए हैं; सो देख-भालकर जाना। नदी तुम्हें उस मैदान में ले आयेगी, जहाँ से तुम्हें ओख़ाबी और ज़ेलेंट्सी दिखाई पड़ेंगे। मगर हाँ, जर्मन लोग वहाँ भी हैं।'

'वह हम जानते हैं। ख़ास बात यह है कि यहाँ पर किसी से मुठभेड़ न हो।'

'इसकी फ़िक्र करने की ज़रूरत नहीं। इस तरफ़ एक ही संतरी है, जो मेरे घर के बाहर तैनात है; और कोई नहीं। चुपचाप चले जाओ और जब आँधी का ज़ोर कुछ कम हो, तब रुक जाना, नहीं तो वह तुम्हारे पावों के नीचे बर्फ़ के कुड़कुड़ाने की आवाज़ सुन लेगा।'

तीन झुकी हुई छायाएँ उसके पीछे-पीछे चल रही थीं और जब वह रुकती थी, तो वे भी रुक जाती थीं।

'वह नाला है, उधर; सीधे नीचे उतरते चले जाओ; बस इतना ध्यान रखना कि वहाँ पावँ फिसलता है।'

'प्रणाम, मा। सब तकलीफ़ों के लिए धन्यवाद। तुम्हारा हृदय बहुत पक्का है।'

'सौभाग्य तुम्हारा साथ दे, जवानो। बस, हाँ, जल्दी लौटना; जल्दी करना लौटने की...'

'हम लोग अपनी जान एक कर देंगे, इसका तुम भरोसा रखो। और अब तुम घर जाओ, अच्छा? यहाँ बेहद ठंड है।'

'कोई बात नहीं। इसकी तो मैं आदी हूँ।'

फ़ेडोसिया नाले के किनारे पर खड़ी हुई नीचे की तरफ़ देख रही थी। वे बहुत जल्दी-जल्दी चले जा रहे थे, और बर्फ़ की सफ़ेद पृष्ठभूमि पर उनकी सफ़ेद वर्दी के आकारों को पहचानना कठिन से कठिनतर होता गया। आख़िरकार वे अन्धकार में अस्पष्ट हो गये, रात के अँधेरे में विलीन हो गये, उस तुमुलनाद करते बर्फ़ीले तूफ़ान में समा गये जो पृथ्वी पर प्रबल वेग से उठ खड़ा हुआ था। वे पूर्णतः इस प्रकार अदृश्य हो गये मानो वे यहाँ कभी आये ही नहीं थे। फ़ेडोसिया घर की ओर मुड़ी। वह धीरे-धीरे रुक-रुककर चल रही थी। वह ऐसा अनुभव कर रही थी, मानो एक ही मिनट पहले वह बंदीगृह से मुक्त की गई थी, मानों एक मिनट को उसने छाती भर मुक्ति की साँस ली थी, और अब फिर स्वयं अपनी इच्छा से वापिस आकर अपनी बेड़ियाँ पहनने जा रही है। घृणा की आँखों से उसने अपने घर के उस काले

आकार को देखा, जिसके अंदर वह जर्मन अपनी रखैल को साथ लिये सो रहा था, जहाँ जाकर उसे उसके घृण्य खुर्राटों को मजबूरन सुनना पड़ेगा।

हाँ, वह अब भी खुर्राटे ले रहा था, उसकी नाक से सीटी की-सी आवाज़ निकल रही थी; उधर वह, उसकी औरत, अपनी नींद में कुछ बड़बड़ा रही थी। बदले की भावना से आनन्द-मग्न होकर फेडोसिया निर्ममता से मुस्कराई; जल्द ही अब तुम्हारा अन्त होगा। लाल सैनिक आ रहे हैं; वे सीधे तुम्हारे सोने के कमरे में पहुँचेंगे और मुलायम पंखोंवाले बिस्तर पर से तुम्हें खींचकर नीचे उतारेंगे।

क्या वह उनकी आवाज़ सुन भी लेगी, जब वे चुपके-चुपके आयेंगे, या जब वे घर के अन्दर आ जायँगे तभी उसकी आँख खुलेगी? नहीं, उसको पूरा विश्वास था कि उस समय वह सो नहीं जायगी, कि जब तक वे लोग आ नहीं जायँगे, और गाँव आज़ाद नहीं हो जायगा उसके लिए नींद का प्रश्न ही नहीं होगा।

संतरी के बूटों के नीचे बर्फ़ कचर-मचर कर रही थी, और वर्नर नाक से सीटी बजा रहा था। सब कुछ वैसा ही था जैसे कल के दिन या परसों के दिन था। और फिर भी हर चीज़ बिलकुल बदल गई थी। जब से वास्या मर गया था, तब से आज पहली बार, उस सारे महीने में पहली बार, उसके हृदय में आनन्द की लहर उठी थी, ऐसे आनन्द की, जिसमें लपटें थीं, जो प्रकाश देता था, गर्माई पहुँचाता था, शोले फेंकता हुआ ऊपर उठ रहा था। फेडोसिया ने ज़ोर से अपना मुँह हाथों से दबा लिया कि कहीं वह दुनिया भर के कानों को सुनाने के लिए अपने अन्तर के इस महान आनन्द की घोषणा न कर दे। एक वही केवल इसके बारे में जानती थी, और गाँव भर में कोई नहीं जानता था। केवल वही जानती थी कि उन्हें प्रतीक्षा करने की अब ज़रूरत नहीं, जैसे कि वह अब तक करते रहे थे, आशा और विश्वास के साथ—मगर उन्हें कुछ अटकल नहीं थी कि इसी तरह कब तक और इंतज़ार करना होगा। अब वह हिसाब लगाकर बता सकती थी, कितना समय और लगेगा, आज का दिन, कल, और परसों? अपनी फौजी टुकड़ी तक पहुँचने में उन्हें कितना समय लगेगा? और उनकी फ़ौजी टुकड़ी को यहाँ तक आने

में कितना समय लगेगा ? एक दिन, दो दिन, तीन ? वह जानती थी, वह महसूस कर रही थी कि तीन दिन से अधिक नहीं लग सकते। यह निश्चित था। ऐसी क्रूर, ऐसी विचार में न आनेवाली घटना, कि उन पाँच ज़मानतियों की मृत्यु हो जाय जो कमांडेंट के दफ़्तर में थे—ऐसी घटना कभी नहीं घट सकती थी।

वर्नर ने उन्हें तीन दिन दिये थे। एकाएक यह विचार उसके मन में आया कि इस तीन दिन की मीयाद से ज़मानतियों का कोई सम्बन्ध नहीं था। ये तीन दिन तो ऐसे थे कि इस अर्से में जर्मनों के लिए नरक का द्वार खुल जायगा। जर्मन लोग लाल सैनिकों के दृढ़ कठोर चेहरे को देखेंगे, स्वयं मौत की आँखों को देखेंगे।

गाँव में तीन सौ घर थे, और सिवाय उन घरों के जिनमें से जर्मनों ने असली रहनेवालों को निकालकर बाहर बर्फ़ में खदेड़ दिया था, हर घर में ऐसे लोग रहते थे, जो सब कुछ सह रहे थे और अपने आदमियों की प्रतीक्षा कर रहे थे, आँसू बहा रहे थे, उस अटल विश्वास के द्वारा अपने आपको सांत्वना दे रहे थे, जो इन जादू के शब्दों में व्यक्त होकर उन्हें शक्ति देता था; कि 'हमारी सेना आ रही है।' और गाँव में केवल वही निश्चित रूप से जानती थी—यही नहीं कि वे लोग आ रहे हैं—इसमें तो उसे कभी संदेह ही नहीं हुआ था—बल्कि यह कि वे अब रास्ते में ही हैं। वह जानती थी कि मौत का फैसला जर्मनों के लिए हो चुका था, और इस फैसले की अपील कहीं भी मुमकिन् नहीं थी! ओलेना इसे देखने को जीवित नहीं रही थी, लेकिन कमांडेंट के दफ़्तर में जो पाँच ज़मानती थे, वे देखेंगे, इसका उसे पूरा-पूरा विश्वास था।

× × ×

उस रात को गाँव का मुखिया देर तक कमांडेंट के दफ़्तर में बैठा काम करता रहा। सामूहिक खेतों के दस्तावेज़ों की सहायता से बड़े परिश्रम से वह हिसाब लगा रहा था कि प्रत्येक किसान को कितने अनाज की अदायगी करनी चाहिए। पसीने की बूँदें उसके माथे पर उभर उठी थीं और हिसाब में मिनट-मिनट पर उससे भूलें हो रही थीं। तेल का दीया धूँआ दे रहा

था। अपनी भारी नींद-भरी आँखों से सैनिक मेज़ पर काम करते उन दोनों को देख रहे थे।

गाप्लिक हिसाब लगाता, जोड़ता, गुणा करता, ग़लती पर ग़लती करता जा रहा था, जिपर फ़ेल्डवाबेल उसे तानों के डंक मारता जा रहा था।

गाप्लिक ने ध्यान जमाने की कोशिश की, लेकिन असफल रहा। वह इस विचार को दिल से नहीं निकाल सका कि यह तमाम हिसाब और सारा जोड़ बेकार साबित हो सकता है। यह एकदम संभव हो सकता है कि उनकी ज़रूरत न पड़े। काग़ज़ पर योजना तैयार करना तो आसान था, हिसाब लगाना तो सहज था; यह भी अपेक्षतः काफ़ी आसान था कि हरेक के हाथ में सही-सही हिसाब पकड़ा दिया जाय कि इतना अनाज उसे जर्मन सरकार को देना होगा। लेकिन इतना कर देने भर से ही काम नहीं चलता था। काग़ज़ी हिसाब से कप्तान की या सदर दफ़्तर की तसल्ली नहीं होगी जो अनाज की माँग कर रहे थे। वे अनाज भी माँगते थे और काग़ज़ पर उसका हिसाब भी। और गाप्लिक को पूरा संदेह था कि जर्मनों को कोई अनाज देगा भी या नहीं। और सब कुछ करने-धरने के बाद वही, गाप्लिक ही, इस सबका ज़िम्मेदार बनाकर पकड़ा जायगा। कप्तान साफ़-साफ़ उसे धमकी दे चुका था, और मुखिया जानता था कि कप्तान अपनी धमकी को किसी भी समय अमल में ला सकता था।

और न ही अब तक ज़मानतियों को हवालात में डालने की गाप्लिक की स्कीम से ही कोई निर्णयात्मक फल निकला था। हवालात में बंद, ताले के पीछे वे लोग पड़े थे, मगर न जाने क्यों, अभी तक कोई भी कमांडेंट के दफ्तर में उस मुलज़िम छोकरे का पता देने नहीं आया था। इसके लिए भी उसको ज़िम्मेदार ठहराया जायगा। यह कप्तान की ज़िम्मेदारी थी कि मुलज़िम का पता लगाये, उसे पकड़ मँगाये, ताकि सदर दफ्तर में उसकी योग्यता साबित हो। मगर सब इलज़ाम तो पड़ेंगे गाप्लिक के सिर।

'तुम उधर क्या किरम-काँटे-से खींच रहे हो?' फेल्डवाबेल ने क्रोध के स्वर में पूछा। 'तुमने यह पूरा ख़ाने का ख़ाना फिर गड़बड़ कर दिया है। अब हमें सारा हिसाब फिर से शुरू करना होगा। किधर है तुम्हारा ध्यान, क्यों?'

गाग्लिक कुछ मज़े में आकर मुस्कराया। किस बात की तरफ़ उसका ध्यान था? नहीं, फेल्डवाबेल को वह यह बात नहीं बता सकता था। वह काग़ज़ों पर और झुक गया, और और भी दत्त-चित्त होकर क़लम चलाने लगा।

आख़िरकार सब हिसाब पूरा हुआ। बाहर घुप-अँधेरा था। तेज़ हवा शोर करती हुई चल रही थी। धीरे-धीरे मुखिया ने अपनी भेड़ की खाल की जाकट के बटन लगाये।

'कोई मुझे घर तक पहुँचा आता', उसने आख़िर दबी ज़बान से कहा। उसके घर के आगे एक संतरी पहरा दे रहा था, लेकिन उसके रायफल की रक्षा प्राप्त करने से पहले उसे इस अँधेरी तूफ़ानी रात में काफ़ी फ़ासला तय करके जाना था। फेल्डवाबेल ने अपने कंधे उचका दिये।

'क्या हुआ है तुम्हें? क्या तुम अपने आप घर नहीं पहुँच सकते? मैं बिना कप्तान के हुक्म के कोई फ़ौजी सिपाही साथ में नहीं भेज सकता।'

'और आप?' गाग्लिक ने संकोच के साथ कहा।

'आख़िर तुम किस दुनिया की बात कर रहे हो? सदर दफ्तर से किसी भी मिनट टेलिफोन आ सकता है। और तुम मुझसे कहते हो कि अपनी ड्यूटी छोड़कर एक दायी की तरह तुम्हें घर पहुँचाने जाऊँ? और फिर तुम्हें डर काहे का है? कोई भी तो अपना सिर घर के बाहर निकालने की हिम्मत नहीं कर सकता रात में।'

मुखिया ने कोई उत्तर नहीं दिया, और चुपचाप दरवाज़े की तरफ़ खिसक गया। चौखट पर आकर ठिठका। प्रकाश छोड़कर बाहर आने पर अंधकार अभेद्य जान पड़ता था—ऐसा सघन और स्पृश्य जैसे कालिख। एक मिनट तक वह वहाँ खड़ा रहा, यहाँ तक कि उसकी दृष्टि उस अँधेरे की अभ्यस्त हो गई और वह सड़क के उस पार के पेड़ और छतों के आकार पहचानने लगा। अपनी जाकट का कालर उलटकर वह घर की तरफ़ रवाना हुआ। हाँ, वे उसके साथ एक कोढ़ी कुत्ते का-सा व्यवहार करते थे, कटुता से उसने सोचा। सभी को उस पर झल्लाने का अधिकार था, हरेक उस पर अपना ग़ुस्सा हलका कर सकता था, कप्तान, फेल्डवाबेल, और सैनिक, कोई हो, सब अपने को उससे ऊपर समझते थे, जब कि उसे हर वक्त घोड़े की

तरह जुतना पड़ता था, हर समय अपना जीवन संकट में डालना पड़ता था। उसने सशंक होकर चारों तरफ़ दृष्टि दौड़ाई।

हुक्म लगाना तो ठीक था, लेकिन इस मनहूस गाँव में कुछ भी हो जाना संभव था। फेल्डवावेल को ख़ुद तो बाहर निकलते भी डर लगता था। यह टेलीफ़ोन पर रहने का सवाल नहीं था, उसमें इतनी हिम्मत ही नहीं थी। फिर भी उसने उस क़ालिख-सी काली रात में गाप्लिक को बाहर कर दिया था जहाँ कि क़दम-क़दम पर उसके सामने ख़तरा था।

उसने दबे-दबे पाँव चलने की कोशिश की, ताकि गाँव के बीच में से बिना कुछ आवाज़ किये हुए निकल जाय, लेकिन बर्फ़ उसके पावँ के नीचे टूटती और कचर-मचर करती थी, और हवा को मानो उससे कोई दुश्मनी थी, लगातार कई क्षणों तक रुक जाती थी, जिससे कि बिलकुल सभव था कि सारा गाँव उसके पैरों की आवाज़ सुन रहा था। एकाएक उसे लगा कि सड़क के मोड़ पर कोई खड़ा है। उसके होश उड़ गये। वह जहाँ था वहीं जड़ हो गया। छाया हिल नहीं रही थी। गाप्लिक की जान निकली जा रही थी। मन ही मन कह रहा था कि देखो अब क्या हो।

बिजली की तरह उसके मन में यह विचार आया कि वह वापिस लौट सकता था और लौटकर रात दफ्तर में ही बिता सकता था। कमज़कम दिन निकलने तक वह वहीं बैठा रह सकता था। लेकिन अब पीठ फेरने से भी उसे डर लग रहा था—जो भी कोई वह होगा, सहसा उस पर कूद पड़ेगा।

जान की बाजी लगाकर, जी कड़ा करके वह आगे की ओर चल ही दिया और सड़क की मोड़ पर उसे मिली एक झाड़ी। कैसे वह उस झाड़ी को भूल सका। कितनी ही बार दिन में वह उसके पास से निकल चुका था।

लेकिन ठीक उसी समय गाप्लिक का पाँव फिसला और उसी क्षण, वह समझ गया कि एक भयानक घटना घट रही है। उसकी अन्दर की साँस अंदर और बाहर की बाहर रह गई। किसी चीज़ ने उसकी आँखों के आगे अँधेरा कर दिया, उसके मुँह को मींचकर बंद कर दिया, उसके सारे सिर को लपेट लिया। वह चिल्ला उठता, लेकिन एक भारी मुक्के ने उसे ज़मीन पर लिटा दिया। उसने महसूस किया कि कोई उसे उठा रहा है। बर्फ़ की

कचर-मचर और भारी-भारी साँसों की आवाज़ उसके कानों में आती रही। फिर एक दरवाज़ा आवाज़ करके खुला, उसको एक बोझे की तरह फ़र्श पर डाल दिया गया। उसने महसूस किया, किसी के हाथ उसके ऊपर हैं और वह समझ गया, उसे कसकर बाँधा जा रहा है। आख़िरकार उसके सिर पर लिपटा हुआ कपड़ा हटा दिया गया। उसने आँखें मिचमिचाईं। एक छोटा-सा दीया मकान के इस अन्दरूनी भाग को, और जो लोग वहाँ थे, उन पर प्रकाश डाल रहा था। उसने लँगड़े अलक्ज़ांडर को, फोज़िया ग्रोखाच के काफ़ी सँवलाये हुए चेहरे को पहचान लिया। उसका समस्त शरीर काँप रहा था, उसका गंजा सिर इस बेतरह हिल रहा था कि अपने शरीर की यह कँपकँपी उससे रोके नहीं रुकती थी।

'बैठ जाओ, अलेक्ज़ांडर,' एक नाटी-सी झुर्रियों से भरी हुई बुढ़िया ने, जिसे गाप्लिक ने पहले कभी नहीं देखा था, बोली, 'तुम लिखते जाओ, हमें सब ठीक-ठीक लिखकर रखना है, सब क़ायदे के साथ।'

वे मेज़ के पास बैठ गये। दीवार की टेक लगाकर गाप्लिक उसे निराश्रित-सा भयभीत होकर देखता रहा। मिट्टी के तेल के धुआँये लैम्प की लाल रोशनी नीचे से उनके चेहरों पर पड़ रही थी, जहाँ छायाएँ हिलती रहती थीं।

'और तुम सीधे खड़े हो! देख रहे हो कि इजलास के सामने हो!' एक हट्टी-कट्टी औरत ने ज़ोर से अपनी नाक साफ़ करते हुए कहा।

कुछ कठिनाई से वह अपने पैरों पर सीधा हुआ।

'इधर खड़ा हो, बे लंगूर! काँप किस लिए रहा है? आदमी की तरह खड़ा हो!'

'तुम बहुत ज़्यादा उम्मीद कर रही हो, उससे, टरपिलिखा!' फ्रोज़्या ने टिप्पणी कसी।

टरपिलिखा ने उसका कटाक्ष नहीं समझा।

'उसे ठीक तरह से खड़ा होना होगा। इजलास तो फिर इजलास है। इसे तो सड़क पर ही वहीं, ख़त्म कर दिया गया होता। लेकिन हम लोग बाक़ायदा उसको एक पेशी का मौक़ा दे रहे हैं। इसलिए उसे अदब के साथ खड़ा होना लाज़िम है।'

भय से गाप्लिक का ख़ून सूख गया। इस समय वहाँ, उस झोंपड़ी में वह खड़ा था कि जिसके वहाँ होने का उसे शान-गुमान भी नहीं था, जो कि सदर-दफ़्तर के बिलकुल बराबर ही में थी, उसी गाँव के अंदर, जिस पर जर्मनों ने पूरे महीने भर से क़ब्ज़ा कर रखा था। इन लोगों ने ख़ुद को एक इजलास की हैसियत दे दी थी और अब उसके मामले पर फ़ैसला देने जा रहे थे, उस गाँव के मुखिया पर, जिसे जर्मन कमांड ने यहाँ तैनात किया था। और यह कोई भयानक दुःस्वप्न नहीं था, एक वास्तविक कठोर सत्य था।

'अच्छा, तो अब बोल, तेरा नाम क्या है, चीलर ?' टरपिलिखा ने पूछा।

गाप्लिक चाहता था कि उत्तर दे, लेकिन आवाज़ उसके गले में ही घुटकर रह गई, और जो स्वर निकला भी वह एक अजीब रिरियाहट का स्वर था।

'रिरिया किस लिए रहा है ? बच्चा बन रहा है, या क्या ? ज़रा देखो इसे। बेवकूफ़ मत बन, सीधा-साधा जवाब दे। हमारे पास इतना वक्त नहीं कि जो भी ऐरा-गैरा नत्थू-खैरा यहाँ आये, उसके नख़रे उठायें। और तुम, अलेक्जांडर, तुम सब कुछ लिखते जाओ, एक-एक बात, रत्ती-रत्ती, लिखते जाओ। तो, अब, तुम्हारा नाम क्या है ?'

'लेकिन वह तो तुम ख़ुद ही जानती हो,' वह मोटी आवाज़ में बुड़बुड़ाया।

'मैं तुमसे यह नहीं पूछ रही हूँ कि तेरा नाम मैं जानती हूँ या नहीं, आस्तीन के साँप ! इजलास में इजलास की बात होती है और जब मैं तुझसे कुछ पूछती हूँ तो तुझे उसका जवाब देना है ! तेरा नाम क्या है !'

'गाप्लिक, प्योटर !'

'ज़रा ख्याल तो करो ? प्योटर ! प्योटर मेरे बाप का नाम था...अच्छा निकला तू जो एक अच्छे-भले इन्सान का नाम तुझे दिया जाय...'

'एक मिनट थम जाओ, दादी। मुझे इसको लिख लेने दो...'

'लिख लो, लिख लो, सब क़ायदे के साथ लिख लो...इसके बाद क्या आता है ? ओह—हाँ ! तेरी उम्र कितनी है ?'

'अड़तालिस।'

'अड़तालिस...कैसे उठाये रही यह दुनिया इस गंदगी के बोझ को अड़तालिस साल तक ? लिख लो इसको, लिख लो इसको, अलक्ज़ांडर।'

'मैं बहुत देर का लिख चुका। तुम सवाल करती रहो।'

'ओह-ओ...अब क्या रहा है ? हाँ—तू मुखिया है, ए ?'

'मुखिया', उदास स्वर में उसने सहमति दी।

'मुखिया। ज़रूर किसी पद पर तो पहुँचना ही चाहता था यह...और इससे पहले तू क्या था ?'

गाप्लिक चुप रहा। उसकी आँखें ज़मीन पर गड़ी रहीं।

'तू जवाब क्यों नहीं देता ? शर्म आ रही है, क्यों ? मैं सोच रही हूँ मुखिया से भी बड़ा कुछ तू ए ?'

इस बार भी उसने कुछ उत्तर नहीं दिया, बल्कि अपने जूते की नोक पर दृष्टि गड़ाये काठ बना खड़ा रहा।

'एह ! तुझी से बोल रही हूँ, तेरे जबड़े पर अभी एक लगाऊँ तो बड़ी जल्दी तेरी ज़बान खुल जायेगी। तो फिर बोल अब— !'

'ज़रा एक मिनट ठहरो, दादी। मुझे पूछने दो उससे—' बीच ही में अलेक्ज़ेंडर बोला।

दादी ने अपना मुँह आपत्ति प्रकट करने के रूप में खोला ही था कि फिर कुछ सोचकर चुप रह गई—बिना बोले, हाथ ही हिलाकर रह गई।

'अच्छा चलो, करो जिरह उससे। देखें, तुम कैसे इससे निबटते हो।'

ध्यान से मुखिया की ओर देखते हुए अस्तबलची अलेक्जांडर ने धीमे शांत स्वर में पूछा :

'तुम जेल में रहे हो, रहे हो न ?'

मुखिया ने अपनी दृष्टि बूट-जूतों पर से नहीं हटाई।

'क्या बहुत अर्से तक रहे थे ?'

'बहुत अर्से तक...'

'क़रीब कितने अर्से तक ?'

मौन।

'जेल क्यों हुई थी तुम्हें ?'

फिर मौन।

'पहले क्या थे तुम—किसान, मजूर, ज़मींदार ?'

टरपिलिखा बीच में कुछ बोलने ही वाली थी कि मुखिया ने अनाशित ही सहसा उत्तर दिया :

'किसान...'

'आह-हा, कुलक ?'

'अच्छा तो यह कुलक है !' विजय के स्वर में टरपिलिखा बोल उठी। 'अभी कुछ और किसानों का ख़ून पीना इसे बाक़ी था !'

'ज़रा ठहरो तो, दादी...'

'क्यों ठहरूँ मैं ? यह आख़िर इजलास है कि नहीं ? मुझे उतना ही हक बोलने का है जितना तुम्हें है। बल्कि ज़्यादा, सच पूछो तो। वह कौन था जो सारे वक्त यही कहता रहा था कि इन तरकीबों से कुछ नतीजा नहीं निकलेगा ? और अब तुम अपनी आँखों देख रहे हो कि आख़िर कुछ तो नतीजा उसका निकला ही।'

'तुम बिलकुल ठीक कह रही हो, बिलकुल ठीक कह रही हो...बस, ज़रा थोड़ा-सा ठहर जाओ, मैं कुछ और बात उससे पूछ रहा था।'

'तो फिर बढ़ो आगे, पूछो, पूछे जाओ !'

'अच्छा तो तुम 'कुलक' थे...और जेल से तुम कब भागकर निकले ?'

'जैसे ही लड़ाई शुरू हुई।'

'समझ गया। और वहाँ से तुम घर पहुँचे, ठीक है न ?'

'हाँ।'

'कहाँ है वह घर।'

'रोस्ताव के पास।'

'अच्छा, रोस्ताव के पास...और जर्मनों से तुम्हारी मुठभेड़ कहाँ हुई ?'

'वहीं, रोस्ताव के पास।'

'क्या, वहीं उन्होंने तुम्हें भर्ती किया ?'

'हाँ।'

'ज़रा एक मिनट अलेक्ज़ांडर, अभी इससे यह पूछना बाक़ी है कि जेल इसे क्यों हुई थी ?'

एक अस्पष्ट-सा कठोर भाव गाप्लिक के चेहरे पर प्रकट हुआ।

'तुम नहीं बताओगे तुम्हें किसलिए जेल हुई थी ?'

मौन।

'कुलकों से जब हमें नजात मिली, तुम उससे पहले ही जेल में चले गये थे ?'

'हाँ।'

'तो यह बात है...तुम पेटल्यूरा के गुट्ट में थे ?'

अलेक्ज़ांडर के आकस्मिक प्रश्न से गाप्लिक अवाक् रह गया।

'उसी में।'

टरपिलिखा ने अपने हाथ ऊपर उठा दिये।

'सोचो तो ज़रा !'

'सब बातें साफ़ हो गईं' अलेक्ज़ांडर ने कहना आरंभ किया। 'कुलक, डाकू, पेट्ल्यूरा ठग। तुम शुरू से ही सोवियत शक्ति के ख़िलाफ़ थे।'

'शुरू से', धीरे से गाप्लिक ने उसका अनुमोदन किया।

'और आख़िर में जर्मनों की नौकरी कर ली ?'

टरपिलिखा मेज़ के पीछे से उछल पड़ी।

'यह इसी का कसूर है जो लेवान्युक को फाँसी हुई, इसी का क़सूर है जो पाँच आदमी कमांडेंट के दफ्तर में हवालात में बंद हैं और जो आज अपनी फाँसी का इंतज़ार कर रहे हैं। यही जर्मनों के साथ हरेक के घर में गया, बाड़ों में से गायों को खींचकर बाहर घसीटा, मेरी एक गैया जो बच रही थी, ले गया, यही—यही ! उसकी बला से, बच्चे भूखे मर जायँ ! कलास्युक, मिगोर और कचूर परिवार के घरों में आखिरी डङ्गर जो रह गया था, यही ले गया।'

'और लिस और स्मोल्यान्चेंको के घरों से भी तो', फ़ोड़या ने और कहा।

'जर्मनों के साथ इसने भी गाँव को लूटा !'

'इन सारी तफसीलों का मतलब क्या है ? सब कुछ तो साफ़ है अब।'

'चुप रहो, और तो !' टरपिलिखा बोली, जो कि और सबों से अधिक शोर कर रही थी। 'अगर हमें इजलास में बैठना है तो इजलास की तरह कार्रवाई होनी चाहिए; हरेक को ज़रूर अपना बयान देना होगा।'

'अब और बयान देने को रह क्या गया? हम सब जानते हैं कौन क्या है, कौन क्या है; हम रोज तो देखते हैं। रोज़ तो इसकी वजह से जानें जा रही हैं। रोज़ तो आँसू और खून की धारायें बहती हैं।...'

'अच्छा तो फिर, तुम लोग इसके लिए क्या तजवीज़ करते हो?' टरपिलिखा ने गंभीरता से पूछा।

'ख़तम कर दो इस कायर को!'

'ख़तम कर दो?'

'साथियो, यह तजवीज़ किया गया है कि इस कायर को ख़तम कर दिया जाय। वे सब लोग जो इसके पक्ष में हैं?'

सबों के हाथ ऊँचे उठ गये।

'कोई विपक्ष में है? कोई वोट देने से इनकार कर रहा है?'

'कोई नहीं।

'अच्छा तो बस यह तय हुआ, साथियो। अलेकज़ेंडर, लिख लो इसको, और सबको पढ़कर सुनाओ।'

लँगड़ा अस्तबलची कुछ देर तक लिखता रहा। आख़िरकार वह उठकर खड़ा हुआ।

'यह अदालत, जिसके मेम्बरान ये लोग है, अलेक्ज़ांडर ऑव्सी, गोरपिना टरपिलिखा, फ्रोज़्या ग्रोखाच...'

'येव्फ्रोज़िना,' ग्रोखाचने उसको शुद्ध किया और अलेकज़ांडर फिर मेज़ पर झुक गया।

'येव्फ़्रॉज़िना ग्रोखाच, नाटाल्या लेमेश और पेलागेया प्यूज़िर—मुलज़िम हाज़िर अदालत, प्योटर गाप्लिक, कुलक, मुजरिम साबिक, और जर्मनों के तायनात किये हुए मुखिया, के लिए सबकी राय से मौत का हुक्म सादिर करती है।'

गाप्लिक पीला पड़ गया और इजलास में चारों तरफ़ उसने दृष्टि घुमाई, उसकी आँखें बार-बार खुलती और बंद होती रहीं।

'तो अब सब कुछ क़ायदे के मुताबिक है', टरपिलिखा ने घोषित किया।

'फिर भी ज़रा एक मिनट,' फ्रोज़्या बोल उठी। 'फैसला तो हमने ठीक दे दिया, अब हम लोग इसका ख़ात्मा किस तरह करेंगे?'

परेशान होकर उन्होंने एक दूसरे की तरफ़ देखा।

'हाँ, ठीक कहा, अब इसका खात्मा किस तरह किया जायगा?'

'इसे फाँसी दे देनी चाहिए,' पेलागेया, प्यूज़िर बोली।

'और फाँसी तुम उसे कहाँ दोगे? यहाँ, इस घर में?'

'बेकार बकवास करती हो! कुल्हाड़ी का एक हाथ दो, और बस, फैसला हुआ!'

'हम उसे गोली से तो मार नहीं सकते, गोली से मारने के लिए हमारे पास कुछ नहीं...'

'बस उसी की तो उसे ज़रूरत है—कि ज़रा धड़ाका हो, और जर्मन लोग देखने दौड़े हुए अंदर घुसे चले आवें...'

गाप्लिक की बोटी-बोटी काँपने लगी। वे लोग इस तरह उसके बारे में बातें कर रहे थे, कैसे उसको प्राण-दंड दिया जाय—इस पर बहस कर रहे थे, जैसे वह वहाँ पर था ही नहीं, मानो वह महज़ एक लकड़ी के कुन्दे की तरह वहाँ था। उसकी रूह काँप उठी, और उसने अनुभव किया कि वह अत्यधिक निःशक्त हो गया है।

'भले लोगो, मुझ पर रहम करो, मैंने तुम्हारा बहुत नुक्सान किया है, लेकिन अब मैं फिर कभी ऐसा नहीं करूँगा।'

वह घुटनों के बल रेंगने लगा, स्त्रियों के पैरों पर माथा रखने लगा। वे पीछे हट गईं मानों कोई अंगारा उनके पावों पर गिर पड़ा हो।

'पीछे हट, मरदूद!'

गाप्लिक रो पड़ा। उसकी आँसुओं की धार बह चली, उसके चेहरे पर उनकी मैली लकीरें बन गईं।

सब शांत था, बाहर केवल आँधी ज़ोरों से चलकर बर्फ़ के बादल उड़ा रही थी।

'चलो अब, जल्दी करो, कुएँ में फेंको उसे...'

आँगन में एक पुराना कुआँ था, जो कई साल हुए सूख गया था। इस समय वह आधा बर्फ़ से पटा हुआ था। इसी कुएँ में उन्होंने शव को छोड़ दिया और अलेक्जेंडर ने ऊपर से फावड़े से बर्फ़ खोद-खोदकर उस पर डाल दी और बाद में कुएँ के किनारों से बर्फ़ को फावड़े से एक-बराबर कर दिया।

'वसंत आने तक वह यहीं बहुत अच्छी तरह पड़ा रहेगा। और तब उसे खींचकर वहाँ से निकालना पड़ेगा। सुबह होते-होते तो सब कुछ बर्फ़ से ढक जायगा, और कहीं कोई पता-निशान भी नहीं रह जायगा।'

'अब हम लोग घर कैसे पहुँचेंगे?'

'तुम सबको यहीं रुकना पड़ेगा। अब रात को तुम लोग बाहर गश्त लगाने नहीं निकल सकतीं। एक बार तो बचकर निकल आईं, तो इसका मतलब यह नहीं कि दोबारा भी तुम ऐसे ही निकल जाओगी,' अलेक्जेंडर ने आप[illegible] करते हुए कहा। 'बहुत काफ़ी जगह है मेरे यहाँ। सुबह तक सोओ और उसके बाद तुम शांति से घर जा सकती हो।'

तिपाइयों पर और फ़र्श पर जितनी अच्छी तरह हो सकता था, उन्होंने सोने की व्यवस्था कर ली, लेकिन उन्हें नींद नहीं आई।

'अलेक्ज़ांडर, देखो, आज के इजलास की कार्रवाई को बहुत छिपाकर रख लेना, जब हमारे अपने लोग आयेंगे, तो हमें उन्हें ये काग़ज़ सौंप देने होंगे।'

'तुम इसके लिए परेशान न हो। मैं अच्छी तरह उन्हें छिपा दूँगा, कोई उनका पता भी नहीं पा सकता।'

'देखा तुमने, अलेक्ज़ांडर, आख़िर कुछ नतीजा हमारी तरकीब का निकल ही आया।'

'कैसे न निकलता', उसने अर्ध-निद्रित दशा में अस्फुट स्वर में उत्तर दिया।

७

दरवाज़ा फटाक् से बंद हुआ। फेडोसिया चौंक उठी और बाल्टी उसके हाथ से छुट पड़ी। पानी की धारा रसोई के कच्चे आँगन में बह चली।

'क्या हो गया तुझे! हाथ बहुत नाजुक हो गये हैं?' वर्नर ने क्रोध से झल्लाकर कहा और कूदकर पीछे हट गया कि कहीं गंदा पानी उसके पालिश किये हुए जूते तक न पहुँच जाय।

उसने कोई जवाब नहीं दिया। एक तीखा दर्द उसके दिल को मसोसने लगा। उसने पानी को कपड़े से पोंछ दिया, लेकिन उसके हाथ अभी तक काँप रहे थे और जहाँ फ़र्श सूखा था, वहाँ भी उसने कई बार हाथ फेरा और कहीं-कहीं फ़र्श के गड्ढों में पानी को छोड़ गई। उससे आज कोई काम हो ही नहीं रहा था। हर आवाज़, हर आहट पर वह ऐसे चौंक उठती थी, जैसे उसे कोई बार-बार कुहनी मार देता हो। उसका एक-एक रोआँ आज प्रतीक्षा कर रहा था—वे लोग आ रहे हैं, किसी भी क्षण वे लोग यहाँ हो सकते हैं!

गाँव में केवल वही इस बात को जानती थी, यह बात उसकी छाती को और भी भींच रही थी। निःसंदेह, अच्छा ही था यह, जो और कोई इस बात को नहीं जानता था। मगर उसके लिए अकेले ही उनकी प्रतीक्षा करना कितना कठिन था! उसके हृदय की गति कभी बंद-सी हो जाती, कभी उसकी साँस हाँफती हुई-सी चलने लगती; किसी भी क्षण वे यहाँ मौजूद हो सकते हैं, किसी भी क्षण वे यहाँ आ सकते हैं...

'तुम्हें चाहिए कि ख़ूब अच्छी तरह दिल में सोच लो कि तुम किस ढङ्ग से यह करोगी'—पीठ फेरे हुए ही वर्नर ने पूस्या से, जो अभी तक बिस्तर में था, कहा।

पूस्या वहीं पड़ी-पड़ी अपने होंठ चबाने लगी; अपने हाथ उसने सिर के पीछे मोड़ रखे थे। कैसा लहजा था वह जिसमें उसने उससे यह बात कही! मानो वह उसकी गुलाम थी कि उसका हुक्म बजाना उसका फर्ज था। वह ख़ुद तो छापेमारों का पता लगा नहीं सका, हालाँकि उसके पास सिपाही भी थे, टेलिफ़ोन भी था और सभी कुछ इंतजाम थे; और फिर वह उससे इस बात की माँग कर रहा था कि वह, जिससे गाँव में कोई बात तक नहीं करना

चाहता था, उन्हें ढूँढ़ निकाले। पूस्या को तैश आ रहा था। यह उसकी तरफ़ से बहुत ज़्यादती थी। वह सोचता होगा कि एक ज़रा रेशम की शेमाई और इन सड़े हुए मोज़ों के बल पर वह जैसी चाहे, उसे घुड़की दे सकता था!

वह इस बात को ख़ूब अच्छी तरह जानती थी कि अपनी बहन से उसकी बातचीत का कुछ भी फल नहीं निकल सकता था, कि सब व्यर्थ था। उनकी आपस की बोलचाल लड़ाई के पहले से ही बंद था। ओल्गा उस छोटे-से क़स्बे में अक्सर आती थी, जहाँ पूस्या रहती थी; वहाँ तरह-तरह के सम्मेलन और अध्यापकों के पाठ्य-क्रमों में हिस्सा लेती थी, लेकिन उसने कभी उसके दरवाज़े तक आने का कष्ट नहीं उठाया था। ज़ाहिर था कि वह पूस्या को अपनी मुलाक़ात के क़ाबिल ही नहीं समझती थी। उसकी राय में यह जुर्म था कि पूस्या कोई काम नहीं करती थी, कपड़े धो-धोकर अपने हाथ ख़राब नहीं करती थी, फ़र्श रगड़-रगड़कर साफ़ नहीं करती थी, या ट्रैक्टर-हल चलाना नहीं सीखती थी। ओल्गा चाहती थी कि सब लोग उसी की तरह हो जायँ। वह यह भूल जाती थी कि वह ख़ुद तो एक बैल की तरह हट्टी-कट्टी थी जब कि उसकी बहन का जिस्म नाज़ुक था। ओल्गा ने कभी अपनी शक्ल-सूरत की चिंता नहीं की कि वह देखने में कैसी लगती है, वह अपनी घनी लटों को ज्यों-त्यों करके सिर के चारों तरफ़ लपेट लेती थी। जाड़ों में उसके हाथ हमेशा ठंड से फटे रहते और गर्मियों में वह हमेशा बनजारों की तरह काली पड़ जाती थी। पूस्या ने एक हाथ बढ़ाकर आइना उठा लिया और ध्यान से अपने चेहरे को, चिमटी की मदद से बारीक बनाई हुई भवों को, अपनी काली-घुँघराली लटों को, घनी बरौनियों के बीच अपनी गोल-गोल आँखों को, अपने पतले-पतले होठों को, जिनके बीच में उसके तेज़-तिकोने दाँत चमक रहे थे—ध्यान से देखने लगी।

न, जैसे काम ओल्गा करती थी, ऐसे काम उसके मान के नहीं थे; न ही उन्हें करने की उसे कोई आवश्यकता थी। सेरयोज़ा एक अफ़सर के पद पर था, और उस क़स्बे में मन-चाही वस्तुएँ ख़रीदने के लिए वह उसके लिए काफ़ी से अधिक कमा लाता था। मगर ओल्गा इस बात को कभी नहीं समझ सकी थी। उसका हमेशा यही ख़याल था कि सेरयोज़ा सुखी नहीं था। मगर

आख़िर कैसे ? उसकी एक बीवी थी, जो जानती थी, जो यह तमीज़ रखती थी कि उन्हीं बहुत मामूली से कपड़े जो उसे मिलते थे, उन्हीं को कैसे सलीक़े से पहना जा सकता है ; और जिसके बाल हमेशा ठीक से सँवारे हुए रहते थे ; अपने हाथों को वह साफ़ और मुलायम रखती थी, और उन फूहड़ों की अपेक्षा जो हमेशा जल्दी में रहती थीं और हमेशा किसी न किसी काम के पीछे पागलों की तरह लगी रहती थीं, वह देखने में कहीं अच्छी लगती थी। और यह कि उसके बच्चे नहीं हुए थे और क्या पूस्या को उनकी लालसा नहीं थी ?—तो उस बारे में यह है कि पूस्या को उनकी कामना नहीं थी, बस। बच्चे-कच्चे वैसे भी चारों तरफ़ बहुत थे। सेरयोझ़ा ने उसके साथ शादी की थी, न कि बच्चों के साथ। और जब उसने उसके साथ शादी की थी, तो बच्चे जनने की बात उसने उससे नहीं कही थी। ओल्गा को अपनी बहन से खार खाने के लिए ये सब बातें काफ़ी थीं। तब फिर वह अब पूस्या के बारे में भला क्या सोचेगी ? और फिर, उससे उम्मीद भी उसे क्या थी ? पूरे पाँच महीने हो गये जब सेरयोझा मोर्चे पर गया था। तब से उसको कोई खैर-खबर उसे नहीं मिली थी। वह या तो मारा गया था या कैदी बना लिया गया था। वर्ना इसकी फिर और क्या वजह हो सकती थी कि पूरे पाँच महीने से उसकी एक भी चिट्ठी, एक पोस्ट-कार्ड तक भी उसे नहीं मिला था। कौन जानता है, यह लड़ाई कब तक चलेगी ? फिर क्या करती वह ? प्रतीक्षा करती ? एक साल—दो साल—न जाने कितने सालों तक—और अंत में भूखों मर जाती ? नहीं, उसने एक अधिक समझदारी का रास्ता अपने लिए अख़्तियार कर लिया था। और कुर्ट अगर जर्मन था, तो इसमें क्या ? चारों तरफ़ जर्मनों का ही तो बोलबाला था। उन्हीं का तो राज था। और अब उन्हीं का राज रहेगा। बोलशेविक तो अब खतम हो चुके, यह तो बिलकुल साफ़ था। और सब कुछ बहुत मज़े में चलता रहता, अगर सिर्फ़ कुर्ट इधर पिछले दिनों इतना चिड़चिड़ा और गर्म-मिज़ाज न हो गया होता। अब वह कैसी सख़्ती से उससे बोलता था। और अब वह ओल्गा से मुलाक़ात करने की उससे माँग कर रहा था। पुस्या जानती थी कि उसका मन बहन से मिलने की कोशिश करने के लिए भी तैयार नहीं था। लेकिन इस झमेले से वह निकले कैसे ? फिर, यह

तो जो हैं, सो है, उसे यह बताया किसने कि ओल्गा उसकी बहन थी ? और उसने धीरे-धीरे बहुत बे-मन से अपनी पोशाक बदली। कुर्ट काम करने के लिए उस पर हुक्म लगाये, बस, यह हद थी। उसे तो ऐसा जान पड़ता था कि अपने भेदिये और गुप्तचर उसके पीछे लगा रखे हैं, शायद पूरा महकमे का महकमा।

पुस्या ने लापरवाही से पलंग के पर्दे खींचे और कुर्सी पर से वर्नर की जाकेट उठाई ताकि उसे कपड़ों की आल्मारी में टाँग दे। जेब में कोई काग़ज़ खड़खड़ाया। उसने एक नज़र दरवाजे पर जल्दी से डाली और काग़ज को निकाल लिया। वह एक लंबे नीले लिफाफे में रखा हुआ कोई पत्र था जो जर्मन भाषा में लिखा हुआ था। वह जर्मन नहीं पढ़ सकती थी, फिर भी उसने वह पत्र खोला। उस नीले लिफाफे पर उसे संदेह होने लगा।

उस नीले काग़ज के चार पृष्ठ छोटी-छोटी सुथरी लिखावट से भरे हुए थे। पहले पृष्ठ के सिरे पर एक फूल दबाकर टाँका गया था। पुस्या ने उन पत्रों को नाक से लगाया। उनमें से किसी इत्र की एक हलकी-सी सुगंध आ रही थी, जिसको वह पहचान नहीं सकी। इसमें कोई संदेह नहीं रह गया कि यह पत्र किसी स्त्री के पास से आया था। पुस्या अपने होंठ चबाने लगी, यहाँ तक कि उनमें से ख़ून निकल आया। एक स्त्री कुर्ट को पत्र लिख रही थी, एक स्त्री जो उस ओर जर्मनी में रहती थी। एक सुंदर पत्र लिखने के काग़ज़ पर छोटे-छोटे सुथरे अक्षरों में उसको पत्र लिख रही थी, बेशक यह पत्र उसकी मा के पास से भी आ सकता था, लेकिन—यह फूल !

काश, वह उस पत्र को पढ़ सकती, यह जान सकती कि उसमें क्या लिखा है, तो क्या कुछ न वह इसके लिए दे देती। उसने तारीख़ पर दृष्टि डाली, पत्र अभी पिछले ही दिनों लिखा गया था। हाँ, यह प्रकट था कि वह कल ही आया था। आज कुर्ट दूसरी जाकेट पहन गया था और पत्र को वह इस जेब से निकालना भूल गया था। उसने आज के दिन तक कोई पत्र या फ़ोटोग्राफ़ उसके पास नहीं देखा था।

क्या कोई भी नहीं ? वह दिमाग़ पर काफ़ी ज़ोर देकर सोचने लगी। वह पाकेट-बुक जो वह कभी अपने पास से अलग नहीं करता था, और जो वह

उसे छूने भी नहीं देता था—उस पाकेट-बुक में क्या हो सकता होगा? और फिर उसकी डाक आफ़िस ही में आती थी, वह घर पर नहीं आती थी। वह अपने पत्र और फोटोग्राफ़ वहीं मेज़ की उस दराज़ में रखता था, जिसमें कमरे से निकलते वक्त वह इतनी होशियारी से चाभी लगा जाता था। आखिर वह उसके बारे में जानती ही क्या थी? बस इतना ही जितना वह ख़ुद उसे बता देता था। शुरू-शुरू में जब वह उसके साथ चलने के लिए स्वदेश छोड़ने को राज़ी हो गई थी, तो उसने बड़ी गंभीरता से उसे वचन दिया था कि वह उसे ड्रेस्डन अपने साथ ले जायेगा और वहाँ उसके साथ शादी कर लेगा। वास्तव में यहाँ कोई ऐसा स्थान नहीं था, जहाँ यह रस्म पूरी की जा सकती, अस्तु यह अच्छी तरह उसकी समझ में आ गया था कि उसे अभी प्रतीक्षा करनी पड़ेगा। लेकिन यह बात कोई बहुत महत्त्वपूर्ण नहीं थी।

अब तक उसका मन बहुत आश्वस्त रहा था, क्योंकि वह महसूस करती थी कि कुर्ट उसकी पर्वाह करता है। कुर्ट की इस माँग ने ही कि वह जाकर ओल्गा से बात करे, उसके मन में शंकाएँ पैदा कर दी थीं और उसे मजबूर कर दिया था कि कुछ बातों को वह एक भिन्न दृष्टिकोण से देखे। वह क्यों इन दिनों ड्रेस्डन की चर्चा कम करता था? और जब-जब वह इसकी चर्चा उठाती, क्यों यह विषय उसको अरुचिकर लगता था? क्यों वह हमेशा ही इतना व्यस्त रहता था, हमेशा इतना चिढ़ा हुआ-सा, और ज़रा-ज़रा-सी बातों का बुरा मान जाता था? निश्चय ही, वह स्वयं नहीं बदली थी। वह तो बिलकुल वैसी ही थी, जैसी पहले, जब वे जर्मनों द्वारा अधिकृत नगर में पहले-पहल मिले थे, जहाँ कुर्ट को दुमंज़िले उसके कमरे में सरकारी तौर पर टिका दिया गया था। कुर्ट ही बदल गया था, कुर्ट ही अब दूसरा हो गया था, और इस सबके ऊपर से यह पत्र!...

उसे ध्यान आया कि पत्र हाथ में लिये हुए उसे इस तरह नहीं बैठे रहना चाहिए और फिर कुछ भी हो, वह उसे पढ़ तो सकती नहीं थी, और अगर कुर्ट आ गया तो कलह हो जाएगी। वह हमेशा इस बात पर ज़ोर दिया करता था कि वह उसके काग़ज़ों को कभी हाथ न लगाये, चाहे वे कैसे ही क्यों न हो।

पुस्या ने वे नीले कागज़ लिफ़ाफ़े के अन्दर ज्यों के त्यों रख दिये और जैकट लटका दी। उसने तय किया कि वह कुर्ट पर निगरानी रखेगी। वह निश्चय ही पता लगा लेगी कि उसको पत्र लिखनेवाली स्त्री कौन थी और यह कि उसकी ओर से उसका खिंचाव कार्य की अधिकता और स्नायुओं की शिथिलता के कारण था या किसी और कारण।

फ़ेडोसिया रसोईघर में बर्तनों का खड़का कर रही थी और उस खड़खड़ाहट से पुस्या इतनी परेशान हो गई कि बौखला उठी।

'ज़रा धीरे से तो बर्तन रगड़ती,' वह अपनी तीखी पतली आवाज़ में चिल्लाई।

फ़ेडोसिया ने खुले हुए दरवाज़े से झाँककर देखा, तो पुस्या ने एक विचित्र भाव उसके चेहरे पर पाया। यह हृदयहीन घृणा और तिरस्कार का वह भाव नहीं था जो वह उस किसान स्त्री के चेहरे पर हमेशा देखती थी। उसकी आँखों में तो अब विजय की आभा थी, वे एक प्रकार के आनन्द से विभोर जान पड़ती थीं, ऐसा उसने पहले कभी नहीं देखा था। क्रोध से पुस्या बौखला उठी। वह किस बात पर इतनी खुश थी? बहुत संभाव है उसने दरवाज़े के पीछे से सब सुन लिया हो कि कुर्ट किस ढंग से उसके साथ बातें कर रहा था। इस स्त्री ने भी यह बात देख ली थी; द्वेष के कारण वह तक आनन्द से भर उठी थी।

उसे याद आ गया कि उस बुढ़िया से वह अपना बदला ले सकती थी। उसने अभी तक कुर्ट को नहीं बताया था कि फ़ेडोसिया का बेटा खाई में पड़ा था। दो दिन तक तो, फ़ेडोसिया को यातना पहुँचाने के ख़याल से जान-बूझकर वह चुप रही थी। उसके बाद जब कुर्ट उसे परेशान करके ओल्गा के साथ बात करने पर ज़ोर देने लगा था तो वह उस बात को एकदम भूल ही गई थी। अस्तु अब उसने अपने दिल का बुख़ार निकाला।

'तू ठहरी रह, जैसे ही मेरा मालिक आता है कि मैं कहती हूँ,' उसने धमकी दी।

फ़ेडोसिया कड़ुवी हँसी हँसी और दोनों कूल्हों पर हाथ रखकर सर से पाँव तक पुस्या को गहरी नज़र से देखा।

'बड़ी परवाह मैं करती हूँ ! कह दो 'मालिक' से अपने !' उसने ताने के साथ 'मालिक' शब्द पर ज़ोर देते हुए उलटकर दिलेरी से जवाब दिया। 'कह दो उससे। मैं ख़ुद ही उससे कह सकती हूँ, देखूँ उससे तुम्हारा कितना भला हुआ जाता है ? जाओ, कह दो, उससे, सौ दफ़ा जाकर कह दो, अगर तुम्हारी मर्ज़ी हो तो ! कपड़े पहनो अपने और दौड़कर उसके आफ़िस में जाओ ; जाओ, अभी जाओ, एकदम !'

पुस्या आँखें फैलाये अचम्भे से उसकी ओर देखती रही।

'तुमको क्या हो गया है ?'

'मुझे कुछ भी नहीं हो गया है। तुम्हें इतना अचम्भा किस बात पर हो रहा है ? तुम उससे जाकर मेरी बात कह देना चाहती थीं, सो यही कह रही हूँ मैं भी—कि जाओ और कह दो उससे। बस इसी लिए तो तुम यहाँ रह रही हो, लोगों की जासूसी करने के लिए, जर्मनों के साथ जा-जाकर खुसर-पुसर करने के लिए। ठीक है, तो फिर, जाओ, दौड़कर जो कुछ मालूम है, कह आओ, !'

'वे लोग तुझसे अलग कर देंगे उसको !'

'कर देने दो। वे उसे महीना भर पहले ही मुझसे अलग कर चुके हैं। अब वे उसे और अलग नहीं कर सकते !'

'फिर तुम क्यों वहाँ रोज़-रोज़ जाती हो ?'

'मैं जाती हूँ, क्योंकि मैं जाती हूँ। वह मेरा अपना धंधा है। वे अगर उसे उठाकर वहाँ से अलग कर देंगे, तो फिर मैं वहाँ नहीं जाऊँगी, बस।'

'कुर्ट तुम्हें हिरासत में ले लेगा। तुम ख़ूब अच्छी तरह जानती हो कि वहाँ पर घूमने की तुम्हें इजाज़त नहीं है।'

'हाँ, ज़रूर तुम मुझे डरा लोगी ! बहुत मैं तुम्हारी क़ैद और हिरासत से डरती हूँ ! देख नहीं रही हो, मैं खड़ी-खड़ी कैसी काँप रही हूँ !'

फ़ेडोसिया कमरे के अन्दर आ गई। वह अब मुस्करा नहीं रही थी। उसकी काली-काली आँखें सहमा देनेवाली थीं।

'वह तो तुम हो जिसे डरकर भागना चाहिए, सुन रही हो ! तुम्हीं को डर से थरथर काँपना चाहिए !'

पुस्या हारकर एक बेंच पर बैठ गई।

'तुम कैसी बातें कर रही हो ? मेरे लिए कौन-सी बात है डरने की ?'

'तुम्हारे लिए डरने की सभी बातें हैं। तुम्हें डरना है जनता से, क्योंकि वे तुम्हें माफ़ करनेवाले नहीं! डरना है पानी से : तुम उसमें डूब जाना चाहोगी और वह तुम्हें ऊपर फेंकेगा। डरना है ज़मीन से ; तुम उसमें समा जाना चाहोगी, और वह तुम्हें जगह नहीं देगी। मेरा वास्या वहाँ खाई में पड़ा हुआ कहीं अच्छा है। फाँसी के फन्दे झूलता लेवान्युक कहीं मज़े में है। ओलेना जब नंगे बदन जर्मनों की किर्चें खा-खाकर बर्फ़ पर दौड़ती थी तो तुमसे कहीं अच्छी थी। जैसा कुछ तुम्हारे आगे आनेवाला है, उससे ये सब लोग कहीं अच्छे रहे हैं! तुम तो ख़ून के आँसू रोओगी—क्योंकि तुम उनकी जगह पर नहीं हुईं। हज़ार बार तुम्हारा मन कहेगा कि काश, फाँसी की रस्सी से तुम्हारा गला घोंट दिया गया होता, काश कि किर्चें तुम्हारे जिस्म के आर-पार हो गई होतीं, काश कि गोली से तुम उड़ा दी गई होतीं!'

घृणा और क्रोध के आवेश से उसकी साँस फूल उठी थी। इस जानकारी के उन्मत्त आनन्द से उसका हृदय घुटने लगा था कि अब उसके देश के सैनिक रास्ते में हैं, वे अब निकट आते जा रहे हैं, संभवतः इसी समय, ऐन जब वह इस कायर देश-द्रोहिणी के मुँह पर थूक रही थी, गाँव के बाहर बंदूक की आवाज़ें सुनाई पड़ने लगेंगी।

'निकल जा यहाँ से,' पुस्या ने हाँफते हुए कहा। 'इसी मिनट यहाँ से निकल जा!'

और फ़ेडोसिया फिर तिरस्कार की हँसी हँसी।

'मैं निकल जा सकती हूँ। यहाँ तुम्हारी सूरत देखने में कोई सुख नहीं है मेरे लिए। फिर भी तुम यह याद रखोगी कैसे मेरे अपने घर से तुमने मुझे निकालकर बाहर किया!'

दरवाज़े को ज़ोर से बन्द करती हुई, जिसकी धमक से दीवार से प्लास्टर के टुकड़े भी गिर पड़े, वह बाहर चली गई।

'और तुम दौड़कर जाओ और अपने आदमी से शिकायत कर दो कि मैंने चिल्ला-चिल्लाकर तुमसे बातें की हैं!' आप ही आप वह चूल्हा सुलगाती

हुई बुड़बुड़ाने लगी। 'वह अब और तुम्हारे बारे में नहीं सोचता होगा। उसके पास अब और बातें सोचने के लिए होंगी। हो सकता है कि ऐन इसी वक्त वह उनमें लगा हो!'

लेकिन कुर्ट को पुस्या का ध्यान उस वक्त बिलकुल नहीं आ रहा था। वह ऐंठ और क्रोध के साथ दफ़्तर में दाख़िल हुआ, और सैनिक उसके भिंचे हुए होंठ और माथे पर पड़ी हुई त्योरियाँ देखकर, अपने जिस्म को और भी कड़ा करके उसकी सलामी के लिए खड़े हो गए। फेल्डवैबेल मेज़ के पीछे एकदम कूदकर खड़ा हो गया।

'सदर दफ़्तरवालों के यहाँ से कोई टेलिफ़ोन आया?'

'आया, हज़ूर हर-कापितान।'

'तुमने मुझे इत्तला क्यों नहीं दी?'

'ऐसा करने के लिए कोई हुक्म नहीं था, हज़ूर हर-कापितान।'

'कोई हुक्म नहीं, इससे क्या मतलब है तुम्हारा?'

'उन्होंने कहा, मुझे आपसे बताने की कोई ज़रूरत नहीं।'

'तो फिर टेलिफ़ोन उन्होंने क्यों किया?'

'उन्होंने मुझसे दरियाफ़्त किया था कि छापेमार क़ैदी ने अभी तक कोई बताया या नहीं?'

'और तुमने क्या कहा?'

'मैंने कहा कि उसने कोई भेद नहीं बताया।'

'फिर क्या हुआ?' कप्तान के स्वर में अब कुछ कटुता आ गई थी। डवैबेल का चेहरा पीला पड़ गया।

'और फिर...मैंने यह भी...यह भी इत्तला उन्हें दी कि...'

'अच्छा, और क्या इत्तला दी तुमने?'

'कि...क़ैदी को मौत की सज़ा दे दी गई...'

'किसने तुम्हें वह रिपोर्ट भेजने की इजाज़त दी? तुमसे कहा कि तुम यह त्तला भेजो? किसने तुम्हें ऐसा कोई हुक्म दिया? मैंने दिया?'

आगे को झुककर कुछ क़दम वर्नर उस आदमी की तरफ़ चला जो एक

गज़ की तरह सीधा, कड़ा होकर, उसके सामने खड़ा था। फ़ेल्डवैबेल को पीछे क़दम उठाने का साहस नहीं हुआ।

'क्या वैसा करने का मैंने तुम्हें हुक्म दिया था, क्या मैंने तुम्हें वैसा कोई हुक्म दिया था ?'

'आपने नहीं दिया था, हज़ूर हर-कापितान।'

एक भारी हत्था उसके गाल पर आकर पड़ा। पूरी शक्ति से कतान ने अपना पूरा हाथ घुमाकर उसे मारा।

फ़ेल्डवैबेल लड़खड़ा गया, लेकिन वर्नर से आँखें मिलाकर देखता हुआ वैसे ही उसके सामने खड़ा रहा।

'किसने तुम्हें यह हुक्म दिया, किसने तुम्हें इसकी इजाज़त दी ?' अपना हाथ वापिस लाते हुए जल-भुनकर उस अफ़सर ने पूछा।

फ़ेल्डवैबेल के गाल पर एक लाल निशान उभर आया था। कतान की उँगलियों के पड़े हुए सफ़ेद निशान ख़ून के वापिस दौड़ आते ही गहरे हो उठे।

'मुखिया कहाँ है ? आज वह यहाँ आया कि नहीं ?'

फ़ेल्डवैबेल एकदम स्थिर होकर कतान की ओर देखता रहा; उसकी पलकें तक नहीं हिलीं।

'अभी तक तो नहीं आया।'

'कितना अनाज वे लोग लाये ?'

'कुछ भी नहीं। अभी तक कोई हाज़िर नहीं हुआ।'

वर्नर ने उन पर लानत भेजी।

'और उस लड़के के मामले का क्या हुआ ?'

'किसी ने कोई इत्तला नहीं दी, हर-कापितान।'

कतान ने अपनी कुर्सी को ग़ुस्से के ज़ोम में पीछे धक्का दिया और ब्लाटिंग-पेपर को मेज़ पर से गिरा दिया। जल्दी से झुककर फ़ेल्डवाबेल ने उसे उठाकर ठीक उसी जगह पर रख दिया, जहाँ वह पहले रखा हुआ था।

'बुलाओ मुखिया को ! फ़ुर्ती से !'

'जावोहल, हर-कापितान !'

बूट की एड़ियाँ खटाक से मिलाकर घूमते हुए फ़ेल्डवाबेल कमरे के बाहर निकल गया। वर्नर ने अपने मेज़ की दराज़ खोली और उसके अन्दर के सब कागज़ात बाहर फैला दिये। उसकी आँखों में आज ख़ून उतर आया था। वह कम्बख़्त औरत एक शब्द भी नहीं बोली और न ही कुछ वह बताकर देती चाहे साल भर तक वह उससे जिरह करता रहता। सौ बार भी उसे मरना होता तो वह मर जाती; मगर अपनी ज़बान न खोलती। लेकिन सदर दफ़्तर में तो वे लोग यही नतीजा निकालेंगे कि उसने बहुत जल्द-बाज़ी की, कि उसने बिना सोचे-समझे कार्रवाई कर डाली और उस छापेमार टुकड़ी का—जो हवा की तरह उनके फन्दे से बाहर हो जाती थी और सदर-दफ़्तर के क्षेत्र के अन्तर्गत गाँवों में छापा मार रही थी—भेद पाने का एकमात्र साधन यानी उस कैदी को उसने हाथ से खो दिया था। इस गधे को और इससे बढ़कर कुछ नहीं सूझा—झट उन लोगों से कह दिया कि उस औरत को ख़त्म कर दिया गया है। क्यों नहीं, स्वाभाविक ही था जो उन लोगों ने उससे कहा कि टेलीफ़ोन पर कुर्ट को बुलाने की ज़रूरत नहीं थी और उसकी पीठ-पीछे महज़ मातहत से ही बातचीत कर ली। निश्चय ही, वहाँ उसको गिराने के लिए गढ़े खोदे जा रहे थे और उसके ख़िलाफ़ तरह-तरह की साज़िशें हो रही थीं। और फिर इस सब पर तुर्रा यह कि आज के दिन तक कुछ भी अनाज जमा नहीं किया गया था। क़रीब २४ घण्टे बीत चुके थे और गाँव में किसी ने भी आकर अपनी शक्ल नहीं दिखाई थी, किसी ने भी आकर क़बूल नहीं किया था कि उसने अनाज कहाँ छुपा रखा है। उस बेवक़ूफ़ मुखिया को पूरा विश्वास था कि ये लोग इस तरह डर जायँगे।... डर जायँगे, ज़रूर। सदर दफ़्तरवाले तो ठाठ से बैठे हुए कहते रहते थे—मुखिया, मुखिया। लेकिन यह मुखिया तो किसी भी मसरफ़ का नहीं निकला। उससे कुछ भी नहीं होता था, कोई भी नतीजा अपने काम का वह नहीं दिखा सका। गाँववालों पर उसका रत्ती भी असर नहीं था।

फ़ेल्डवाबेल खटाक् से एड़ियाँ मिलाते हुए दरवाज़े पर फिर आ खड़ा हुआ।

'वेल ?'

'हर-कापितान, मुझे हजूर को रिपोर्ट देने की इजाज़त हो कि मुखिया यहाँ नहीं है ।'

'यह क्या ? यहाँ नहीं ! लेकिन मैंने तुमसे कहा था उसे बुला भेजने के लिए !'

मुझे हजूर की रिपोर्ट देने की इजाज़त हो कि मैं ख़ुद गया, वह घर पर नहीं है ।'

वर्नर ने कन्धे उचकाये ।

'कहाँ चला गया है ?'

'हजूर, रिपोर्ट देने की इजाज़त हो कि—मुझे इसके बारे में मालूम नहीं ।'

वर्नर का पारा चढ़ने लगा ।

'क्या बिलकुल ही तुम्हारी अक्ल जाती रही है ? क्या मुझसे तुम यह उम्मीद रखते हो कि तुम्हारे बजाय मैं उसको ढूँढ़ने जाऊँगा ?'

'हर-कापितान, मुझे गुज़ारिश करने की इजाज़त हो कि हम लोग सब जगह उसको ढूँढ़ चुके हैं । मुखिया कल शाम को देर तक यहाँ बैठा हुआ काम करता रहा था । हम दोनो अनाज के उस स्टाक का हिसाब लगा रहे थे जो कि गाँव में मौजूद होना चाहिए । आधी रात के क़रीब वह यहाँ से घर के लिए चला था, लेकिन वह घर पहुँचा ही नहीं, और न तब से किसी ने उसे देखा ।'

'क्या तुमने सब तरफ़ दरियाफ़्त कर लिया ?'

'जावोहल, हर-कापितान ।'

'क्या वह भाग गया है ?'

'जावोहल, हर-कापितान । बहुत करके वह भाग ही गया होगा ।'

'बहुत ठीक है !' कप्तान ने टेलीफ़ोन की तरफ़ देखती आँखों से देखते हुए निराशा के स्वर में कहा : 'अब कहिए ?'

'मुझे गुज़ारिश करने की इजाजत हो कि मैं कुछ भी नहीं जानता ।'

'बेवक़ूफ़ कहीं का !' कप्तान झल्लाया । 'क्या ज़रूरत थी हमको उसकी, उस मुखिया की ? उसने हमें क्या मदद पहुँचाई ? काम क्या किया उसने ? क्या इन्तज़ाम किया उसने ? एँ ?'

'बेशक, हर-कापितान...'

'आ-हा, 'बेशक !'...जाओ, बैठो और सदर-दफ़्तर को रिपोर्ट दो कि मुखिया भाग गया है। लिखो कि वे एक दूसरा मुखिया भेजें। शायद इस मर्तबा उन्हें कोई ऐसा आदमी मिल जाय, जिसकी खोपड़ी में कुछ अक्ल हो।'

फ़ेल्डवाबेल दूसरे कमरे में चला गया और मुखिया के भाग जाने की रिपोर्ट का मसविदा बनाने लगा। इसके बाद उसने एक दूसरी रिपोर्ट शुरू की जिसमें उसने लिखा कि कप्तान साहब ओल्गा कॉस्टयुक के प्राणदंड को सदर-दफ़्तर से छिपा रखना चाहते थे।

'ज़ाउस'

वह उचककर खड़ा हो गया और दीर्घ-अभ्यस्त फ़ुर्ती से इस दूसरी रिपोर्ट को दराज़ में डाल दिया।

'गाँव में पिछली रात को कौन-कौन चौकीदारी कर रहे थे, उन सबसे दरियाफ्त करो।'

'मैं उन सब लोगों से पहले ही दरियाफ्त कर चुका हूँ और उन्हें कुछ मालूम नहीं।'

'बड़ा अच्छा इन्तज़ाम है। मुझे करना पड़ेगा। मालूम होता है कि कोई भी कहीं घूमे फिरे, चाहे गाँव से बाहर निकल जाय, संतरियों को कुछ भी ख़बर नहीं होती। अब जल्दी ही किसी दिन भेड़ों की तरह हम लोग, मय इन सन्तरियों के हलाल हो जायँगे। यह कैसी बात है कि ये लोग कुछ नहीं जानते! वह उड़कर तो गया नहीं, गया तो वह अपने दो पैरों से ही चलकर। क्या कर रहे थे संतरी लोग, सो रहे थे?'

'ऐसे कड़े पाले में वे सो तो नहीं सकते थे। लेकिन बड़ा तेज़ बवंडर चल रहा था, और जो इन देहातों को अच्छी तरह जानता हो, वह ऐसे में चुपके से निकल जा सकता था। हमें चाहिए कि गाँव के चारों तरफ़ सन्तरी तायनात कर दें।'

'मैं तुमसे यह नहीं पूछ रहा हूँ कि हमें क्या करना चाहिए, क्या नहीं करना चाहिए। किसको तुम गाँव की चौकीदारी पर तायनात करोगे? कहाँ से लाओगे तुम इतने सारे सैनिक? और अपने बारे में तुम क्या ख़याल

किये बैठे थे ? नहीं जानते थे क्या कि मुखिया के ऊपर खास निगाह रखने की ज़रूरत थी ?'

फ़ेल्डवाबेल को याद आया कि मुखिया से उसने कहा था कि कोई आदमी उसे घर पहुँचा आये। इससे प्रकट था कि वह अकेले घर जाते डरता था। इसका मतलब यह था कि रात को कहीं भाग जाने में भी उसको इतना ही डर लगता। लेकिन फेल्डवावेल ने यही उचित समझा कि इसका ज़िक्र कप्तान से न करे। कहीं आग और न भड़क उठे। फेल्डवाबेल ने अपने आपको दोषी महसूस किया—आख़िर उसे गाप्लिक को घर पहुँचा ही देना चाहिए था।

'तुम लोगों के साथ काम करना एक अच्छी-खासी मुसीबत है। साफ़ बात है। बेवकूफ़ों का अड्डा जमा हो गया है।' कप्तान भुनभुनाया।

फ़ेल्डवाबेल फ़ौजी क़ायदे से सीधा खड़ा हुआ हुक्म का इन्तज़ार कर रहा था।

'तो अब तुम यहाँ क्यों खड़े हुए हो ? जाओ, रिपोर्ट लिखो अपनी। लिखो, वे लोग भी पढ़कर खुश हो जायँगे। अच्छा आदमी मदद को दिया है उन लोगों ने मुझे, वाह !'

फ़ेल्डवावेल वापिस अपने कमरे में लौट गया और जल्दी-जल्दी अपनी रिपोर्ट में नई तफ़सीलें जोड़ने लगा। उसे कप्तान वर्नर के उफान और बड़-बड़ाहट से काफ़ी मसाला मिल गया था। रह-रहकर वह अपने चिरमिराते हुए गाल को एक हाथ से सुहला लेता था।

वर्नर ने अपने काग़ज़ात फैलाये। लेकिन शीघ्र ही उसने महसूस किया कि वह काम करने की मानसिक स्थिति में नहीं है और उसने फ़ेल्डवाबेल को पुकारा।

'टेलिफ़ोन के पास ही रहना, मैं ज़रा टहलने जा रहा हूँ।'

'मैं यह सूचित करने की गुस्ताख़ी करता हूँ, हर-कापितान, कि बाहर गजब का पाला पड़ रहा है।'

'तुम्हारे बताने की जरूरत नहीं, मैं जानता हूँ। उसी में से होकर मैं यहाँ आया था,' कप्तान ने दाँत भींचकर कहा और अपने कोट का कालर ऊपर चढ़ा लिया।

आँधी थम चुकी थी, लेकिन पाला और भी सख़्त पड़ने लगा था। धूप नहीं थी, फिर भी बर्फ़ की चमक से आँखें चौंधियाई जाती थीं। वर्नर दरवाज़े के अन्दर खड़ा था और सरोष घृणा की दृष्टि से गाँव की ओर देख रहा था। उसके सामने फैला हुआ था वह, जैसे गुदैले बिस्तर में लिपटा हुआ हो वह, मौन, बाहर से शान्त। छतें—जैसे सिर पर मोटी सफ़ेद चीज़ किसी ने ओढ़ रखी हो। बहुत कम जगहों में हवा के कारण छप्परों की फूसें बर्फ़ से खुल पाई थीं। जीवन का कोई चिह्न कहीं दिखाई नहीं देता था।

इधर-उधर जर्मन सैनिक अपने-अपने कामों में व्यस्त थे, वर्ना कोई ध्वनि, कोई गति, कहीं नहीं थी—बस मृत्यु की-सी शान्ति थी सब ओर। कुत्तों का भौंकना तक भी कहीं सुनाई नहीं देता था। उन्हें सैनिकों ने आते ही बन्दूक से ख़त्म कर दिया था। कुत्ते—जो कि जनता से कम ख़ूँख़ार नहीं थे—उनकी ओर झपट पड़े थे और उन्हें मकानों में घुसने नहीं दिया था।

प्रकट में निद्रामग्न गाँव को देखकर वर्नर को किसी छिपे हुए संकट का आभास मिल रहा था। निस्संदेह, मोर्चे पर रहना इससे कहीं अच्छा था, जहाँ कि शत्रु से आमने-सामने लगना होता है। फिर भी लोग कहते थे कि यहाँ रहना तो विश्राम करना है, अधिकृत गाँव में बैठकर न्याय और शांति की व्यवस्था करना है, बस। अच्छी न्याय और शांति की व्यवस्था थी। बोलशेविकों को भगाये हुए उन्हें एक महीना हो गया था और अभी तक वे यहाँ कुछ भी नहीं कर सके थे। इन लोगों की हठ और मौन अवज्ञा के सामने उनका सारा दल-बल, उनकी सारी योजना, सारे प्रतिबंध विफल हो गये थे। ये कूढ़-मग़ज़ आख़िर कौन-सी विजय-प्राप्ति की आशा में बैठे हुए थे? निःसंदेह, यह बात अब तो उनकी समझ में आ जानी चाहिए कि अन्त में उन्हें हथियार डालने को विवश होना ही पड़ेगा, और यह कि अगर उनमें से हरेक मूर्ख की हस्ती मिटा डालना आवश्यक भी हुआ, तो भी घटनाएँ तो अपने स्वाभाविक क्रम से अवश्य ही घटेंगी, जिसके फल-स्वरूप जर्मनों की पूर्व-योजना अन्त में सफल होगी ही। मालूम होता था कि सचमुच ही ये लोग बोलशेविक विजय में विश्वास करते थे।

दूर कहीं एक इंजन की मिनमिनाहट-सी उसके कानों में आई। उसने

अपने कोट का कालर नीचा कर लिया और कान लगाकर सुनने लगा। कोई हवाई जहाज़ ऊपर जा रहा। खुली हवा में इंजनों की भिन-भिन एक मच्छर की गुन्नाहट की तरह साफ़ सुनाई दे रही थी। हथेली से बर्फ़ की चमक को आँखों की ओर करते हुए उसने आकाश की ओर दृष्टि जमाकर देखा।

'वह रहा, हर-कापितान' दफ़्तर के दरवाज़े पर खड़े हुए संतरी ने साहस करके बताया।

वर्नर ने इंगित दिशा में देखा। हाँ, वहीं था; शुरू में बिलकुल एक पिस्सू के बराबर, फिर बड़ा होकर एक मक्खी के बराबर हो गया, और उसके देखते-देखते और भी बड़ा होता जा रहा था।

'क्या हमारा है?' कप्तान ने कुछ प्रश्न-सूचक और कुछ विश्वास के ढंग से कहा।

संतरी ग़ौर से उसकी गूँज को सुन रहा था।

'मेरे ख़याल से तो नहीं है, हज़ूर हर-कापितान। इंज़न की आवाज़ दूसरी है।'

वर्नर परेशान-सा हो उठा।

पूरे महीने भर से शत्रु का एक भी हवाई जहाज़ इस ज़िले में दिखाई नहीं दिया था। कहीं, उनके हमलों में फिर से तो जान नहीं आ गई है?

दफ़्तर की इमारत से कई सैनिक बाहर आ गये।

'बोलशेविकों का है।' उनमें से एक बोला!

सड़क अब निर्जन नहीं थी। लोग वहाँ इकट्ठा हो गये थे, मानो जमीन में से निकल आये हों। अपने-अपने घरों के आगे औरतें खड़ीं थी, और बच्चों की तो भीड़ की भीड़ वहाँ उमड़ पड़ी। वे सब अपनी आँखों पर हाथ का साया करके आकाश की ओर ताक रहे थे।

'हमारा है!' साशा चिल्ला उठा।

माल्युचिखा ने ज़ोर से उसका कंधा दबाया।

'हमारा?'

लेकिन अब तो उसके बारे में कोई संदेह नहीं रह गया था।

माल्युचिखा ने घुटने टेक दिये। उसकी देखादेखी और स्त्रियाँ भी ईश्वर को धन्यवाद देने के लिए घुटने टेककर बैठ गईं, मानों वे सब एक व्यक्ति थीं। बच्चे, सब कुछ भूलकर बीच सड़क में दौड़ आये, सिर पीछे मोड़-मोड़कर ऊपर की तरफ़ देखने लगे और हाथों को ज़ोर से हवा में हिलाने लगे।

'हमारे हवाई जहाज़! हमारे हवाई जहाज़!' वे मारे खुशी के चिल्लाने लगे।

स्त्रियों के एक ही ध्यान में मग्न गंभीर चेहरों पर आँसुओं की धार बह रही थी। हवाई जहाज़, उन्हीं का हवाई जहाज़ उनके गाँव के ऊपर उड़ रहा था, अपने पंखों पर पूर्व-दिशा से आशा का संदेश, स्वतंत्रता का चिह्न, लाल तारा, अंकित किये हुए था। पूरे महीने भर बाद यह पहला सोवियत हवाई जहाज था जो उन्होंने देखा था। यह पहला वायुयान था जिसकी घर-घर मृत्यु की-सी कर्कश घर-घर नहीं थी, जर्मन वायुयानों के इंजन की रुक-रुक कर आनेवाली-सी, जैसे सांस ही फूलती हो—ऐसी आवाज़ नही थी; यह पहिला वायुयान था जिनके पंखों पर वह काला कुंडली मारे हुए साँप का-सा चिह्न, 'स्वस्तिक' नहीं बना हुआ था।

कप्तान ने बच्चों का शोर सुना। उसने सड़क की तरफ़ दृष्टि डाली और उसने एक ऐसा दृश्य देखा जैसा कि आज तक जब से वह इस गाँव में आया था, उसने नहीं देखा था। सब तरफ़ लोग घरों से निकल आये थे। स्त्रियाँ अपने-अपने घरों के आगे घुटने टेके हुए थीं; बच्चे सड़क पर गौरैयों की तरह झुण्ड के झुण्ड फुदक रहे थे; अधेड़ लोग उस पक्षी की ओर को अपने हाथ हिला रहे थे जो उनके बहुत ऊपर उड़ रहा था। वह क्रोध से काँपने लगा।

'भगा दो इस झुण्ड को!' चिल्लाकर उसने सैनिकों को हुक्म दिया। वे एकाएकी उसका आशय नहीं समझ सके। उसने खुद रिवाल्वर निकालकर बच्चों की भीड़ के ऊपर फ़ायर किया। एक गोली की आवाज़ हुई और फिर दूसरी की। मगर कप्तान का निशाना ठीक नहीं बैठा। अपमान की चोट खाकर उसका हाथ काँप रहा था। जैसे गौरैयों के झुंड में एक पत्थर फेंकने से वे सब फुर्र-से उड़ जाती हैं, वैसे ही सब बच्चे सब दिशाओं में भाग

चले। उनकी माएँ उनके पीछे-पीछे थीं। एक मिनट में वे सब के सब ग़ायब हो गये, मानो कोई झोंका उन्हें उड़ा ले गया था। दरवाज़े जल्दी-जल्दी फटाफट बंद हो गये और वर्नर को मुश्किल से दोबारा आँख उठाकर देखने का अवकाश मिला, कि इतने अर्से में वह गाँव फिर जन-शून्य-सा हो गया, बिलकुल निर्जीव। एक भी मूर्ति कहीं दिखाई नहीं देती थी।

'तुम्हारे कान नहीं थे क्या ? मैंने तुम्हें क्या हुक्म दिया था, गधो ?' वह अपने हक्के-बक्के सैनिकों पर बरस पड़ा ; इस बात से उसे और भी क्रोध आ रहा था कि उन सबों ने देखा कि उसने पिस्तौल चलाई और इतने नज़दीक से भी निशाना चूक गया। 'आराम से खड़े हुए उधर दुश्मनों की ख़ुशी मनाना देख रहे हो। और तुम्हारी हवामार तोपों को क्या हो गया है ? कहाँ हैं तोपची ?'

ठीक उसी समय विमान-भेदी तोपों की गोलाबारी शुरू हो गई। हवाई-जहाज़ों के काफ़ी पीछे, दूर पर एक गोला फटा, एक दूसरा गोला उसके भी पीछे दूर फटा। वायुयान और ऊँचा उठ गया और दूर पहुँचकर ग़ायब हो गया।

'अच्छा ! जाग उठे हमारे तोपची ! उसकी दुम पर मसाला रख रहे थे...अब तक सो रहे थे तुम, क्यों ?'—जो सार्जेंट उसकी ओर को चला आ रहा था, उससे चिल्लाकर उसने पूछा।

'हर-कापितान, गुजारिश करने की इजाज़त हो, हम लोगों ने समझा यह हमारा हवाई जहाज़ है...मगर फिर...'

'गाँव भर की औरतों ने तो पहचान लिया, तुम्हीं लोगों की औंधी खोपड़ी थी जो कुछ सुनाई नहीं दिया। मैं बताऊँगा तुम सबों को...'

'यह पहला हवाई जहाज था, हर-कापितान, जो...' सार्जेंट अपनी सफ़ाई देने की कोशिश करते हुए कहने लगा।

'चुप रहो ! मैंने यह तुमसे दरियाफ़्त नहीं किया। पहला हवाई जहाज़ ? अगर वह एक बम तोपख़ाने के ऊपर डाल जाता, तो वह बड़ा अच्छा पहला हवाई जहाज़ होता ! ख़रदिमाग़ कहीं के !'

कप्तान जलता-भुनता हुआ मुड़ा और सीधा अपने दफ्तर में पहुँचा। वह

सर से पाँव तक क्रोध से काँप रहा था। कैसा मनहूस दिन था! कैसे मनहूस आदमी थे यहाँ के!

'वेल, मुखिया का पता लगा अभी या नहीं?...'

डरकर फ़ेल्डवावेल अपनी मेज़ के पीछे चौंककर उठ खड़ा हुआ।

'हर-कापितान, खोज जारी रखने के लिए कोई हुक्म नहीं हुआ था...'

वर्नर नाक से गुर्राता हुआ बैठ गया। इसमें शक नहीं कि इन मुर्दार खरदिमाग़ों में से कोई अपने आप किसी बात को नहीं सोच सकता था... लेकिन ज़िम्मेदारी तो सब-के-सब अकेले उसी के ऊपर आकर पड़ेगी। सदर दफ़्तर से उनके 'दोस्त' लोग इसकी फ़िक्र रखेंगे।

सहसा उसे ख़याल आया कि अगर कोई मुसीबत खड़ी हुई तो पुस्या की वजह से उसमें और भी झंझटें पैदा हो सकती हैं। उसके बारे में जो यह अफ़वाह थी कि वह स्थानीय बस्ती पर नर्मी दिखलाता था, उस पर यह एक और शोशा हो जायगा।

'उससे मुझे छुटकारा पा ही लेना है' उसने कुछ बे-मन से सोचा।

उसकी कुछ भी करने की इच्छा नहीं हो रही थी। बस, वहाँ खड़ा था वह, एक फ़ौजी अफ़सर की हैसियत से, जिस पर हरेक तरह के नागरिक व्यवस्था की जिम्मेदारियों का बोझ था, मजबूरन उसको इस मनहूस गाँव में शांति और न्याय की रक्षा करनी पड़ रही थी। तो, क्या कर सकता था वह यहाँ? वह कागज़ों फ़ाइलों रुक्कों, पत्रों और ऑर्डरों के बर्फ़ीले ढेर के नीचे दबकर रह गया था, जिसमें से वह अपना सिर नहीं निकाल सकता था। मुखिया और फ़ेल्डवाबेल बराबर सामूहिक खेती के रजिस्टरों की छान-बीन करते रहे थे, लेकिन इससे भी कोई नतीजा नहीं निकला था। सेना माँगकर रही थी अनाज गोश्त और चर्बी और मक्खन की, लेकिन इन धूर्त बोलशेविकों ने अपने ढोर-ड़ंगर पिछले पतझार में ही दूर डँका दिये थे और थोड़ी-सी जो गायें किसानों के बाड़ों में रह गई थीं, वे ख़ुद उसकी सेना के लिए मुश्किल से काफ़ी होती थीं और जहाँ तक अनाज का सवाल था उसे या तो वे साथ ले गये थे या इतनी अच्छी तरह से उसे छिपा दिया था कि किसी ढंग से भी उसका पता नहीं चल सकता था।

'और ज़मानतियों का क्या हुआ ?

'हवालात में बन्द हैं, हर-कापितान।'

'उन्हें कुछ खाने को दिया है तुमने ?'

'न नहीं...कुछ नहीं, हर-कापितान।'

'पीने को कुछ ?'

'न ही पीने को,' सैनिक और भी सकुचाते हुए अटक-अटककर बोला।

'अच्छा किया! बहुत अच्छा किया!...रोटी का एक भी टुकड़ा और पानी की एक भी बूँद उन्हें मत दो! वे हमें खाने को कुछ नहीं देना चाहते, तो फिर हम भी उन्हें कुछ नहीं देंगे...अगर उनकी जान भी निकल जाय तो निकल जाय। कोई बड़ा नुक्सान नहीं हो जायगा अगर उनकी जान ही निकल जायगी!'

उससे आज अपनी मेज़ के पास बैठा नहीं जा रहा था। वह आफ़िस से बाहर आया। घर जाने का उसका विचार हुआ लेकिन पुस्या का ध्यान आते ही फिर घर का रुख़ करने की उसकी इच्छा नहीं हुई। वह तोपख़ाने की तरफ़ मुड़ गया। तोपख़ाने में उसकी विशेष दिलचस्पी थी, यद्यपि इस क्षेत्र में वह कोई विशेषज्ञ नहीं था। उसने सोचा कि तोपचियों को निशानेबाज़ी की मश्क कराने से उसका जी थोड़ी देर के लिए बहल जाएगा।

कुछ मिनटों के बाद सैनिकों पर आदेशों और गालियों की बौछार करने की उसकी ज़ोर-ज़ोर की आवाज़ चौराहे की तरफ़ से आने लगी।

मुहाफ़िज़खाने में एक सैनिक बोला :

'आज वह आग-बगूला हो रहा है।'

'उसका पारा चढ़ने की काफ़ी वजह भी तो है...अनाज का एक दाना भी कहीं सूँघने को नहीं मिला और ऊपर से वह मुखिया भी चलता बना...'

'बड़ा घाघ निकला...'

फेल्डवैबेल ने बोलनेवाले की तरफ़ संदेह की दृष्टि से देखा।

'मालूम होता है, तुम्हें उस मुजरिम से जलन हो रही है।'

'उससे जलन की कौन-सी बात है, फेल्डवाबेल साहब', फेल्डवैबेल के

चेहरे पर अपनी सरल आँखें जमाते हुए उसने पूछा। 'वह भागकर बहुत दूर नहीं जा पायेगा। हमारे आदमी उसे पकड़ धरेंगे।'

'अगर वह हमारे पिछाये की तरफ़ गया है तो,' दूसरे ने इतना और बढ़ाया।

'और अगर वह आगे की तरफ़ गया है तो बोलशेविक लोग उसकी जीते की ही खाल खींच लेंगे। नहीं, नहीं, उससे जलन भला क्या!'

'हो सकता है कि इन मोज़ीक लोगो ने ही उसका काम तमाम कर दिया हो।'

फेल्डवैबेल सिहर उठा।

'क्या वाहियात बकते हो! यहाँ के 'मोज़ीक' कैसे उसका काम तमाम कर देते! रात बहुत देर तक तो वह यहीं बैठा रहा और फिर घर वह पहुँचा ही नहीं।'

'रास्ते में ही समझ लीजिए...'

'रात को यहाँ पर कोई नहीं निकलता। इस बारे में साफ़ हुक्म है, फेल्ड-वाबेल ने मेज़ पर हाथ पटककर कहा।

सैनिक ने कनखियों से उसकी ओर देखा मगर कोई उत्तर नहीं दिया। निःसंदेह फेल्डवेबेल एक ही दिन के अंदर उस बात को भूल नहीं गया होगा कि इस हुक्म के बावजूद, संतरियों के रहते हुए, एक छोकरा चुपके-चुपके टपरी तक चला आया था और फिर अचंभे की बात यह थी कि उसका शव इस ढंग से ग़ायब हो गया था कि कुछ समझ में नहीं आता था, क्योंकि शव आप ही आप तो एक स्थान से दूसरे स्थान को नहीं पहुँच जाया करते।

'जो कुछ भी हो, यों ठाली गप्पें मारने का मतलब क्या है! अपने-अपने काम से लगो!' फेल्डवाबेल ने कहा।

सैनिक चुप हो गये। फेल्डवाबेल का हाथ भी ठीक उसी तरह उन पर उठ सकता था जैसे कप्तान का उस पर उठ चुका था। और चूँकि इसी सुबह—उसके गाल पर उँगलियों के निशान अब भी बने हुए थे—वह खुद उसका मज़ा चख चुका था, इसलिए अब जो कोई भी उसके सामने पड़ेगा, उस पर वह अपना ग़ुस्सा हलका करेगा।

'न्यूमन किधर है ?'

'एक टोली के साथ गोश्त की फ़िराक में गया है।'

फेल्डवाबेल ने अपनी एक भौं उठाई।

'गोश्त की फिराक में ..क्या मालूम नहीं इन लोगों को—गायें वहाँ कहाँ हैं ?'

'मुश्किल से कोई गाय रह गई है, हर-फेल्डवाबेल साहब। हर-कापितान साहब ने दस तो परसों ही सदर-दफ़्तर के लिए रवाना की हैं। वे लोग अब कुछ मुर्गियों की तलाश में गये हैं।'

फेल्डवाबेल ने अपने कंधे उचकाये, और अपने काग़ज़ों में तल्लीन हो गया। मन ही मन उसे सदर-दफ्तर से टेलिफोन का भी इंतजार था। मन ही मन वह आज कप्तान की आबरू में बट्टा लगने पर ख़ुश हो रहा था। उसके मुँह पर तमाचा मार देना तो आसान था मगर अनाज का प्राप्त करना, जिसके लिए सदर-दफ्तर झल्ला रहा था—यह ज़रा मुश्किल-सा काम था। और न ही छापेमारों का पता लगाना आसान था कि आख़िर वे छिपे कहाँ हैं। वह जानता था कि यह सब बहुत अच्छी तरह कप्तान के आगे-आगे आ रहा था। और यद्यपि कप्तान के साथ काम करते हुए वह यह अच्छी तरह महसूस करता था कि यहाँ किसी को भी सफलता नहीं मिल सकती, फिर भी उसे खुशी थी कि वर्नर का निबटारा इसी मामले से हो जायगा। वह बहुत ऊँचे उड़ने लगा था, बहुत अधिक रोब जमाने लगा था, उसे अपने काम की चिंता तो बहुत कम थी मगर चुहिया-सरीखी अपनी रखैल की अधिक थी। इस सबका भुगतान उसे करना पड़ेगा अब।

इस गाँव में आने के दिन से ही जब किसी ने जर्मन फ़ौज के ऊपर दो मंज़िले से फ़ायर किया था, फेल्डवाबेल के हृदय में तभी से बदला लेने की भावना बढ़ती गई थी। जब वे उस मकान के अंदर पहुँचे, तब उस दो मंज़िले पर कोई नहीं था, लेकिन फेल्डवाबेल को एक कपड़ों की आलमारी में रखा हुआ एक खूबसूरत बादले रंग का फ़र का कोट मिल गया था। वह उसको दूसरे ही दिन भेज सकता था—मिट्ज़ी एक फ़र-कोट के लिए उससे विनती कर चुकी थी। लेकिन कप्तान ने उससे उसे छीन लिया था, अपनी उसी

बँदरिया के लिए। उनका डेरा गाँव में पड़ा था, वहाँ भला वह और दूसरा फर-कोट कहाँ से लाता ? वहाँ कुछ नहीं था सिवाय उन सड़ी-सी बदबूदार भेड़ की जाकटों के। मिट्‌जी अपने गूदड़-भरे कोट में ठिठुरती होगी, जब कि यहाँ कप्तान की रखेल फर का कोट पहनकर अकड़ती हुई घूमती थी। यह विचार आते ही फेल्डवाबेल का खून खौलने लगता था, और वह मन में यही सोचता रहता था कि सदर दफ़्तर को कप्तान की क्या बुराई लिखकर भेजूं। वहाँ भी कोई उसे पसंद नहीं करता था, क्योंकि वह हमेशा अपनी अकड़ में रहता और अपने को दूसरों से बढ़कर समझता था। किस बात में था वह सबों से बढ़कर ? फेल्डवाबेल ज़ाउस इसको कभी नहीं भूलता था कि स्वयं फ़्यूरर भी कभी एक फेल्डवाबेल ही था। फ़यूरर के प्रताप की किरणें फेल्ड-वाबेल ज़ाउस के भाग्य को भी चमका रही थीं और कप्तान को तो वह कभी क्षमा नहीं करेगा : न तो फ़र-कोट छीन लेने के लिए और न उसे मुँह पर चपत रसीद करने के लिए,—हालाँकि वह कोई पहला चपत नहीं था जो उसे रसीद किया गया था।

गिरजे के पास से लगातार कप्तान की डाट-डपट की आवाज़ आ रही थी, जिसको सुन-सुनकर जाउस मुस्करा रहा था। चिल्लाये जाओ वहीं खड़े-खड़े, इससे बहुत भला हो जायगा तुम्हारा।

सैनिक गाँव में चक्कर लगा रहे थे। उनकी टोली मकान-मकान घूम रही थी। अगर इस समय कायरता का दोष उन पर कोई लगा देता तो वे उससे बहुत बिगड़ उठते, लेकिन दिन-दहाड़े भी उन्हें इस मनहूस गाँव के अन्दर घुसते हिचक-सी मालूम होती थी और वे टोली बनाकर जाना ज़्यादा मुनासिब समझते थे।

ओखाचिका ने उनके खटखटाने पर दरवाज़ा खोल दिया और सैनिकों की ओर बिना किसी उत्साह के किंतु साहस के साथ देखा। लड़कियाँ कोनों में छिप रहीं।

'तुम लोग क्या चाहते हो ?'

'मुर्ग़ी के बच्चे ! हमें मुर्ग़ी के बच्चे दो !'

'यहाँ कोई मुर्ग़ी के बच्चे नहीं रहे, तुम सब लील गये हो।'

वे उसकी बात का मतलब समझ गये यद्यपि उसके शब्द उनकी समझ में नहीं आये। मुर्ग़ी के बच्चों की डालियों के ख़ाली गौ-घर के अन्दर झाँक कर देख लिया, अनाज-घर में पयाल को इधर-उधर फैला दिया, मानो यह मुमकिन था कि मुर्ग़ी के बच्चे वहाँ सेये जा रहे हों।

'यहाँ कुछ नहीं है' सैनिकों में से एक, जो पयाल को तितर-बितर कर रहा था, बोला।

वे एक घर से दूसरे घर, एक टपरी से दूसरी टपरी की ओर बढ़ते गये।

'मुर्ग़ी के बच्चे, हमें मुर्ग़ी के बच्चे दो।'

वान्युचिखा की एक ही मुर्ग़ी थी, उसे सरकारी माँग करनेवाली टोली से बचाने के लिए उसने तंदूर के नीचे लुका लिया; लेकिन उसका भारी दुर्भाग्य कि वह असमय ही 'कुड़क-कुड़क' कर उठी। जर्मनों ने बड़े विजय-गर्व के साथ उसे बाहर घसीटकर निकाला। मुर्ग़ी उनके पंजों से निकलकर खिड़की की तरफ़ उड़ी, उसके पंख खिड़की के शीशे से लगकर फड़-फड़ कर रहे थे।

'इधर आ! इस तरफ़ को।'

कानों को भेदती अपनी 'क्वाक्-क्वाक्' का शोर सुनाती हुई वह मुर्ग़ी बैठक की तरफ़ फड़-फड़ करती भागी, और सैनिक उसके पीछे। वह पंख फैलाये हुए दौड़ती गई, बर्फ़ की बारीक गर्द का बादल-सा उस स्थान पर उठ गया। सैनिकों ने अपना रिवालवर निकाला और फ़ायर किया। वह रक्त-सने परों की एक गेंद-सी बनकर गिरी और बर्फ़ में लुढ़ककर निष्प्राण हो गई। वह सैनिक टाँग पकड़कर उसे लटकाये हुए एक विजेता की शान से उसे झुलाने लगा।

अपनी माँग पर ज़ोर देते हुए वे पुकारते जा रहे थे—मुर्ग़ी के बच्चे, हमें मुर्ग़ी के बच्चे दो! इससे पता चलता था कि वे अब एक घर को छोड़कर दूसरे घर को जा रहे हैं।

लोग जहाँ देखते थे, वे आ रहे हैं, जो कुछ भी छिपाया जा सकता था, छिपाने की कोशिश करने लगते थे। उन्होंने अपने चूज़े तंदूरों के नीचे, बिस्तरों के अन्दर और टाँडों पर छिपा दिये थे। भूखे कुत्तों की तरह सब

तरफ़ सूँघते हुए जर्मनों ने तलाशियाँ लीं। मगर उनके हाथ बहुत ज़्यादा कुछ नहीं लगा। आख़िरकार उन्होंने तय किया कि दो-चार बची हुई गायों में से एक को ले लिया जाय, हालाँकि उनके लिए कोई आदेश उन्हें नहीं दिया गया था। लोक्यूटिका रोती थी और अपने हाथ मींजती थी। उन्होंने इतनी बेदर्दी से उसे एक तरफ़ को धक्का दिया कि वह गिरने-गिरने को हो गयी।

'स्पॉटी! स्पॉटी!'

गाय, अपनी सजल कोमल नेत्रों से—जैसे छिलके के अंदर से ताज़े निकाले हुए गहरे भूरे रंग के चसनट होते हैं—उसकी ओर देखती रही। वे उसके गले की रस्सी पकड़कर घसीटकर ले चले। बर्फ़ की चकाचौंध से उसकी आँखों को कुछ सुझाई नहीं दिया। वह ऊँची चौखट को पार नहीं कर रही थी। वह अपने आगे के पावों के बल गिरी। सैनिकों में से एक उसे दुम से पकड़कर घसीटने लगा और वह पीड़ा से रँभाने लगी।

'अरे, वह गाभिन है, लोगो, गाभिन है।' लोक्यूटिका चिल्लाने लगी। 'कैसा समय आ गया, क्या अँधेर तुम कर रहे हो। गाय तो गाभिन है।'

'अपना गला मत दुखाओ, माँ' उसके दस साल के लड़के सावका ने जर्मनों को घूरते हुए निराशा से कहा।

'ओह मेरे बच्चो, अब मैं तुम्हे खाने को क्या दूँगी। कैसे तुम्हारा पेट भरूँगी! हमारे पास तो कुछ नहीं रह गया था सिवाय स्पॉटी के, और अब उसे भी वे लोग लिये जा रहे हैं। मेरे बच्चे मर जाएँगे, मेरे बच्चे भूखों मर जाएँगे!'

'इतना मत चिल्लाओ, मम्मा,' सावका ने और भी गंभीर होकर कहा।

आख़िरकार गाय चौखट के पार हुई। वे खींचते हुए, धक्का देते हुए उसे मुक्कों से मारते हुए ले चले। लोक्यूटिका गाय के बराबर में साथ-साथ दौड़ रही थी और चाहती थी कि अपनी दूध-दही देनेवाली की चौड़ी पीठ पर कम से कम एक बार हाथ तो फेर ले।

'स्पॉटी! स्पॉटी!'

गाय ने अपनी स्वामिनी की ओर अपनी बड़ी-बड़ी सजल नेत्रों से देखा और एक लंबी खिंची हुई दर्द-भरी आवाज़ से रँभाई।

'आह मेरी सलोनी ! गाय भी समझती है कि वे क्या करने जा रहे हैं ! स्पॉटी ।'

वह दौड़ी यद्यपि उसका लंबा साया पैरों में उलझ-उलझ जाता था। उसका मुँह लाल हो गया था, और आँसुओं से गीला। वह जर्मनों और अपने चारों ओर की कुल परिस्थिति भूल गई थी, उसी समय उनमें से एक ने उसे इस ज़ोर से धक्का दिया कि वह कराहकर बर्फ़ पर गिरी। सावका दृढ़ मर्दानी चाल से चलकर उसके पास गया।

'मैंने तुमसे पहले ही कहा था, मम्मी...क्या लाभ होगा भला इससे तुम्हें ? उठो, माँ, चलो, उठो, तुम्हें इस पाले में यहाँ इस तरह नहीं पड़े रहना चाहिए।'

उसने बर्फ़ में ही अपना मुँह छिपा लिया। उसका सारा शरीर हिचकियों [illegible]िल रहा था। सावका ने जो अपने बचकाने निर्बल हाथों से उठाने का प्रयत्न किया।

'क्या करेंगे हम, अब क्या करेंगे।'

'ओह शांत तो हो जाओ तुम' उसने खीझकर कहा, 'सब की तो गायें ले गये वे ; लेकिन किसी ने ऐसा शोर नहीं मचाया जैसा तुम मचा रही हो।'

'लेकिन मुझे तो तुम पाँच जनों के पेट भरने को है,' उसने अपनी सफ़ाई में कहा।

'औरों के पास तो आठ-आठ तक हैं...'

'अब ईश्वर के लिए तुम मुझे शिक्षा मत दो। क्या यही ढङ्ग है अपनी मा से बात करने का ?'

'चलो तुम घर चलो, बस। न्यूर्का रो-रोकर अपना सिर खाली किए ले रही है।'

'रो रही है एँ ?'

वह घर की तरफ़ लपकी, तो उसके साये का दामन जो बर्फ़ से कड़ा हो गया था उसके साथ लथ-पथ होता चलता था। सावका उसके पीछे-पीछे थके हुए मनुष्य की चाल से आ रहा था।

सैनिक जो गाय को हाँके लिये जाते थे, कमांडैंट के दफ़्तर के पीछे

जाकर ओझल हो गये। वहाँ एक शेड के नीचे जर्मनों ने एक छोटा-मोटा बूचरख़ाना खड़ा कर रखा था। कुछ ही मिनटों में बेखाल की लोथ आड़े मिले हुए लट्ठों से लटकी हुई भुन रही थी।

इस बीच वर्नर अपनी डाँट-डपट से ख़ुद ही थककर दफ़्तर में वापिस आ गया था।

'हर-कापितान, मुझे इत्तला करने की इजाज़त हो कि हम गाँव से एक गाय ले आये हैं,' फ़ेल्डवेबेल ने उसे बताया।

कप्तान ने अपने हाथ से उसे सामने से हट जाने का इशारा किया। वह बेहद तंग आ गया था सप्लाई के इस सारे झगड़े से। आज एक गाय, फिर कल एक गाय; लेकिन उसके बाद के कुछ दिनों के लिए क्या इन्तज़ाम होगा? सदर-दफ़्तर ने कठोरता से यह हुक्म दिया था कि सेनाओं को अपनी ज़रूरतें उसी गाँव से पूरी करनी होंगी जहाँ उनके पड़ाव पड़े हों। एक महीना मुश्किल से बीता था, और गाँव से सब कुछ समेट लिया गया था। हंस, मुर्गी के बच्चे, बतख़ और सूअर—सब वे खा गये थे। बस, कुछ गिनती की बीमार गायें ही बच रही थीं, जब ये भी न रहेंगी तो वे लोग क्या करेंगे?

'उन्होंने हमें कुछ खाने का सामान भी भेजा है?'

'जी शराब और चाकलेट, हर-कापितान।'

'और शराब और चाकलेट के अलावा?'

'और कुछ नहीं, हर-कापितान। उन्होंने परसों हमें फिर याद दिलाया था कि हमें अपने सामान के लिए जो कुछ इस हलक़े में मिले, उसी पर निर्भर होना होगा। शराब और चाकलेट मैं आपके क्वाटर को भेज दूँ?'

'भेज दो उन्हें, और इस बात की निगरानी करना कि उन्हें रास्ते में ही लोग हज़म न कर जायँ।'

'रास्ते में हज़म नहीं हो सकती; वे सब छीपों में मुहरबन्द हैं।'

वर्नर ने अपने बड़े ओवरकोट के बटन ढीले किये और सिगरेट अपने लिए बनाई और विचारों में लीन हो गया।

'हाँ, वह, जाउस...'

'जा वोहल, हर-कापितान!'

'हमारे सप्लाई के तरीकों में कोई उसूल नहीं है। आज से आयंदा के लिए तुम कमिसरियट की जिम्मेदारी सँभालो।

'जा वोहल, हर-कापितान,' फ़ेल्डवाबेल ने जवाब दिया। उसका चेहरा क्रोध से लाल हो उठा। वर्नर दरवाज़े पर पहुँच चुका था।

'हर-कापितान !'

'अब क्या है ?'

'क्या आप इजाज़त देंगे कि हम पड़ोस के गाँवों से रसद इकट्ठा कर लें ?'

वर्नर ने कन्धे उचकाये।

'बिलकुल ही गधे मत बनो ! तुम अच्छी तरह जानते हो कि वे उस गाँव को दूसरी फ़ौजों को सौंपे गये हैं।'

'यहाँ तो कुछ नहीं रह गया है, हर-कापितान।'

'दुनिया में यह कहना सबसे आसान है कि कुछ नहीं रह गया है। तुम्हारा काम है कि कुछ ढूँढो, कुछ तलाश करो, समझे ? चारों तरफ़ निगाह दौड़ाओ। आँखें खोलकर देखोगे तो तुम्हें ज़रूर कुछ न कुछ मिल जाएगा।'

वह अपने दरवाज़ों को आवाज़ के साथ बन्द करता हुआ बाहर निकल गया।

८

घर के बाहर निकलते ही पुस्या ने अनिश्चित भाव से अपने चारों ओर देखा। उसका दिल कह रहा था कि यह सारा प्रयत्न व्यर्थ होगा, लेकिन कुर्ट ने ज़ोर दिया था और अधिकाधिक कठोर और रूखा बनकर उस पर ज़ोर देता चला गया था।

'आख़िर तो वह तुम्हारी अपनी बहन है। यह तो ज़रूर ही तुम जानती होगी कि अपनी बहन से कैसे बात करनी चाहिए। तुम तो बात करना ही नहीं चाहतीं। ख़ैर, अच्छी बात है, वह भी समय आयेगा जब मैं भी कोई चीज़ करना नहीं चाहूँगा...'

पुस्या डर गई। उसका कुल आधार कुर्ट पर ही था। अगर वह उसे इसी गाँव में छोड़ देने का निश्चय कर ले, जहाँ हरेक उसे अपना शत्रु समझता था, तो क्या होगा ?

कोट की बाँहों के अन्दर अपनी मुट्ठियाँ गर्माये वह धीरे-धीरे सड़क पर बढ़ती गई। बहन के साथ इस बातचीत का कोई फल नहीं निकलना था। वह कुर्ट को नहीं बता सकता थी कि बहन के साथ उसकी एक बार बातचीत हो चुकी थी—यानी अगर उस गर्मागर्म तू तू मैं-मैं को बातचीत कहा जाय जो कि उसके इस गाँव में आने के बाद उनके बीच हुई थी। ओल्गा ने उसके मुँह पर थूक दिया था और पुस्या की समझ में जो कुछ आ सका था, वह यही कि खाई में पड़े हुए वास्या के सम्बन्ध में क्रोध के मारे उसके मुँह से शब्द नहीं निकल रहे थे। ओल्गा चाहती थी उसका अपमान करना, उसको नीचा दिखाना, क्योंकि वह उस स्त्री के मकान में रहती थी जिसका लड़का लड़ाई में मारा गया था। पुस्या को उससे क्या वास्ता था? लेकिन ओल्गा को यह महसूस हुआ था कि पुस्या का ज़रूर वास्ता था; और उसने पुस्या को बुरा-भला कहा था और चल दी थी। बस। फिर कैसे अब वह उसके पास जाकर उससे बातें कर सकती थी?

सड़क के किनारे के पेड़ पाले के बर्फ़ से मढ़े हुए चाँदी के-से लग रहे थे। बर्फ़ धूप में चम-चम चमक रही थी। उसकी बेदर्द चमक आँखों में गड़ती थी। पुस्या ने एक आह भरी और उसे सेरयोज़ा की याद आ गई। नहीं, सेरयोज़ा कभी उस पर नहीं झल्लाया था, कभी उस पर नाराज़ नहीं हुआ था। लेकिन अब किस लिए वह सेरयोज़ा की याद करे? उसका पति तो कुर्ट था।

क्रोध की एक लहर उसके बदन में खेल गई। कैसे उसका साहस हुआ, लेकिन तो साहस उसका हुआ, वह जानती थी, और यह भी कि उसके बस में कुछ नहीं था। कुर्ट के प्रति उसका रुख़ बिलकुल वैसा था जैसा सेरयोज़ा के प्रति रहा था। इसका अर्थ यह था कि मनमुटाव के लिए दोष उसको नहीं दे सकते थे। बात यही थी कि कुर्ट किसी तरह से भी सेरयोज़ा के समान नहीं था, कि वे आपस में बिलकुल भी नहीं मिलते-जुलते थे।

जिस घर में ओल्गा रहती थी उसके पास वह पहुँच भी गई थी। बस कुछ ही क़दम रह गये थे। अब क्या करे वह? दरवाज़ा खटखटाये और अन्दर चली जाय? नहीं, यह असम्भव था। पुस्या वहाँ एक क्षण तक तो कुछ निश्चित न कर सकी, खड़ी रही; लेकिन गर्म जूतों के बावजूद भी पाले

से उसके पंजे ठिठुरकर सुन्न होने लगे, और वह मुड़ी और वापिस लौट पड़ी, कुर्ट के जो जी में आये करे, जितना चाहे उस पर झल्लाये, बड़बड़ाये, लेकिन इसमें कोई तुक नहीं था कि वह दोबारा जाकर ओल्गा के तीखे तानों का निशाना बने। अगर कोई था भी तो वह उलटे अर्थ में। लेकिन वह जानती थी कि उस बातचीत से कुछ भी — कुछ भी — हाथ नहीं आयेगा। वह कुछ क़दम और आगे बढ़ी, मगर फिर कुछ सकते-से में पड़ गई। क्या करना चाहिए उसको? कितना अच्छा होता अगर वे लोग ओल्गा को भी मार डालते जैसे उन्होंने ओलेना को मार डाला था। तब इन सब झंझटों और मुसीबतों का सामना करने से वह बच जाती।

पुस्या ने एक नज़र उस मकान पर डाली, जिसमें उसकी बहन रहती थी— कोई दरवाज़ा खोलकर बाहर आ रहा था। बर्फ़ पर इधर-उधर उसके अनिश्चित-से क़दम पड़ने लगे, जैसे कोई चोरी करने में पकड़ लिया जाय, और वह कनखियों से उस घर की ओर देखने लगी। वह ओल्गा नहीं थी, बल्कि वह तो व स्त्री थी जिसके साथ ओल्गा रह रही थी। वह दरवाज़े में ही खड़ी रही, और सूर्य की चकाचौंध से अपनी आँखों को बचाते हुए ध्यान से दूर फ़ासले की ओर देखने लगी, फिर उसने दरवाज़े को ज़रा और खोला, और ज़ोर से कुछ कहा। कुछ लोगों की भीड़ फौरन् उसके चारों तरफ़ इकट्ठा हो गई। और वे सभी सूर्य और बर्फ़ की चकाचौंध से अपनी आँखों को बचाते हुए उसी दिशा में ध्यान से देखने लगे।

फेडोसिया क्रावृचुक ने जब सड़क पर भीड़ देखी तो वह भी बाहर निकल आई। वह भी उसी ओर देखने लगी। एक क्षण के लिए तो उसका हृदय जैसे रुक गया, फिर बहुत ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगा, जैसे किसी गिरजे के घंटे में उसका लटकन ज़ोर-ज़ोर से बजने लगे। सड़क पर धीरे-धीरे गाँव की तरफ़ कुछ लोग एक क़तार में चलते हुए नज़दीक आते जा रहे थे और उनके बीच-बीच में किर्चें भी धूप में चमक उठती थीं।

'वे लोग जर्मन हैं?' कोई पूछ उठा।

'तुम्हारे ख़याल में यहाँ अभी काफ़ी जर्मन नहीं! और ज़्यादा जर्मन हों, बस इसी की ज़रूरत हमें रह गई है...'

'क्या वे सोचते हैं कि इस गाँव में आकर उन्हें टुकड़े मिल जायेंगे ?'

'लेकिन वे जर्मन नहीं हैं !' सहसा वान्युचिखा वायलिन के एक कसे हुए तार की टंकार के-से स्वर में घोषित कर उठी : 'अरी बहनो, देखो, देखो तो उन्हें, वे जर्मन नहीं हैं !'

'तुम्हारा तो दिमाग़ फिर गया ! जर्मनों के सिवाय और कौन हो सकता है ?'

'वे हमारे ही आदमी हैं, हे ईश्वर ! वे हमारे ही आदमी हैं जो चले आ रहे हैं !'

'अरी औरत, आँख खोलकर देख ! वे कैसे हमारे आदमी हो सकते हैं—दिन की रोशनी में, खुली सड़क पर, इस तरह मार्च करते हुए !'

'अम्माँ, उनकी टोपियों पर तारे हैं, तारे !' ग्रिश्का वान्युक अपनी पतली पिपिहरी-सी आवाज़ में चिल्लाया।

'क्या बक रहा है तू ? तुझे दिखाई दे रहे हैं क्या वे ? क्या सचमुच तू उन्हें देख सकता है ?'

बर्फ़ की चकाचौंध के मारे वे देख नहीं पा रहे थे। गाँव के निकट आते हुए लोगों को पहचानने की कोशिश में वे लोग भरसक अपनी आँखों पर ज़ोर दे रहे थे।

'हमारे आदमी हैं ? कि जर्मन ?'

'कैसे हो सकते हैं वे हमारे आदमी ? ग्रिशा को तो अपने मन से दिखाई दे रहा है...जर्मनों को देखो अपनी-अपनी चौकी पर शांत खड़े हैं, फ़ायर करने का उनके दिल में ख़याल तक नहीं आ रहा है...'

'मगर कुछ हो, ग्रिशा सही कह रहा है।' अलक्जांडर सहसा बोला। 'वे टोपियाँ अपने ही लोगों की हैं।'

'अपने ही लोगों की ?'

'हाँ, मगर इसमें ख़ुश होने की कोई बात नहीं। अब और ध्यान से देखो, तो पहचान लोगे उन्हें।'

सब पर मौन छा गया। वे अब साफ़ उन लोगों को पहचान सकते थे। लाल सैनिकों का एक दल सड़क पर मार्च करता आ रहा था। वास्तव में

वे मार्च नहीं कर रहे थे। वे अपने पाँवों को बर्फ़ में घसीटते हुए चल रहे थे और उनके दोनों तरफ़ जर्मनों का सशस्त्र रक्षा-दल चल रहा था।

'लाल फौज़ के कैदियों को ला रहे हैं वे लोग' किसी ने निराश स्वर में धीरे से कहा।

'वे लोग हमारे आदमियों को लिये आ रहे हैं...'

और अधिक लोग सड़क पर आकर जमा हो गये। स्तंभित नेत्रों से वे उन्हें नज़दीक आते देख रहे थे। अब वे साफ़ देख रहे थे कि मुश्किल से वे लोग चल रहे थे। अपने पाँवों को उठाने में जो श्रम उन्हें करना पड़ रहा था, उससे वे पूर्णतया परास्त हो गये थे। जर्मन सैनिक जो उन्हें ले जा रहे थे, बराबर उन्हें धमकी देते हुए और डाँटते हुए चल रहे थे।

'ईश्वर दया करे! घायल भी तो इनके बीच में हैं...'

'उन्होंने अपने-अपने जूते निकाल दिये हैं। वे नंगे पाँव मार्च कर रहे हैं।'

'वे खून से भरे हुए पाँव, देखो, सोन्या।'

बराबर से गुज़रते हुए एक जर्मन ने बर्बरता से चीखकर दरवाज़ों के आगे खड़े हुए लोगों को डाँटा, लेकिन किसी ने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया। सब लोग आते हुए दल को ध्यान से आँखें गड़ाकर देखते रहे।

'हे ईश्वर, दया करो...'

वे लोग गाँव के पास पहुँच चुके थे। लोग अब नजदीक से इन कैदियों के यातना-त्रस्त रक्तहीन चेहरों को देख सकते थे जो ठंड से नीले पड़ गये थे लाल सैनिकों में से एक तो, जिसका सैनिक पद दूसरे दर्जे का था, बड़ी मुश्किल से अपने आपको घसीटकर चल रहा था। वह बार-बार लड़खड़ा जाता था, जैसे वह नशे में हो।

'हे, यू!' जर्मन रक्षक-दल में से एक ने चिल्लाकर उसे डाँटा, और ज़ख्मी क़ैदी औरों की तरह चलने की कोशिश करते हुए सीधा तनकर चलने लगा। जब वह ज़्यादा लड़खड़ाने और ठोकर खाकर गिरने लगा तो उसके एक साथी ने जर्मनों की आँख बचाकर उसे सहारा देने की कोशिश की, लेकिन तुरंत रायफल का एक प्रहार सहारा देनेवाले हाथ पर पड़ा जो एक टूटी डाल की तरह उसकी बग़ल में लटककर रह गया।

'हे ईश्वर, दया करो...'

बड़ी पीड़ा के साथ वे अपने नंगे ज़ख्मी पाँवों को घसीटते चल रहे थे, और बर्फ़ पर रक्त के निशान छोड़ते जा रहे थे। वे गिर-गिर पड़ते थे, और फिर हाथों के बल उठकर चलने लगते थे। रायफ़ल के कुंदों का प्रहार उन पर बरसता रहता था।

पूस्या भी औरों की तरह खड़ी इन लोगों को देख रही थी। उनके भयानक मुर्दने चेहरों और बुखार से जलती हुई आँखों को, गंदे चीथड़ों पर, जो पट्टियों का काम दे रहे थे, लाल-लाल जमा हुआ ख़ून उनके काले होते, पाले से मारे हुए पाँवों को, उसने देखा। चिढ़ाती हुई-सी उसकी स्वाभाविक मुस्कराहट उसके होंठों पर जमकर रह गई।

'यह चिढ़ाना और मुस्कराना बंद रखो' उसने अपने कान में किसी को धीरे से फूंकार मारते सुना, और चौंककर पीछे हट गई। यह ओल्गा थी। होंठ भींचे, मुट्ठियाँ बाँधे, भवें ताने हुए, वह कैदियों को ध्यान से देख रही थी। और सहसा सामने के लाल कुहरे में उसको अपनी बहन का दुबला-दुबला-सा पीला चेहरा, फर-कालर के ऊपर उसके कान के बुन्दों की चमक और उसके रँगे हुए होंठों पर बराबर चिढ़ाती हुई-सी एक मुस्कान दिखाई पड़ गई।

'यह चिढ़ाना-मुस्कराना बंद करो।'

पुस्या एक क़दम पीछे हट गई। वह सीधी ओल्गा की क्रोध से फैली हुई आँखों और काँपते होंठों की ओर देखने लगी।

'मैं चिढ़ा नहीं रही हूँ,' उसने आँखों को झपते हुए कहा।

'ज़रूर तुम चिढ़ा रही हो,' ओल्गा बोली और अपनी पूरी ताक़त से एक तमाचा उस स्थिर, अर्थहीन मुस्कराहट, उस पीले-पीले-से गाल पर, उस ज़र्मन अफ़सर की रखैल के मुँह पर मारा।

पुस्या एक कुत्ते के पिल्ले की तरह चिल्ला उठी, पीछे को सिमट गई और सहसा रो उठी, अपना मुँह हाथों से दबा लिया, और अपने फर-कोट के लंबे दामन से उलझती-लड़खड़ाती हुई, जल्दी-जल्दी अपने घर की ओर चल दी।

और इधर ये नवागंतुक मार्च करते हुए बढ़ते रहे। वे गाँव की भीड़ के बराबर में आ गये। अपनी बुखार से जलती हुई आँखें उन्होंने दरवाज़ों पर खड़ी स्त्रियों की तरफ़ फेरीं।

'रोटी', उनमें से एक ने कहा। रायफल का कुन्दा उसके सिर पर आकर पड़ा। लेकिन तभी उसकी याचना एक दूसरे कैदी ने दुहराई।

'रोटी...एक हफ्ते से हमने कुछ नहीं खाया...'

'हे परमेश्वर, हे परमेश्वर दया करो...' बान्युचिखा कराही।

और हरेक अपने घर के अन्दर दौड़कर गया, रसोईघर में पहुँचा, और काँपते हाथों से बचे हुए खाने में से गठरियों, हाँड़ियों और मूर्ति-चित्रों के पीछे छिपे हुए ताक़ों में से, जो कुछ भी हाथ आया, लेकर दौड़ा।

'ईश्वर की दया हो! जल्दी करो, जल्दी...'

सबसे पहले बान्युचिखा अपने घर से भागती हुई आई। रक्षक-दल की परवाह न करती हुई वह सैनिकों की क़तार में टूट पड़ी। उसके हाथों में काली रोटी का एक बड़ा-सा टुकड़ा था। यह आख़िरी टुकड़ा था जो उसने बच्चों के लिए छोड़ रखा था।

'मारो इसे!' एक जर्मन चिल्लाया। लेकिन न उसने कुछ देखा, न उसे कुछ सुनाई दिया। उसने धक्के से सैनिक को एक तरफ़ कर दिया और एक ज़ख्मी लाल सैनिक के हाथों में रोटी पकड़ाने की कोशिश करने लगी।

'मारो इसे!' जर्मन फिर चिल्लाया और रायफ़ल घुमाकर उसके पेट में मारी।

बान्युचिखा बर्फ़ पर गिर पड़ी, मुँह से कोई आवाज़ भी नहीं निकली। जर्मन ने पड़ी हुई रोटी को ठोकर मारकर एक तरफ़ कर दिया। टुकड़ा नाले में चला गया। उन प्रेत-रूप हड्डे क़ैदियों में से एक उसकी ओर लपका। फ़ायर की आवाज़ हुई। क़ैदी सड़क के किनारे गिर पड़ा।

उन स्त्रियों ने बेहोश पड़ी बान्युचिखा की ओर इतना भी नहीं कि एक दृष्टि भी डाली हो। वे क़ैदियों की तरफ़ दौड़ रही थीं, और भूतल में सेकी हुई रई की रोटियाँ उनके हाथों में पकड़ाने या खोंसने की कोशिश कर रही थीं। चौकी में से जर्मन सैनिक दौड़े हुए आये।

'जल्दी-जल्दी बढ़ो !' फ़ेल्डवाबेल बर्बरता से चिल्लाया। सैनिक स्त्रियों पर पिल पड़े, अपनी रायफ़लों से मार-मारकर उन्हें भगा दिया। अपनी बाहों से सरों को बचाती हुई, स्त्रियाँ घुटनों के बल बैठकर क़ैदियों के पैरों के नीचे से फेंककर रोटियाँ देने लगीं। एक क़ैदी टुकड़ा उठाने के लिए झुका। फिर फ़ायर हुआ और वह आदमी अपने सिपाहियों के पैरों के पास गिर पड़ा।

'यह मत करो, नागरिको, बेकार ही अपने प्राण जोखम में मत डालो !' एक नौजवान ज़ख़्मी सैनिक ने जो लड़खड़ाकर भी मुश्किल से चल सकता था, सारी भीड़ को संबोधन करते हुए अपनी ऊँची और हृदय को बेधती हुई आवाज़ में पुकारकर कहा। 'महिलाओ, रहने दो। चली जाओ; माताओ, इससे कोई फ़ायदा नहीं। वे हमें एक भी टुकड़ा उठाने न देंगे। लोग क्यों बेकार अपनी जान दें ?'

और सचमुच उन स्त्रियों ने देखा कि ऐसी परिस्थिति में कुछ भी करना उनके बस में नहीं था। दो मृत तो सड़क पर पड़े ही हुए थे। माल्युचिखा ने बड़ी कठिनता से अपने आपको ज़रा उठाने की कोशिश की। और सब लोग रोटियाँ हाथों में लिये उन लाल सैनिकों को असहाय-से देखते रहे जो निराश दृष्टि से अपने खाने की तरफ़ देखते हुए चले जा रहे थे।

'साशा !' माल्युचिखा ने अपने बेटे को पुकारा। 'हम कुछ नहीं कर सकते यहाँ। कुछ लौंडों को साथ में लो, और नज़दीक के रास्ते से जाकर मोड़ पर पहुँचो और वहाँ सड़क पर रोटियाँ डाल दो। मनहूस 'जेरी'-जर्मन उसे न देख सकेंगे; और हमारे नौजवान शायद एकाध टुकड़ा किसी तरह उठा लें।'

बच्चे उड़ गये, हवा हो गये। स्त्रियाँ अपने दरवाज़ों पर लौट आईं। वे रो रही थीं, अपने रुमालों के कोने दाँत के नीचे काट रही थीं, मूक व्यथा से विकल, अस्थिर, डोल रही थीं।

'अच्छा, तुम्हारा जी कैसा है ?' फ्रोज़्या ग्रोखाच ने बान्युचिखा को पानी का एक गिलास देते हुए और उसकी कनपटी पर बर्फ़ रगड़ते हुए पूछा।

'बान्युचिखा बैठ गई, और अपनी आँखें हाथों से ढाँपकर छोटी-छोटी पीड़ा-भरी हिचकियाँ लेने लगी।

'ज़्यादा दुख रहा है ?'

'नहीं, नहीं...तुम क्या सोचती हो, मैं क्या हूँ, फ्रोज़्या...'

'रोओ नहीं ..सब ठीक हो जायेगा। ज़रा-सी देर पड़ी रहो, तुम्हें पहले से कुछ आराम महसूस होगा।'

'पागल हो तुम, फ्रोज़्या, मैं इस वजह से नहीं रो रही हूँ। मुझे ज़रा कमज़ोरी-सी आ गई थी, लेकिन वह तो थोड़ी देर में चली जायगी। सुन, फ्रोज़्या, मैं यह सोच रही थी कि अगर प्योटर की भी ऐसी ही दशा हुई हो, तो...सुन रही हो ! तो इससे अच्छा है कि वह अपनी पहली ही लड़ाई में मर जाय, इससे अच्छा है कि उस पर बम फट जाय, इससे यह अच्छा है कि टैंक उसे कुचल दे...'

व्याकुल, दबी हुई साँस में उसने सीधे उस लड़की के सामने चुपके-चुपके ये शब्द कहे। फ्रोज़्या ने उसका हाथ दबाया।

'अपना दिल मज़बूत करो, दिल मज़बूत करो...'

'तुम सुन रही हो, जो मैं कह रही हूँ ? अगर उसके लिए और कोई रास्ता न रह जाय, तो उसे चाहिए कि अपने कपाल में गोली मार ले, दस्ती गोले से अपने को ख़त्म कर दे ; मगर ऐसी दशा को न पहुँचे—ऐसी दशा को न पहुँचे !'

'सच है...लेकिन अब तुम उठो तो ज़रा, मैं तुम्हें सहारा दे रही हूँ। यहाँ तुम ठंढ से अकड़ जाओगी।'

बान्युचिखा पीड़ा के साथ उठ खड़ी हुई। वह लड़की के कंधे का सहारा लिये हुए थी, और लड़की बड़ी मुश्किल से क़दम रखती हुई घर की तरफ़ चली। ग्रिशा ने अपनी मा को बड़ी-बड़ी डरी हुई आँखों से देखा। वह कराहकर बिस्तर पर गिर पड़ी। उसका सारा शरीर दर्द कर रहा था और जी भी अन्दर से ख़राब हो रहा था। लेकिन उसका ध्यान उस तरफ़ नहीं था। 'इधर आओ ग्रीशा !'

लड़का पलंग के पास आया।

'ग्रीशा, तू सुन रहा है जो कुछ मैं कह रही हूँ ?'

'मैं सुन रही हूँ, मगर अभी तो तुमने कुछ कहा नहीं।'

'पर, तुम समझती ही हो, मैं डर रही हूँ...तुम जानती हो, कैसा है वह, अपने आप कोई बात नहीं सोच सकता। हर बात में सलाह लेने आता है, उसको यही जानने को रहता है—क्या होगा, कैसे होगा...अब वहाँ बेचारे को कौन ये बातें सुझायेगा ?'

'वह अब फ़ौज में है। वहाँ जैसा हुक्म होता है, वैसा ही उसे करना होता है। बस, यह समझ लो,' फ्रोज़्या ने कहा, और गीले कपड़े के टुकड़ों को उसके पेट पर रखने लगी, जहाँ कि एक बड़ा-सा नील का दाग़ फैलकर बड़ा होता जा रहा था।

'वहाँ तो जैसा हुक्म—यह सच है,' बान्युचिखा ने कहा।

'इधर आओ, ग्रीशा, मैं तुम्हारा मुँह धो दूँ। देखो, कैसे गंदे हो रहे हो तुम ! और रोओ नहीं। तुम देख रहे हो, मम्मा उस तरफ़ किस तरह पड़ी हुई हैं। एक जर्मन ने उन्हें बंदूक से मारा, मगर वह रो नहीं रही हैं।'

बालक अपनी गोल गोल बड़ी-बड़ी आँखों से अपनी मा को देखता हुआ खड़ा रहा, और उँगली से नाक कुरेदने लगा।

'उँगलियाँ नाक से निकालो, बेटे,' बान्युचिखा ने डाँटा। 'तुम्हारा बाप एक लाल सैनिक है, और तुम खड़े हुए अपने नाक में उँगली दे रहे हो !' वह फिर कराही। 'ओह़, फ्रोज़्या, एक टुकड़ा भी रोटी का, एक छिलका भी वे नहीं पा सके ..वे सब मर जाएँगे, बेचारे, उनका मर जाना तो निश्चित है।...सोचो तो सही, हमारे गाँव से वे गुज़रें, और कोई उन्हें रोटी का एक टुकड़ा भी न दे सके—न खाना, न पानी।...अपने ही देश की भूमि पर इस तरह मरना !...कहाँ खींचे लिये जा रहे थे वे उन्हें ?'

'लोग बताते हैं कि एक कैंप रूडी में है। मुझे लगता है, वे उन्हें वहीं लिये जा रहे हैं।'

'वे रूडी तक कैसे चलकर जा सकते हैं ? मुश्किल से तो वे अपने पाँवों पर खड़े हो सकते हैं। कितने वर्स्ट* यहाँ से होगा !...या, वहाँ तक वे लोग नहीं पहुँच सकते, और फिर वे तो रास्ते में ही उन्हें मार डालेंगे जैसे उनमें से दो को उन्होंने मार दिया...'

---

* रूसी मील, अनु०

'छोकरे गाँव के पार बाहर गये हैं, ताकि उनके लिए रास्ते में कुछ रोटियाँ डाल आयें!...'

'अगर उन्होंने ठीक ढङ्ग से रोटियाँ बिखराईं, तब।...सड़क के बीचो-बीच...हमारे जवान आगे-आगे हैं और रक्षक-दल उनके पीछे-पीछे...'

'उसे उन छोकरों पर ही छोड़ दो, वे समझ जायँगे क्या करना है,' फ्रोज़्या ने आश्वासन देते हुए कहा। 'हमारे बच्चे सोने से तुलने लायक़ हैं। तुम जानती हो इस बात को।'

बान्युचिखा ने मौन रहकर अपना सिर हिलाया। अचानक उसे नींद मालूम होने लगी। उसकी तबीअत गिरने लगी और उसका जी बेतरह मतली करने लगा, लेकिन जो चीज़ उसे सबसे अधिक यातना पहुँचा रही थी, वह उस लाल क़ैदी की गढ़े में घुसी हुई आँखों की याद थी, और मरभुखों की तरह जल्दी से उसका उस रोटी के लिए लपकना जो उसे नहीं मिली थी।

'ओख़...!'

'दुख रहा है?' फ़्रोज़्या ने चिंतित होकर पूछा।

'नहीं, नहीं...अगर मैं ज़रा सो पाती...'

'हाँ, तुम सो जाओ! नींद का आना तुम्हारे लिए बहुत ही अच्छा होगा। उसके बाद जी शांत हो जायगा', लड़की ने कहा।

बान्युचिखा ने आँखें बंद कर लीं। लेकिन उसकी बंद आँखों के सामने भी उस युवक का नीला चेहरा, जिस पर मृत्यु ने मुहर लगा दी थी, और उसकी टोपी के अंदर से एक बालों का गुच्छा निकला हुआ। पागलों की तरह कैसे वह काली रोटी के टुकड़े पर आँखें गड़ाये हुए था! उसको लगा कि जीवन में वे क़ैदी उसे कभी नहीं भूलेंगे, जो बर्फ़ पर घिसट रहे थे, बर्फ़ में गिर-गिर पड़ते थे, या वह जवान लाल सैनिक जिसे वह एक रोटी का टुकड़ा नहीं दे सकी थी।

इधर जो छोकरे रोटी लेकर गये थे, वे गहरी बर्फ़ के बीच में से होकर सड़क की मोड़ की तरफ़ दौड़े जा रहे थे। घरों और बाड़ों के पास होकर जाना तो असम्भव था; लेकिन खुले मैदानों में बर्फ़ अनाशित रूप से गहरी थी। ओस्का चेचोर उसमें एकदम कंधों तक समा गया।

'साश्का ! साश्का !'

'चिल्लाओ नहीं, जर्मन लोग तुम्हारा चिल्लाना सुन लेंगे और दौड़े हुए इधर ही आ जायँगे। बहुत छोटे हो तुम। वापिस लौट जाओ।'

'वापिस नहीं जा सकता।'

'निकल आओ किसी तरह कोशिश करके। आओ, चले आओ, लड़को, हम लोग आगे बढ़े चलें !'

ज़मीन बहुत ऊँची-नीची थी, सब तरफ़ खाइयाँ, गड्ढे, दरारें और सबको हवाओं ने मुलायम बर्फ़ से पाट दिया था। ज़मीन में जो गड्ढे थे, वे पूरे धोखे की टट्टी बन गये थे। उनके ऊपर से बर्फ़ की एक सख़्त पर्त जम गई थी, जिसके ऊपर कुछ मिनट के लिए तो चलना संभव था; मगर जो एकाएक पाँव के नीचे कड़ाक् से टूट जाती थी, जैसे नदी के ऊपर बर्फ़ की तह टूट जाती है, और छोकरे एक खाई के नीचे पानी के गहरे बहाव में बुरी तरह पड़ जाते थे। वे हाथों की मदद नहीं ले सकते थे, क्योंकि हाथों में रोटियाँ, रई के केक और आलू थे। और फिर कड़ी जमी हुई बर्फ़ से, कि जैसे काँच के टुकड़ों से, उनके हाथ कट-कट जाते थे। ये बच्चे एक-एक करके पीछे छूटने लगे। लेकिन साशा और साव्का लोकुट जी कड़ा करके आगे बढ़ते गये। जहाँ सड़क एकदम मुड़ जाती थी, वहाँ पहुँचने के लिए उन्हें गाँव के एक तरफ़ को घूमकर एक चौड़े खुले हुए खेत में से होकर सीधे जाना पड़ता था।

'जल्दी करो, जल्दी करो !' साशा उन्हें हिम्मत दिला रहा था। उसकी साँस फूल आई थी और वह पसीनें में तर-बतर था। पसीने की धार बहकर उसके कालर के अंदर जा रही थी और कमर पर छोटी-छोटी लकीरों के रूप में बह रही थी। पसीने के कारण उसकी निगाह भी धुँधली हो गई थी, और पसली के पास ज़ोर का दर्द उठने के कारण कभी-कभी उसकी आँखों में अँधेरा-सा छा जाता था। उसके पाँव इस तरह फँसकर रह जाते थे जैसे किसी नदी के कीचड़ में या अंदर की ओर खींचते हुए दलदल में फँस गये हों। कई बार वह गिरा और उठा, उसकी उँगलियाँ जमी हुई बर्फ़ की तेज़ पपड़ियों से कट गई थीं। उसके छिले हुए हाथों के ख़ून से बर्फ़ तुरंत गुलाबी हो जाती थी। यह अच्छा था कि वह औरों की तरह रोटी को अपने हाथ में

नहीं लिये हुए था। उसने आते वक्त जल्दी से सूती झोला, जिसमें वह किताबें रखकर स्कूल ले जाता था, उठा लिया था। उस झोले के कारण उसे बड़ी आसानी हो गई थी। उसमें रोटी हिफ़ाज़त से भर दी गई थी और उसके हाथ बर्फ़ की ढेरियों पर चढ़ने में मदद देने को ख़ाली थे। साबूका, जीभ ज़रा-सी बाहर निकाले हुए उसके पीछे-पीछे चला आ रहा था। साशा के पद-चिह्नों पर चलते आना आसान था, नहीं तो वह पीछे ही रह जाता, क्योंकि उससे वह छोटा और कमज़ोर था। ऐसा लगता था कि बर्फ़ से पटे हुए खेत सीमाहीन हैं। फिर वसंत ऋतु में छोकरे अपने-अपने ढोरों को चुगाने के लिए यहीं आते थे और यह मैदान कोई इतना बहुत बड़ा भी नहीं था। एक छोर से दूसरे छोर तक उस नर्म-नर्म छोटी-छोटी घास के मैदान को पार करना उसके लिए काफ़ी आसान था। चराई के इस मैदान से वे काफ़ी परिचित थे, क्योंकि चलना सीखने के बाद से वे यहीं दौड़ते फिरते रहे थे। लेकिन आज तो ऐसा लगता था जैसे यह एक विचित्र, अज्ञात, सीमाहीन मरुस्थल-सा बन गया है। और वे छोटी-छोटी पहाड़ियाँ कहाँ चली गई थीं, जिन पर वे कितनी ही बार नंगे पाँव दौड़ने का खेल खेल चुके थे, और किधर थीं वे खाइयाँ, जिनको वे कूद-कूदकर पार किया करते थे? बर्फ़ के नीचे बड़ी ऊँची-ऊँची कूबें-सी निकली हुई थीं और थोड़ी-थोड़ी देर बाद अचानक ही वे भयानक दरारों में बुरी तरह फँस जाते थे। रास्ता ढूँढ निकालने की उनकी कोशिश, यह पता लगाना कि कहाँ ज़मीन बराबर है, कहाँ बर्फ़ के नीचे खाई-खड हैं, सब व्यर्थ था। बर्फ़ चुपचाप पड़ी थी, उसने अपने रहस्य खोलकर कभी नहीं दिखाने थे। छोकरे रास्ते से भटक गये, कमर-कमर तक, बग़ल और छाती तक बर्फ़ में धँस गये, खड्डों पर जमी हुई बर्फ़ के तेज़ किनारों से उनकी बाहें छिल गईं। उस मुसीबत की यात्रा का कहीं अंत नहीं आता था।

साशा एक गड्ढे में गिर पड़ा और किसी तरह फिर निकलकर ऊपर आया। बर्फ़ उसके मुँह में भर गई थी, जो उसने थूक दी। 'जल्दी करो!' उसने हाँफते हुए कहा।

थैला जो उसके बराबर में लटक रहा था, नर्म होकर भारी हो गया।

लेकिन इससे कोई हर्ज नहीं था, केक को वे लोग खा लेंगे, चाहे वे सीले ही क्यों न हो जायँ। उसके पाँव गीले हो गये थे और उसकी पैंट पूरी तरह भीग गई थी। जब बर्फ़ पर कुछ क़दम चलने की उसने कोशिश की तो गीले कपड़े उसके बदन पर जमकर रह गये। पाले के निर्दयी नाख़ून उसकी हड्डी तक घुसते जान पड़ते थे। इसके अलावा, लाल-काले धब्बे उसकी आँखों के आगे नाच रहे थे; उसे और कुछ नहीं दिखाई दे रहा था। उसकी कनपटी में ख़ून इस तरह ज़ोर-ज़ोर से फड़क रहा था कि उसे लगा कि अब उसकी नस फटने ही वाली है, जिसमें से ख़ून की धार बर्फ़ पर धरधर गिरने लगेगी।

'जल्दी करो!' उसने भारी स्वर में कहा, जिसने साव्का को आगे बढ़ाने में कोड़े का काम किया, हालाँकि बहुत देर से साशा यह भूल भी चुका था कि उसके पीछे-पीछे कोई आ रहा था, क्योंकि उसे ऐसा मालूम होता था कि वह अब किसी भी क्षण गिरकर ढेर हो जायगा और फिर उठ न सकेगा।

साव्का बहुत पीछे रह गया। लेकिन साशा जानता था कि चाहे जो हो, बस, उसे सड़क तक ज़रूर पहुँच ही जाना चाहिए, कि रोटी के वे टुकड़े ले जाकर उसे सड़क पर ज़रूर-ज़रूर छोड़ने हैं। कैदियों को खाने का टुकड़ा देने का यह आख़िरी सम्भव अवसर था। अगर वह नहीं दे सका तो वे लोग उस राख के ढेर लेवानेव्का गाँव से आगे, रूडी और बंदी-कैंप की ओर हँका दिये जाएँगे, जहाँ (लोग बहुत दबी ज़बान एक-दूसरे से बताते थे) क़ैदी लोग सैंकड़ों की तादाद में कँटीले तारों के पीछे मर जाते थे—जहाँ उन्हें रोटी का एक टुकड़ा भी, सूप का एक चम्मच भी नहीं मिलता था, बस वे ऐसे ही मर जाते थे। केवल अकेला वही, साशा ही, रूडी-कैंप आने के पहले लाल सैनिकों की कुछ मदद कर सकता था। और उस छोकरे को लग रहा था कि कि उसके थोड़े से रई के जले हुए केक उन सबों को बचा लेंगे, भूखों मरने से उन सबकी रक्षा कर लेंगे।

बस, एक छोटी-सी पहाड़ी और। जल्दी करो, जल्दी—बर्फ़ के अन्दर से पैर खींचकर निकालना और ज्यों-त्यों और बढ़ना मुश्किल होता जा रहा था, फिर भी वह अपने आपको साहस दिये जा रहा था। उसकी पसली दुखने लगी थी, कान झन्-झन् कर रहे थे, और जी बुरा कर देनेवाला रक्त का

कुस्वाद उसको अपने मुँह में मिल रहा था। जल्दी करो, जल्दी! वह सर के बल गिर पड़ा, और उलटा-सीधा किसी तरह उठकर खड़ा हुआ, उसके हाथ इस तरह हिल रहे थे जैसे कोई डूबता हुआ व्यक्ति पानी पर हाथ मार रहा हो। आख़िरी पहाड़ी पर तो वह लगभग अपने हाथों-पाँवों के सहारे चलकर ही पहुँच सका। यहीं कहीं आख़िरकार वह सड़क होना चाहिए।

हाँ, यहीं वह सड़क थी, बिलकुल पास। और इसी पर लाल सैनिकों को लिये हुए जर्मन लोग जा रहे थे। साशा को यह सारा दृश्य एक दुःस्वप्न-सा लगा। उसे विश्वास नहीं होता था, वह विश्वास नहीं करना चाहता था—लेकिन यह कोई दुःस्वप्न नहीं था। साशा अपने को कुहनियों का सहारा दिये हुए, ठीक जिस तरह वह चढ़कर आया था, उसी तरह पहाड़ी पर पड़ा था। और वे लोग उसके पास से निकल गए। ज़ख़्मी सैनिक शराबियों की तरह लड़खड़ाते चल रहे थे, और जर्मन चिल्लाते जा रहे थे। लाइन के पीछे कोई गिरा, लेकिन रायफ़ल के कुन्दों, जूतों की ठोकरों और गालियों ने उसे फिर खड़ा कर दिया। वे उसके पास से मार्च करते हुए चले जा रहे थे, चले जा रहे थे। साशा देखता रहा। उसने वहाँ पहुँचने में बहुत देर कर दी। दो या तीन मिनट की देर ही बहुत हो गई थी। लाल सैनिकों के आगे सूनी सफ़ेद सड़क बिछी थी, और उस पर बर्फ़ ही बर्फ़ थी और कुछ नहीं। रुई के केक झोले में ही रह गये, पानी से भीगे हुए और भारी। वे उसके सूती झोले में पड़े थे, उन कैदियों से कुल दस-बारह क़दम की दूरी पर, जो उन्हें कभी नहीं पा सकते, क्योंकि दो तीन मिनट की उसने देर कर दी थी, क्योंकि काफ़ी तेज़ वह नहीं दौड़ सका था, क्योंकि गिर-पड़कर सँभलते वक्त उसके पाँव काफ़ी जल्दी-जल्दी नहीं उठे थे, क्योंकि जो उसे करना चाहिए था, वह नहीं कर सका था। उसे मिश्का की याद आई। हाँ, मिश्का ठीक समय पर पहुँच जाता। मिश्का काफ़ी तेज़ दौड़कर आता। और अब तो वे लोग रूडी की तरफ़ हँकाये हुए चल जाएँगे और कँटीले तारों के पीछे बन्द कर दिये जाएँगे और भूख और सर्दी से मर जाएँगे, क्योंकि वह...

आख़िरी सैनिक उसके सामने से गुज़र रहा था। और अब वे सब गुज़रकर जा चुके थे। दूर, दूर चले गये थे, ओझल होते जा रहे थे, वे सड़क की,

और अन्तहीन बर्फ़ से पटे हुए मैदानों की सफ़ेदी में जाकर विलीन भी हो गये। साशा का सिर लटककर बर्फ़ पर झुक गया, और बचपन के तपते हुए आँसू उसकी आँखों से गिरने लगे। आँसू बर्फ़ में गिर रहे थे, उसकी नाक से बह रहे थे—उसके चेहरे को भिगो रहे थे। बर्फ़ की ठंड से उसके भीगे हुए पाँव जकड़ गये और उसकी पसली के पास की पीड़ा असह्य हो उठी। वह उठ नहीं सका, उठने की इच्छा भी उसे नहीं हुई। वे चले गये थे, चले गये थे, वह समय से दो-तीन मिनट बाद वहाँ पहुँचा था।...

कितनी ठंड थी, कितनी भयानक ठंड। साशा रो रहा था, उन लोगों के लिए रो रहा था जो उस ठंड में सड़क पर चले गये थे; मिशा के लिए, जिसे बड़े दरवाज़ेवाले कमरे में दफ़ना दिया गया था; अपने पिता के लिए जो छापेमारों के जत्थे में था; और विशेषकर इस बात के लिए कि वह कुछ भी नहीं कर सका था, कुछ भी करने में सफल नहीं हो सका था ...

उसके शरीर में ठंड और और अधिक समाती गई। तो फिर क्या हुआ। ...उसे एक कहानी याद आ गई जो दादा येवडाकिम सुनाया करते थे; कि कैसे, बहुत समय हुआ, जब कुछ ह्वाइट-गार्ड* जंगल में खो गये और आख़िरकार उनमें हरेक आदमी बर्फ़ में पत्थर की तरह जमकर रह गया। लाल सैनिक वहाँ पहुँचे और उन्होंने चिल्लाकर उनसे कहा; 'हाथ ऊपर करो!' लेकिन वे वैसे के वैसे बैठे रहे, हिले तक नहीं। और केवल येवडॉकिम ही समझ सका कि मामला क्या है और उनके पास पहुँचा। उसी तरह वे बैठे थे, मानो ज़िन्दा हों मगर सबके सब जमकर लकड़ी के कुन्दे की तरह कड़े हो गये थे। केवल यहीं पर—कोई नहीं आयेगा। सपने में भी किसे ख़याल आएगा कि यहाँ आकर उसे ढूँढ़े! वह यहीं पड़ा रहेगा, पड़ा रहेगा, पड़ा रहेगा...

'साश्का, उठो, खड़े हो!'

वह काँप गया और उसने अपना चेहरा और भी बर्फ़ में छिपा लिया।

'क्या बात है, बेटे? उठो, पाले की ठंड काफ़ी भयानक है...रोओ नहीं, रोने की कोई बात नहीं है!'

---

* सन् १९७१ के गृह-युद्ध में "लाल" इनक़लाबी सेना के शत्रु।

उसकी मा उसके बराबर बैठ गई और प्यार से उसके कंधों को सुहलाने लगी।

'अरे तू तो बिलकुल भीग गया है! उठ, और घर को चल! मैं भी तो भीग गई हूँ, मेरा सारा दामन यहाँ आते-आते भीग गया। तुम्हारा यहाँ तक पहुँचना बड़ा मुश्किल था...आओ, अब उठो...'

उसने सहारा देकर ज़बरदस्ती उसका सिर उठाया। उसने मा की ओर आँसू-भरी सूजी हुई आँखों से देखा।

'इसमें अपना कोई बस नहीं, यह तरकीब ही ठीक नहीं बैठी, बस,' उसने उदास होकर कहा।

'मैं देर से पहुँचा,' साशा ने धीरे से कहा, उसका स्वर हिचकियों से टूटा हुआ था।

'परवाह मत करो, बेटे, वह तरकीब ही नहीं चली। आँधी का ऐसा झक्कड़ चल रहा है कि तुम तक पहुँचने के लिए मुझे रास्ता पाना मुश्किल हो गया। उठो, अब हमें घर चलना चाहिए..' उसने उसके हाथ को सहारा दिया। साशा धीरे-धीरे बेमन से उठा।

'हमारी जुगत ठीक नहीं बैठी इस दफ़ा, लेकिन अगली मर्तबा क़िस्मत ज़रूर हमारा साथ देगी...हमने एकदम यह नहीं सोचा कि यह काम कैसे पूरा होगा...अगली मर्तबा जब वे हमारे सिपाहियों को इधर से ले जायँगे, तो हम इन्तज़ार नहीं करेंगे और इतनी दूर तक दौड़े हुए नहीं जायँगे। हम लोग घर के अन्दर ही बैठे रहेंगे, और जो कुछ उनके लिए छोड़ना होगा सड़क पर ही डाल देंगे। आज तो हम लोग भीड़ की भीड़ दौड़े हुए आये, और हल्ला-सा मचा दिया और नतीजा उससे कुछ नहीं निकला।...लेकिन पता किसे था?'

साशा धीरे-धीरे उसके बराबर चल रहा था। उसकी आँखें ज़मीन पर गड़ी हुई थीं।

'साञ्का वापिस भागा हुआ आया, अधमरा-सा। मैंने उससे तुम्हारे बारे में पूछा कि तुम कहाँ हो, उसने बताया कि बर्फ़ में पड़े हुए हो। मैं सब काम छोड़कर इधर दौड़ी।...और तुम रोओ नहीं। जो बात नामुमकिन है

उसको तुम नहीं कर सकते। कैसे गहरे गड्ढे हैं यहाँ...कई साल हुए तब कहीं ऐसा जाड़ा पड़ा था...'

चलना कठिन हो रहा था उसके लिए, लेकिन वह सारे रास्ते बात करते रहने और अपने बेटे को चलने में सहारा देने की कोशिश करती रही।

'तुम मेरे पीछे-पीछे रहो, पीछे-पीछे ..उस तरह आसान पड़ेगा...'

उसे ध्यान आया, वे लोग अब उसी रास्ते से जा रहे थे जो उसने और साञ्का ने पहले निकाला था, जिस पर से होकर फिर साञ्का वापिस गया था और उसकी मा आई थी। इसलिए आते वक्त जो मुसीबत पेश आई थी, उसको देखते हुए अब वापिस जाना कुछ नहीं था और फिर भी उसकी मा कह रही थी कि रास्ता बड़ा कठिन था। हालाँकि अब बनी-बनाई लीक उनके चलने के लिए थी, फिर भी वह मुश्किल से अपने को घसीटकर चल पा रहा था।

उसे अपने जूते सौ-सौ मन के लग रहे थे और उसके हाथ और सिर सीसे-से भारी हो गये थे। वह अपने हाथ-पाँव की और कमर की एक-एक हड्डी को अलग-अलग महसूस कर सकता था। दर्द जैसे उसकी हड्डी-हड्डी को पीसे दे रहा था।

जब वे यहाँ से निकलकर सड़क पर आये, वह लड़खड़ाया और लगभग गिरने को हो गया। मा के हाथों ने उसको थाम लिया।

'क्या बात है बेटे?'

'कुछ नहीं' उसने हिचकिचाते हुए जवाब दिया, हालाँकि उसकी आँखों के आगे ज़मीन चक्कर खा रही थी और उसका सिर ज़ोरों से घूम रहा था।

उसकी मा ने झुककर उसे गोदी में उठा लिया।

'क्या कर रही हो मम्मा', वह मना करने लगा, लेकिन जैसे ही उसने मा का हाथ अपने सिर के नीचे महसूस किया, उसे नींद की झपकी आ गई। उसकी सोती मुद्रा को देखकर माँ के होठों पर मुस्कराहट दौड़ गई।

टरपिलिखा जो ईंधन का एक गट्ठा लिये सड़क पर आ रही थी, देखते ही बोल उठी, 'क्या हुआ, इसे कुछ हो गया है क्या?' उसका मुख सजल था और स्वर काँप रहा था।

'नहीं, लड़का...सिर्फ़ थक गया है। वह गड्ढे और नालों को पार करता हुआ सड़क तक सारे रास्ते दौड़ता गया था...'

'समय पर पहुँच गया था ?'

'नहीं ; कैसे पहुँचता...वहाँ से तो एक बड़े आदमी के लिए भी रास्ता निकालना मुश्किल है।'

वह हाँप रही थी और अब आहिस्ता-आहिस्ता क़दम बढ़ा रही थी।

'यह भारी है तुम्हारे लिए।'

'भारी तो हुई...अब नवें साल में पड़ा है...' और अपने सोते हुए पुत्र को और भी अपनी छाती से चिपका लिया। 'वह ऐसा हो गया है जैसे अपने बिस्तर में पड़ा हो। ज़रा मुझे सहारा देना, गोरपिना, नहीं तो मैं दरवाज़ा नहीं देख सकूँगी।'

टरपिलिखा ने चटखनी उठा दी।

गर्म हवा का एक बादल-सा घर के अन्दर से बाहर निकला।

'मम्मा !' ज़ीना आँखों में आँसू भरकर ज़ोर से रोई, 'साशा को क्या हो गया है ?'

'कुछ नहीं, वह सो रहा है। चिल्लाओ नहीं, वर्ना तुम उसे जगा दोगी।'

'सो रहा है ?' बच्चों ने आश्चर्य से दुहराया। वे चारों तरफ़ खड़े अपनी मा को देखते रहे कि उसने उसे बिस्तर पर लिटाया, आहिस्ता से उसके बूट जूते खींचकर निकाले, उसकी गीली पैंट उतारी, और एक सूखा सूती कपड़ा उस पर धीरे-धीरे रगड़कर फेरा।

'तुम्हारा दामन सारा भीग गया है' सोन्या बोली, 'तुम कहाँ गई थीं ?'

'वह कुछ नहीं, अभी सूख जायगा। इसके जूते ज़रा तंदूर के पास को रख दो।

'ज़ीना ने सूँघा और जूतों को उठाकर ले गई।'

'झोले में क्या है ?'

'रई के केक हैं, उन्हें निकाल लो।'

'वे भीगकर भारी हो गये हैं...'

'कोई हर्ज नहीं, तुम इन्हें ऐसे भी खा सकते हो।'

'थोड़ा-सा मैं ले लूँ ?' ज़ीना ने पूछा। झोले से निकलते ही उन भीगे भूरे गोले पर उसकी तृषित दृष्टि अटकी हुई थी।

'हाँ, हाँ, क्यों नहीं, ले लो। यह तुम्हारा दोपहर का खाना है। सोन्या और तुम दोनों आपस में बाँट लो। थोड़ा-सा साशा के लिए छोड़ देना। जागने पर उसे भूख लगेगी।'

ज़ीना अपने हाथ में गीले रई के केक का एक टुकड़ा लिये-लिये अपनी मा के पास आई।

'यह तुम्हारे लिए है, मा...'

'मुझे नहीं चाहिए, बेटी, मुझे भूख नहीं है...'

वह बच्चों को खाते हुए देखती रही। बेंच पर गिरे हुए टुकड़ों को वे बड़ी उत्सुकता से उठाकर खा लेते थे। ये केक उन लोगों को नहीं पहुँच पाये थे जिन्हें मौत की तरफ़ खदेड़कर ले जाया जा रहा था। उसके गले में जैसे कुछ अटकने लगा। हलके भूरे सिर और गहरे रंग के सिर एक साथ झुके हुए थे। उनकी नन्हीं-नन्हीं उँगलियाँ पपड़ियों और छिलकों के टुकड़ों को बड़ी सावधानी से बीन रही थीं। ..साशा ने बड़ी देर कर दी, बड़ी देर कर दी...लड़के की साँस शांत गति से एक-सी चल रही थी। उसके गाल गुलाबी थे। लेकिन मिशा तो चला ही गया था—उसकी याद आते ही हृदय में बर्छी-सी लगी।

और सहसा उसने महसूस किया कि उसके बाद, बेटे की मृत्यु के बाद, उस मृत्यु से भी दुःखद, उससे भी भीषण एक घटना घटी थी। फिर उसकी आँखों के आगे उन क़ैदियों की भीड़ का दृश्य आ गया जिन्हें रायफ़ल के कुंदों की मार से मार्च कराया जा रहा था। हृदय को टुकड़े-टुकड़े कर देने-वाले उनके हड्डहे चेहरे, उनकी अंदर तक धँसी हुई आँखें जो काले-काले प्योटों के अंदर बुख़ार के ताप से जल रही थीं, बर्फ़ पर उनके ख़ून से लथ-पथ पाँव, उनके पतले-पतले पक्षियों के पंजों जैसे हाथ, जो रोटी के लिए बढ़े थे, उस रोटी के लिए जो उनके इतने पास होते हुए भी उनसे इतनी दूर थी; और सड़क पर पड़े हुए वे दो मृत क़ैदी...छाती में गोली का सूराख़ लिए मेज़ पर पड़े हुए मिशा का चित्र इस दूसरे चित्र के सामने अस्पष्ट होकर मिट गया।

उसने हाथों से अपनी आँखें ढक लीं। बिस्तर में पड़ा हुआ उसका लड़का सो रहा था। बच्चे, उसके अपने, और चेचोरिखा के बच्चे, रई की

रोटियाँ खा रहे थे और जो टुकड़े बेंच पर गिर गये थे, उन्हें सावधानी से उठाकर जमा कर रहे थे। भविष्य में क्या होने को था? और अब क्या होने-वाला था, जब प्रत्येक दिन पहले से भी अधिक दुःख सर पर आ रहा था? प्लाटन कहाँ होगा? क्या वह उसे कभी देखेगी? मिशा बड़े दरवाज़ेवाले कमरे में फ़र्श के नीचे पड़ा था। प्लाटन की उसे कोई ख़बर नहीं मिली थी— कौन जाने कुत्तों की तरह से उसे भी ज़हर दे दिया गया हो, कौन जाने वह मर भी चुका हो और बर्फ़ के नीचे कहीं दबा पड़ा हो। ..ओलेना, फाँसी पर झूलता हुआ लेवान्युक, सब, सब...क्या किसी को यक़ीन आयेगा कि अब-तक केवल एक ही महीना बीता था, कि अब तक उन्होंने केवल एक ही महीने का छोटा-सा अर्सा बिताया था, जब कि वास्तव में ऐसा लगता था, मानों उन्होंने अपना पूरा जीवन ख़त्म कर दिया है, मानो कितने ही बहुत-से वर्ष बीत गये हैं, इतना अधिक दुःख और यातनाएँ इस छोटे-से अर्से में उनके ऊपर पड़ी थीं।...'एक महीना!' उसने आश्चर्य से सोचा। इससे पहले बीज बोने, घास सुखाने, फसल काटने, पटसन उखाड़ने, आलू खोदने के महीने, शांति-भरे महीने, आराम से बीतते हुए, एक दूसरे के बाद, मुक्त उल्लास से भरे हुए आते गये थे और फिर बरसों में बदलते गये थे, किसी को उनका ख़याल भी नहीं आया था। और अब एक महीना, एक अकेला महीना, जो एक पूरे जीवन से अधिक लंबा था, छाती पर एक भारी बोझ की तरह धरा हुआ उसे पीस रहा था और उसकी स्मृति में ऐसे घाव, ऐसी चोटें, छोड़ गया था जो कभी अच्छी न होंगी, जो सदा के लिए उसके अंतर में गड़ते रहेंगे...

साशा एकाएक जाग गया। वह अपने घर में अपने आपको पाकर चकित हो रहा था। वह कैसे आ गया यहाँ? उसे याद नहीं आया कब उसकी मा ने उसे गोदी में लिया था या कैसे उसे नींद आ गई थी। थोड़ी देर तक उसकी आँखें छत पर फिरती रहीं। यह उसी के घर की छत थी। ज़ीना चूल्हे के पास पड़ी अपनी पिपिहरी-जैसी आवाज़ में आप ही आप बातें किये चली जा रही थी। आप से आप उसकी दृष्टि कमरे में चारों ओर फिरी और उसने अपनी मा को देखा कि वह बेंच पर स्थिर उकड़ूं बैठी जमी हुई

दृष्टि से एक-टक अपने सामने की ओर देख रही है। उसने गर्माई का सुख लेते हुए अपनी टाँगें कंबल के अंदर ही अंदर फैला दीं। अब भी उसके हाथ-पाँव की उँगलियों में झनझनाहट थी, लेकिन उसका सारा शरीर एक सुखद शैथिल्य में लिपटा हुआ था और गर्म कम्बल और सिर के नीचे मुलायम तकिये का अनुभव उसे अच्छा लग रहा था।

'तुम क्या सोच रही हो, मम्मी ?'

वह चौंक पड़ी और एकदम उसकी ओर घूमी।

'तुम अभी से जग गये ?'

'हाँ, अब मैं और नहीं सोना चाहता।'

'फिर भी, अभी चुपचाप पड़े रहो, ज़रा और गर्म हो लो.. तुम इतने ठिठुर गये थे और भींग गये थे...'

उसने कम्बल को जो उसके बेटे के ऊपर से सरक गया था, उसके नीचे दबाकर ठीक कर दिया, और फिर बोली मानों अभी ही अभी उसने उसका प्रश्न सुना हो।

'मैं उस दिन की बात सोच रही थी, जब हमारे अपने आदमी लौटकर आएँगे, बेटे...'

वह उसकी तरफ़ चौड़ी खुली हुई आँखों से देखने लगा।

'यहाँ आयेंगे, इस गाँव में ?'

'हाँ, यहाँ हम लोगों के पास...'

'और क्या रूडी भी जाएँगे ?' उसने चुपके से पूछा, मानो वह उससे अपने दिल की कोई छिपी हुई बात कह रहा हो।

'रूडी भी, क्यों नहीं, रूडी भी...वे सब जगह जायेंगे। जहाँ तक नीपर नदी है वहाँ तक, और उसके पार भी, सब क़स्बों और गाँवों में...जहाँ तक देश की सीमाएँ हैं, और उसके आगे, उन सब स्थानों में जहाँ-जहाँ लोग जर्मनों के अधीन तड़प रहे हैं; उन सभी जगहों और मुल्कों में...'

'और पिता भी वापिस आएँगे ?'

'हाँ, वह वापिस आयेंगे, बेटे। छापेमार दल के सब लोग जंगलों से वापिस आ जायेंगे।'

'जैसे, पहले था, वैसे ही सब कुछ फिर हो जाएगा ?' उसने दोहराया ।

'हाँ, बेटे, बल्कि पहले से भी अच्छा ।'

उसने बातचीत का क्रम बंद कर दिया और बैठी चुपचाप न जाने क्या-क्या सोचती रही । क्या यह संभव होगा कि सब कुछ पहले जैसा हो जायगा ? घर के चारो ओर क्या कभी फिर सूर्यमुखी के फूल खिलने लगेंगे, जिनके बीज लीडा शहर से लाई थी; क्या फिर कभी बच्चे ज़ोर-ज़ोर से बातें करते हुए, मगन होकर, स्कूल को भागेंगे ; और जब गर्मियाँ आयेंगी, क्या ज़ीना किंडरगार्टन में जाएगी, जहाँ जाकर नन्हे-नन्हे बच्चे इतने ख़ुश हो-होकर गाते और नाचते थे ? और घर में तब काफ़ी रोटियाँ पकेंगी, और मिट्टी के कूँडों में ख़ूब दूध हुआ करेगा, और शाम को सब लोग क्लब जाया करेंगे...

यह सब कुछ फिर वापिस आयेगा । हाँ, सब बातों के बावजूद, गाँव पर तोड़े गये जुल्मों के बावजूद । मिशुटका अब स्कूल कभी न जायेगा, मिटिया लेवान्युक अब खेतों-खेतों गाता नहीं फिरेगा, ओलेना अब अपना ट्रैक्टर-हल कभी न चलायेगी, गाँव की छोकरियाँ अब वास्या कावूचुक की तरफ़ आँखें मारकर न देखेंगीं, लेकिन जीवन अपने गति-पथ पर बढ़ता और सशक्त होता हुआ चलता जायगा । ज्यों-ज्यों वर्ष बीतेंगे, गेहूँ की पौध और ऊँची होती जाएगी । फलों के जवान पेड़ फलों के भार से और भी अधिक नमते जाएँगे, सामूहिक खेतिहरों की गायें बाल्टियों को दूध से और भी अधिक भरती जाएँगी और अधिक से अधिक संख्या में नवयुवक अध्ययन के लिए नगरों में पहुँचेंगे । केवल एक बात धारण करने की उन्हें आवश्यकता थी—धैर्य, सहनशक्ति और हार न मानना, चाहे दुनिया में कुछ हो जाय ..

झिलमिल लाल की-सी आभा घर के अंदर फैल गई । सूर्य डूब रहा था, और त्रिपार्श्व के सारे विविध रंगों से आकाश को अनुरंजित कर रहा था । बर्फ़ ने खिड़कियों पर जमकर जो विचित्र पत्तियाँ-सी बना दी थीं, वे गुलाब के फूलों की तरह, कि जिनके कोर सुनहरी थे, खिल उठीं । फिर अँधेरा जल्दी-जल्दी बढ़ने लगा और परछाइयाँ गहरी होने लगीं । सूर्यास्त के रंग क्षितिज पर अभी मिटे भी नहीं थे कि चाँद निकल आया, शीतल, बर्फ़ की चाँदी का-सा, और अपने दीर्घ यात्रा-पथ पर बढ़ने लगा । सूर्यास्त की आभा का

स्थान चाँदनी ने लिया और झिलमिलाते हुए स्तंभ आकाश की ओर उभर उठे, चमचम करते, जमी हुई बर्फ की तरह स्थिर। लेकिन उस शाम एक अभेद्य अंधकार सबके हृदयों पर छाया हुआ था—अंधकार जो इतना सूना और गहरा था कि उन्हें अपने किसी भी विपता काल में ऐसा अनुभव नहीं हुआ था। सड़क पर कैदियों की मार्च करने की आवाज़ अभी ख़त्म नहीं हुई थी; अभी तक कैदी इस गाँव से गुज़र रहे थे। वह एक ऐसे प्रेतों का जलूस निकल रहा था जिनकी हड्डियाँ ही हड्डियाँ दिखाई देती थीं, जिनके राख-से मुर्दने चेहरे बुखार और भूख की ज्वाला से तप रहे थे। उनके ज़ख्मी पाँव बर्फ़ पर खून का निशान छोड़ते जा रहे थे। उनकी भर्राई हुई आवाज़ जो सुननेवालों की पलक नहीं लगने देती थी, अब भी घरों के अंदर प्रतिध्वनित हो उठती थी: 'रोटी!' गहरी धँसी हुई आँखें जिनमें एक विक्षिप्त-सी ज्वाला सुलग रही थी, ग्रामवासियों की आँखों की ओर देखती रहीं। जर्मन रायफलों के कुन्दों की चोटें उनके दिलों पर पड़ती थीं और कैदियों को हाँकनेवाले सिपाहियों का चिल्लाना अपने ऊपर वे कोड़े की फटकार की तरह महसूस करते थे।

'बेड़ियाँ पाँवों में थीं और सर पे ज़ालिम तुर्कमान
रो रहे थे खून के आँसू हमारे नौजवान!'

यह किस वक्त की बात है, किस वक्त की बात है यह? तुर्कों की गुलामी—समुद्रों में दूर-दूर तक तुर्की जहाजों का दौरा—उनके सरों पर लटकती हुई तुर्कों की हलाली शमशीर—न, यह बात उस समय की भी नहीं जब सूलियों की क़तारें तेज़िन से कीफ़ तक चली गई थीं; जिन पर पानपटोकी ने किसानों को लटकाया था। और न वह युक्राइन पर हुए बहुत पुराने, बहुत पुराने तातारी हमलों की ही घटना थी। उन सब युगों की अपेक्षा, जिनके गीत गाये जाते थे और जिनकी याद जनता के हृदय से कभी न मिट सकेगी, आज युक्रायना की धरती पर कहीं चौड़ी खून की नदियाँ बह रही हैं और कहीं ऊँची आग की लपटें उठ रही हैं; कहीं अधिक दुःख उमड़ रहा है। नीपर नदी के दोनों किनारों पर आज जो कुछ हो रहा है, किस गीत के अंदर यह शक्ति होगी कि उस सबका वर्णन कर सके? जैसे कोई संक्रामक रोग फैले, या बाढ़ आ जाय, या विकट आँधियों का प्रकोप हो, ऐसे घोर

दुर्दिन का अंधकार जो देश पर छा गया था, कौन गीत उसका आभास दे सकता है? खून की नदियाँ, फाँसी की थूनियों का चर्रचर्र होना, बच्चों का बिलखना, लाखों ही प्राणों की मृत्यु, सुलगते गाँवों पर धूएँ की काली लपटों की लहर, जहाँ तक दृष्टि जाती है क़ब्रें ही क़ब्रें, और रूडी और सैकड़ों दूसरे नगरों में कैम्पों में कँटीले तारों के पीछे कोड़ियों की संख्या में नवयुवकों का तड़प-तड़पकर मरना यह सब किस गीत में समा सकेगा? और कौन गाना भी चाहेगा ऐसा भयानक गीत जिसको सुनकर ही मनुष्य का खून जम जाये?

'नहीं,' गाँव की स्त्रियों ने सड़क पर से गुजरते उन कैदियों के दुःस्वप्न से छुटकारा पाने की कोशिश करते हुए सोचा, ऐसे गीत का निर्माण कभी नहीं होगा। हम लोग अपनी बाहें चढ़ाकर फिर से अपने घरों और मकानों को बनाकर खड़ा कर देंगे। हम लोग धरती में बीज डालेंगे, जिससे अछोर तक खेती लहरा उठेगी, और गेहूँ की फ़सल समुद्र की तरह हवा में झूम उठेगी। रक्त से सींची हुई धरती को हम गेहूँ के सोने से, सूरजमुखी की धूप से, फूलों से, खिलते हुए उद्यानों की मुस्कराती उज्वलता से, नीले पटसन के फूलों और ऊँचे-ऊँचे सन के जंगलों से पाट देंगे—ताकि कृष्णसागर में गिरनेवाली नदियों के तट पर कहीं भी, जर्मनों का कोई भी चिह्न अवशेष न रह जाय।

गाँव दिल डुबा देनेवाली अशांत निंद्रा में लीन हो गया, जिसमें आँखों को कोई आराम, दिल को कोई चैन, कोई शांति नहीं मिलती। बार-बार माल्युचिखा अपने बच्चों को उठ-उठकर देखती रही।

'बेटे, बेटे...'

वह भय से चौंककर उठ गया। 'क्या हुआ?'

'जाग रे! मालूम होता है बहुत बुरे-बुरे सपने देख रहा है।'

भावहीन आँखों से, उसने अपनी माँ की तरफ़ देखा और फिर दूसरी करवट लेकर तुरंत नींद में डूब गया। और दुःस्वप्न फिर उसे परेशान करने लगे; वे उसकी छाती पर बोझ बनकर उसे यातना दे रहे थे।

बान्युचिखा करवट बदलते हुए कराही। उसका सारा शरीर दर्द कर रहा था और पेट में भी दर्द की मसोस थी। लेकिन उसकी आँखों की नींद इस कारण नहीं खो गई थी; वह एक हड्डहा चेहरा था जिसकी दाढ़ी मुद्दत से

नहीं बनी थी, वे खून-भरे चीथड़े की पट्टी के नीचे जलती हुई आँखें थीं; जो इसका कारण थीं।

...एक ग्रोखाच को छोड़कर किसी ज़मानती क़ैदी की आँख नहीं लगी। अपनी हठ और निराशा लिये मलाशा बराबर अपने विचारों का जाल बुनती जा रही थी। एक और दिन आया और चला गया, किंतु कोई परिवर्तन नहीं आया था। रूखे होंठ, जिस पर प्यास की अधिकता के कारण पपड़ियाँ जम गई थीं; और उसकी आँखों के आगे वही दिन! हाँ, हाँ, ज़रूर वह बात हो गई थी...यहीं इस गाँव में घटनाएँ घट रही थीं, लोग जी रहे थे और मर रहे थे—दिन में सड़क पर से गोलियाँ चलने की आवाज़ आई थी, और जर्मन अकारण कभी गोली नहीं चलाते—लोग जान से मारे गये थे, लेकिन वह, वह अभी तक जीवित थी। वह जीवित थी, मज़बूत लट्ठे की दीवारों के पीछे बैठी हुई, अपने अंदर उस जर्मन पिंड, उस जर्मन पिल्ले, को पाल रही थी।

येवडाकिम ने एक आह भरी और दीवार के पास अपने स्थान पर ज़रा-सा और लुढ़क गया।

'तुम सो नहीं सके?'

'न...मुझे सोने की इच्छा नहीं हो रही है...और फिर यहाँ सोया भी बहुत नहीं जा सकता...देखता हूँ तुम्हारी भी आँख नहीं लग सकी...'

'मैं देर से हैरान होकर यही सोचती रही हूँ कि वे किसे गोलियों का निशाना बना रहे होंगे? अभी यहीं पास में गोलियाँ चली थीं...'

'तुम सही-सही नहीं कह सकतीं पास में चली थीं कि दूर...दीवार की वजह से वैसा लग सकता है। मुझे तो नहीं लगता कि वह गिरजे के दूसरी तरफ़ से कोई बहुत पास होगा।'

'कौन जाने...'

'बाहर निकलने के बाद हम लोगों को मालूम हो जायगा,' धीरे से ओल्गा पलान्चुक बोली।

'ज़रूर-ज़रूर,' चेचोरिखा ने हामी भरी।

प्रत्यक्ष था कि वह लड़की किसी से यह सुनने के लिए बहुत ही उत्सुक

थी कि वे सचमुच इस क़ैद से बाहर निकल सकेंगे, कि जर्मन टुकड़ी द्वारा वे लोग गोली से उड़ाए जाने के लिए चौराहे पर नहीं ले जाये जायँगे, बल्कि ये लोग बाहर निकलकर जाएँगे मुक्ति की ओर, अपने गाँव की ओर, जहाँ वे आज़ाद लोगों की तरह आज़ाद लोगों के साथ बातचीत करेंगे। उसने एक आह भरी।

'तुम्हें चाहिए, कोई क़िस्सा सुनाओ, दादा, क्योंकि जो कुछ भी हो, हमें नींद नहीं आ सकती। इससे समय और आसानी से कट जायेगा।'

'क्या क़िस्सा सुनाऊँ?' उसने सोचते हुए कहा। 'कुछ भी हो, क़िस्सा-कहानी सुनाने को मेरी तबीअत नहीं कर रही है...'

'तो फिर गीत ही सुनाओ,' ओल्गा ने कहा।

'ध्यान कहाँ है तुम्हारा? यह अच्छी सूझी! गाना और यहाँ?'

'क्यों नहीं? धीरे-धीरे गाओ! वे लोग सुन थोड़े सकेंगे।'

अपना श्वेत सिर उसने सीधा किया।

'अच्छी बात है, तो फिर सुनाऊँगा मैं...एक गीत, एक पुराना गीत, जो मेरे दादा मुझे सुनाया करते थे और उन्होंने उसे अपने दादा से सुना था। यह बहुत पुराना, बहुत पुराना गीत है, इतना ही पुराना है जितना पुराना ख़ुद युक्रायना देश:

सच की दुनिया कहीं नहीं, रे, सच की दुनिया कहीं नहीं!
झूठ बना है हाकिम सबका—सचकी दुनिया कहीं नहीं!
जीना चाहो जो लेकर सच का सुन्दर आधार,
सच की ढाल बनानी होगी, औ सच की तलवार,
सच काहि मोर्चा होगा—वर्ना सच की दुनिया कहीं नहीं!

'लेकिन मुझसे इसको गाते नहीं बन रहा है। उस बहुत पुराने ज़माने में लोग इसे बन्दूरा के साज़ पर गाया करते थे।'

'ओह, गा दो इसे! बन्दूरा के बग़ैर ही सही...इससे इतना उदास-उदास-सा नहीं लगेगा...'

'अपने सम्बल में हो मंगल, हे सबके करतार!
सच ही अपना मोर्चा, वर्ना सच की दुनिया कहीं नहीं!'

'अपने संबल में हो मंगल, हे सबके करतार ! सच ही है अपना मोर्चा,'
चेचोरिखा ने धीमे स्वर में दुहराया।

काँपती आवाज़ में बूढ़े ने बीते हुए ज़माने का गीत सुनाया, जो कि पराधीन जनता का गीत था जो कटु दिवसों के नैराश्य और अन्धकार में लिखा गया था। आँसुओं से भीगी रातों के अन्धकार में लिखा गया था; दासता और आतंक के युगों में। एक भूला हुआ गीत निःस्वर हो चुका था, खो चुका था, स्वाधीन युक्रायना में जब सूर्यमुखी के फूल खिल आये थे और नये जीवन के नये गीत बन गये थे, उन दिनों वह खो चुका था।

लेकिन आज इस गाँव के अन्दर जहाँ सोलह साल का एक लड़का फाँसी पर झूल रहा था, जहाँ नाले में मुर्दे यों ही पड़े हुए थे, जहाँ नदी की लहरें बर्फ़ के नीचे-नीचे एक स्त्री का शव बहा ले गई थीं, जहाँ मृत्यु ने सब मकानों के ऊपर अपना जाल बुन दिया था, वहाँ इस तंग कमरे के अन्धकार में, उस पुराने गीत के स्वर उसी विलाप से भरकर तड़प उठे, उसी दुःख से भरकर, जो सैकड़ों वर्षों तक उसमें समाता गया था।

'अपने संबल में हो मंगल, हे सबके आधार !
सच ही अपना मोर्चा वर्ना सच की दुनिया कहीं नहीं !'

येवडोकिम का स्वर मद्धिम हो गया। वे सब ऊँघने लगे, उनके थके हुए सिर हिलते-हिलते और झुकते हुए और भी झुकते चले गये।

९

फेडोसिया क्राव्‌चुक एकाएक चौंककर उठी, मानो किसी ने उसे झकझोर दिया हो। वह अपने बिस्तर से उठकर बैठ गई। उसका हृदय इतनी ज़ोर-ज़ोर से धक्‌ धक्‌ कर रहा था मानो अब फट ही जायेगा। उसने साँस अन्दर खींची और कान लगाकर सुनने लगी।

किस बात ने उसे जगा दिया था ? और कब उसे नींद आ गई ? वह सोच रही थी कि नींद उसकी आँखों में अब आयेगी ही नहीं, और तभी एकाएक वह नींद में बेसुध हो गई। किसी चीज़ ने उसे गहरी निद्रा से चौंका दिया था। वह क्या था ?

यह नहीं कि कोई दरवाजा खटखटा रहा था। सब ओर एकदम मौन

छाया हुआ था। यहाँ तक कि सोये हुए जर्मन अफ़सर का खुर्राटा भी आज रात्रि का सन्नाटा तोड़ने के लिए नहीं था। प्रत्यक्षतः वर्नर आज अपने दफ़्तर में देर तक काम करता रह गया था, जैसा कि वह अक्सर रह जाता था, और अभी तक वापिस नहीं आया था। जो हो, वह आप से आप नहीं जग उठी थी। किसी चीज़ ने उसे जगाया था, किसी चीज़ ने सहसा उसकी नींद तोड़ दी थी। जभी तो उसका दिल इतने ज़ोर से धक्-धक् कर रहा था।

वह बिस्तर में फिर नहीं लेटी, बल्कि ध्यान से कान लगाकर सुनने लगी। घर के अन्दर और बाहर पूर्ण नीरवता थी। हवा शाम को चलकर थम गई थी। इस समय फिर आसमान स्वच्छ हो गया था। चाँद अपने इन्द्रधनुषी मण्डल में घिरा हुआ तैरता जा रहा था और फ़र्श पर खिड़की के चौखटे की परछाईं साफ़-साफ़ पड़ रही थी। खिड़की के शीशे की उज्ज्वल पृष्ठ-भूमि पर चितकबरा जरैनियम का फूल बिलकुल काला दिखाई दे रहा था।

सहसा खिड़की के बाहर खड़का हुआ। एक आवाज़—जैसे कोई दबी हुई कराह; एक भर्राई चीख़ जो निकलते ही सहसा रुक गई, गले में से निकलने के पहले ही वहीं-की-वहीं दबा दी गई। फ़ेडोसिया कूदकर बिस्तर से उतरी और बड़े दरवाज़े के कमरे तक नंगे पैर दौड़ी हुई गई। काँपती उँगलियों से उसने चटखनी को टटोला, लेकिन उसे खुला पाया। ज़ाहिर था कि वर्नर सचमुच अभी तक लौटकर नहीं आया था। वह आने के बाद चटकनी को अच्छी तरह बन्द करना कभी नहीं भूलता था।

उसने दरवाज़े की चटकनी को खोला। काली छायाएँ इधर-से-उधर तेज़-तेज़ चल रही थीं।

'उधर कौन है?'

प्रश्न करनेवाली वह नहीं थी। वह जानती थी वहाँ कौन है; उसी क्षण से वह जानती थी जब वह चौंककर जगी थी और घुड़दौड़ की सी तेज़ी से धक्-धक् करते हुए अपने हृदय को हाथ से थामा था।

'मैं हूँ—इस घर में काम करनेवाली' उसने धीमे स्वर में उत्तर दिया। 'चुपके-चुपके आओ, जवानो, वह यहाँ नहीं है...'

वे बड़े दरवाज़ेवाले कमरे में आ भी चुके थे। उसने ठिगने स्काउट को पहचान लिया।

'वह अभी तक वापिस नहीं आया है। वह ज़रूर दफ़्तर ही में होगा।'

'तो फिर, हमारे लिए अन्दर जाने की कोई ज़रूरत नहीं है। आओ चलो, साथियो, कमांडेंट के दफ़्तर को चलें।'

'रुको, ज़रा रुको!' फ़ेडोसिया सहसा बोल उठी। 'वह स्त्री तो है यहाँ!'

'कौन स्त्री?' कमांडर ने पूछा।

'जर्मनी की रखैल।'

'अच्छा, वह! हमें स्त्रियों की झंझट में अभी नहीं पड़ता है। हम कल फ़ैसला कर लेंगे कि उस स्त्री का क्या करना चाहिए।'

'वह जर्मन नहीं, वह हमी लोगों में से एक है' फेडोसिया ने दृढ़ स्वर में कहा।

'ऐसी बात है? फिर तो यह सवाल ही दूसरा है। किधर है वह?'

'अपने कमरे में सो रही है।'

लेफ़्टिनेंट ने अपना चेहरा रूखा बनाया।

'अच्छा, ज़रा उसे देख लेना चाहिए। क्या तुम हमें किसी तरह की रोशनी दिखा सकती हो?'

'संतरी देख लेगा।'

'अब कोई संतरी यहाँ नहीं रह गया है, मा।'

'अच्छी बात है, तो फिर, मैं लम्प जला दूँगी।'

काँपते हाथों से उसने दियासलाई की टोह की।

ये आ गये थे। आख़िरकार इतने दिनों बाद वे आ गये थे!

ठिगने स्काउट ने उसे दियासलाई का एक बक्स दिया। उसने लैम्प जलाया और बत्ती ऊँची कर दी।

'हमारे पाँच आदमी कमांडेंट के दफ़्तर में बन्दी हैं, ज़मानती...'

'चिंता मत करो, मा, हमारे आदमी वहाँ पहले ही पहुँच चुके हैं। वे उन्हें आज़ाद कर देंगे। हम तो कमांडेंट को बिना किसी अधिक झंझट के पा लेना चाहते थे....'

'मजबूरी है, वह आज यहाँ आया ही नहीं। मालूम होता है कि आज दफ़्तरवालों का काम ज़्यादा बढ गया है।'

बड़ी एहतियात से, कि कहीं आवाज़ न हो, उसने दरवाज़े को धीरे से खोला। लाल सैनिक अपने भारी जूतों के क़दम बहुत धीरे-धीरे रखने की कोशिश करते हुए उसके पीछे-पीछे चले। फ़ेडोसिया ने लैम्प को ऊँचा किया ताकि बिस्तर पर रोशनी पड़े।

पुस्या जग पड़ी और यह सोचते हुए कि कुर्ट आ गया है, कुछ नींद के स्वर में बुड़बुड़ाई। लेकिन उसे कोई उत्तर नहीं मिला और उसने अपना मुँह फेरा और चेहरे पर से बालों को पीछे किया।

लेफ्टिनेंट ने अचानक फ़ेडोसिया के हाथ से लैम्प छीन लिया और बिस्तर की तरफ़ क़दम बढ़ाये।

'यह कौन है?' उसने एक भीषण स्वर में पूछा।

'कमांडेंट की रखैल, हमारे ही देश की एक शहराती औरत', फ़ेडोसिया ने ब्योरा दिया।

पूस्या, भय-आतंकित, स्थिर-दृष्टि से उस मनुष्य की ओर देखती रही जो लैम्प लिये उसके सामने खड़ा था। उसकी रात की नीली पोशाक एक कन्धे पर से खिसक गई थी, जिसके अन्दर से उसका छोटा-सा कुच दिखाई दे रहा था। उसने अपने पाँवों को इकट्ठा कर लिया और एक अचेतन क्रिया वश अनजाने ढंग से बिस्तर के एक कोने की तरफ़ खिसकती गई मानो कि वह छिप जाना चाहती थी, मानो दीवार की किसी दरार में समा जाना चाहती थी। लेफ़्टिनेंट काँपने लगा। पुस्या के लाल, लाख के रंग से रँगे हुए नाखून लम्प की रोशनी में चमक रहे थे और एक क्षण के लिए उसके तिकोने दाँत होंठों के बीच में सफ़ेद काग़ज़ की तरह चमक उठे।

'सेरयोज़ा!...'

हवा में एक पत्ती की कम्पन से भी हलका वह स्वर था, लेकिन सेरयोज़ा ने उसके होंठों की गति से अपना नाम सुन—या पढ़—लिया। उसका काँपना बंद नहीं हुआ। उसने अपना एक छोटा-सा नाजुक हाथ, मानो उसकी ढाल बनाकर वह अपनी रक्षा करना चाहती हो, उठाया—एक हाथ कि जिसके

नाखून ख़ून में डूबे हुए मालूम होते थे। उसकी गोल-गोल आँखों के अंदर से भय झाँक रहा था। बिस्तर का क्षेत्र उसको बहुत विशाल जान पड़ा, जिसके एक कोने में वह दुबकी बैठी थी, जैसे कोई गुड़िया हो; उसका नंगा कुच नीले रेशमी वस्त्र के अंदर से झाँक रहा था; उसके नन्हे-नन्हे पाँव रात की पोशाक के दामन के नीचे सिकुड़े हुए थे।

बाहर कहीं से एक फ़ायर की आवाज़ आई।

'यह कमांडेंट के आफ़िस की तरफ़ हुई है,' फ़ेडोसिया बोली।

लेकिन उसी क्षण एक गोली की आवाज़ दूसरी दिशा से भी आई और फिर एक तीसरी दिशा से। और अब सब तरफ़ से गोलियाँ चलने की आवाजें आने लगीं।

सरगेई ने अपना रिवाल्वर ऊँचा किया। वह अपनी पलक का एक बाल भी हिलाये बिना उन काली-काली आँखों से आँखें मिलाये हुए एकटक देखता रहा। गोली की एक ज़ोर की आवाज़ हुई। ऐंठन लिये हुए एक कँपकँपी-सी पुस्या के शरीर में दौड़ गई। उसके होंठ खुल गये— नोकीले दाँतों के त्रिकोण झलकाने के लिए। उसकी गोल-गोल आँखें और भी गोल होकर खुल गईं। इसके बाद, शीशे की-सी चमक पाकर वे स्थिर रह गईं।

'कमांडेंट के दफ़्तर की तरफ़ चलो!' सरगेई ने आदेश दिया और चौखट पर ठोकर खाते और रसोई की बाल्टियों से उलझकर निकलते हुए वे सड़क पर पहुँच गये, जहाँ ख़ूब तेज़ चाँदनी छिटकी हुई थी।

गाँव में जोरों से लड़ाई शुरू हो गई थी। पहला फ़ायर जो उन्होंने घर के अंदर से सुना था, सैनिक ज़ाव्यास का था, जो उस पार्टी में था, जिसे शत्रु के तोपखाने पर अधिकार कर लेने का आदेश मिला था।

जिस समय सरगेई और उसके साथी दबे पाँव फेडोसिया के घर की तरफ़ आ रहे थे, ताकि कमांडेंट पर सोते में ही क़ाबू पा लें, दूसरी पार्टी धीरे-धीरे ढलुआँ पहाड़ी से चढ़कर गिरजाघर की तरफ़ पहुँच रही थी। ग्रामफ़ उज्ज्वल वस्त्र पहने, नालों में से होते हुए मकानों की छाया में बर्फ़ पर घिसट-घिसटकर चल रहे थे। आगे-आगे सामने की ओर दृष्टि ख़ूब ध्यान से जमाये

हुए सार्जेंट सेरड्यूक चल रहा था। इस तरह से बिना शत्रु को पता दिये ये लोग ठीक तोपख़ाने के पास तक पहुँच गये थे। तोपों के काले-काले मुँह बर्फ़ की पृष्ठभूमि पर साफ़ दीख रहे थे। रेंग-रेंगकर चलनेवाले इन लोगों के सिर के ऊपर तोपों के मौन भीमकाय मुख खोले हुए एक क़तार में चले गये थे। तीन सिपाही तोपों के पास बैठे हुए धीमे-धीमे बातें कर रहे थे। एक संतरी तोपों की कतार के बराबर चलकर पहरा दे रहा था। कड़ा जमा हुआ बर्फ़ उसके जूतों के नीचे कचर-मचर होता था।

सेरड्यूक साँस रोककर प्रतीक्षा करता रहा। ठीक खाई के पास पहुँचकर संतरी मुड़ा। सारजेंट ने उसकी तंग कमर और सिर के ऊपर निकली हुई किर्चें को देखा। बिना कोई शब्द किये वह खाई से निकला और जर्मन की तरफ़ लपका। वे दोनों साथ-साथ बर्फ़ पर कलाबाज़ी खाकर आ रहे। इससे पहले कि वह कोई आवाज़ निकालें, तोपों के पास बैठे सैनिकों ने अपने साथी का सहसा ग़ायब हो जाना ताड़ लिया था।

'ही! उधर हैंस!' घबराहट के साथ उनमें से एक बोला। ठीक उसी समय एक लाल सैनिक का पाँव सूखी लकड़ी पर पड़ गया। वह विश्वास-घातिनी टहनी कुड़कुड़ा उठी। बिना किसी आदेश की प्रतीक्षा के तोपचियों ने अपनी रायफलें उसी दिशा में मोड़ लीं। यही वह क्षण था जब ज़ाव्यास अपने को रोक न सका और अपने सबसे नज़दीकवाले शत्रु पर फ़ायर कर बैठा। जर्मन मुँह के बल गिरा। उसके बाद घटनाएँ इतनी तेज़ी से घटीं कि वे स्वयं अवाक् रह गये। तोपों के पास एक भी रक्षक नहीं और तोपें आक्रमणकारियों के हाथ में थीं। उसी समय गोलियों की आवाज़ सड़क के उस तरफ़ से आई, जिधर, नक़्शे के अनुसार, जर्मनों का सदर-दफ़्तर था।

'दोहरी मार्च साथियो!' सरड्यूक ने आदेश दिया, लेकिन वे शब्द उसके मुँह से निकले ही थे कि सामने कुछ काली छायाएँ आ पड़ीं।

जर्मन लोग शायद समझ गये थे कि आक्रमणकारी संख्या में थोड़े हैं और इसलिए बिना किसी चीज़ की आड़ लिये, बल्कि बिना झुके हुए दौड़े चले आ रहे थे। गोलियों की पड़ा-पड़ बौछार होने लगी और सेरड्यूक

घुटनों के बल गिरा और उसी क्षण उसके दाहिने पैर में दर्द की टीस एक तेज़ भाले की तरह उसे छेदने लगी।

'क्या हुआ ?'

'कुछ नहीं। चले आओ अपने निशाने पर साथियो, फ़ायर करो !'

दौड़ती हुई छायाओं में से एक गिर पड़ा, लेकिन इससे पौरों का साहस मंद नहीं हुआ। उन सबों के पास मशीनगनें थीं, और तड़ातड़ गोलियों की बौछार जारी थी।

'लेट जाओ जमीन पर से फ़ायर करो !...'

उन्होंने तोपों की आड़ ले ली और उन काली छायाओं का निशाना बनाने लगे जो बर्फ़ की सफ़ेदी में साफ़ दिखाई दे रही थीं। सरड्यूक निशाना ठीक साध कर लगाता जाता था ताकि कोई कारतूस व्यर्थ न जाय। उसे सहसा अपना चेहरा भयानक रूप से ठंडा होता हुआ महसूस हुआ और उसने सोचा कि यह ज़रूर उसकी टामीगन का कुन्दा होगा। उसका माथा और नाक ठंड से जमते जा रहे थे और उसके गाल ठिठुरकर सुन्न हो गये थे।

वह अपनी रायफल में कारतूस भर ही रहा था कि उसने बर्फ़ में नीचे की तरफ़ देखा तो वहाँ एक बड़ा-सा काला-काला तरल पदार्थ !

'उन्हें मज़ा चखाओ ! जवानो ! गोलियों की बौछार करो !'

वह गीला गड्ढा-सा क्या था, जिसमें उसने घुटने टेक रखे थे ? घुटने पर उसकी बिरजिस उसमें तर हो गई थी, और ऐसे बर्फ़ और पाले में यह बड़ी चकित करनेवाली बात थी मानो किसी ने वहाँ पानी बिखेर दिया हो।

जर्मन लोग अब चौराहे के दूसरी तरफ़ को, सड़क के बराबरवाली खाईं में पड़े हुए थे, और लगातार फ़ायर करते जा रहे थे। सेरड्यूक बर्फ़ के जिस एक ढेर के पीछे अपना सिर छिपाये हुए था, उसने सिर उठाकर देखा और परिस्थिति का अंदाज़ा लिया। इस प्रकार तोपों के पीछे से खाई की ओर और खाई की तरफ़ से तोपों की ओर यह फ़ायरिंग न जाने कब तक चलती रहे। इस बीच सारे गाँव में गोलियाँ चलना शुरू हो गई थीं। उसकी पाँच आदमियों की टोली और वह ख़ुद उधर बड़ा काम कर सकते थे।

'अच्छा, जवानो, यहाँ इतनी देर तक हम इस बेवकूफी में क्यों पड़े रहे ! हुर्रा ! स्वदेश और स्टालिन के नाम पर !'

वे सब कूदकर बढ़े मानो सब एक आदमी हों। झुके-झुके वे दौड़े और मशीनगनों और आटोमैटिक रायफ़ल की पट-पट के साथ धावा बोल दिया, उनकी किरचें, डंक की तरह उनके आगे निकली हुई थीं। कुछ ही क्षणों में वे खाई के मुँह पर पहुँच गये और भौचक्के जर्मनों के ऊपर कूद पड़े जिन्हें यह सोचने का भी अवसर नहीं मिला कि यह क्या हो गया। जो कुछ उनके पास था, उससे जर्मनों की पूरी-पूरी ख़ातिर की। सड़क-किनारे की खाई ठंडी हो गई। जर्मनों के शव बर्फ़ पर काले-काले धब्बों की तरह पड़े हुए थे, और विचित्र रूप से बहुत छोटे, दुबके हुए-से और गंदे लग रहे थे।

'अब किधर को ?' जाव्यास ने हाँफते हुए पूछा।

लेकिन सेरड्यूक ने उत्तर नहीं दिया। लोगों ने आश्चर्य से मुड़कर देखा।

'साथी सेरड्यूक, तुम कहाँ हो ?'

'क्या हो गया ?' सरड्यूक के दोस्त हलके भूरे बालोंवाले अलेक्सेई ने पूछा।

'वह हमारे साथ-साथ दौड़कर आया था या नहीं ?'

'पागल हो गये हो क्या ? निश्चय ही वह आया था !'

'फिर कहाँ है वह ?'

'यह है ! यह पड़ा है यहाँ !' वान्या, जो टोली में सबसे नौजवान था, एकाएक चिल्ला उठा।

अलेक्सेई दौड़कर उस जगह गया।

सरड्यूक तोपों और सड़क की खाई के रास्ते के बीच में पड़ा हुआ था, उसकी बाहें फैली हुई थीं, उसका एक हाथ मज़बूती से रायफल को पकड़े हुए था।

'क्या हुआ है ?' वान्या ने भर्राई आवाज़ में पूछा।

अलेक्सेई ने बर्फ़ के ऊपर झुककर देखा।

बहुत-सा खून वहाँ इकट्ठा हो गया था, और तोपों से लेकर उस स्थान तक जहाँ उस साथी ने प्राण दिये थे, खून की एक लकीर चाँदनी में साफ़ दिखाई दे रही थी।

'चोट किस जगह लगी ?'

चुपचाप अलेक्सेई ने इशारे से बताया। पैर और जाँघ का एक भाग शेष पाँव से समकोण बनाता हुआ पड़ा था। उस जगह की बर्फ पर काला-काला खून बहुत-सा इकट्ठा हो गया था।

'उसने अपना पाँव गोली से उड़ा दिया था जैसे कोई छुरे से काट लेता है...'

'सोचो तो सही, और उस हालत में उसका उस तरह दौड़ना!...'

'अब सोचने का समय नहीं है। हमें कमांडेंट के दफ़्तर को जाना चाहिए। मालूम होता है कि वहाँ दुश्मनों की काफ़ी खातिर की जा रही है।'

जल्दी से वे अलेक्सेई के पीछे चले। पाला उनकी खाल को नखोंच रहा था, उनके लिए साँस लेना मुश्किल कर रहा था।

जब पहली फायर हुई, उस वक्त कप्तान वर्नर अपने आफ़िस में फौजी चार-पाई पर पड़ा सो रहा था। उसे सदरदफ्तर से टेलिफोन की एक 'काल' का इंतज़ार था और इसलिए वह घर नहीं जा सका था। वह अपनी पूरी वर्दी पहने हुए ही लेट गया था और ऊपर से अपना भारी ओवरकोट डाल लिया था। फेल्डवाबेल दूसरी दीवार के बराबर गहरी नींद में सो रहा था और बराबर के कमरे में सैनिक हमेशा की तरह एक साथ गुड़ी-मुड़ी होकर पड़े सो रहे थे। कप्तान बहुत देर तक प्रतीक्षा करता रहा, लेकिन टेलिफोन की घंटी नहीं बजी। बराबर के मिले हुए कमरे की खुसरपुसर से और फेल्डवाबेल के खुर्राटें से भी उसको चिढ़ पैदा हो रही थी। पलंग भी कड़ा था और उस पर आराम नहीं मिल रहा था। आख़िरकार उसको नींद आ ही गई। फायर की आवाज़ से उसकी आँख खुल गई।

'गाँव में फिर कोई बाहर निकला है' उसने मुँह बनाकर सोचा। जर्मनों के आदेशों की प्रभावहीनता का यह नया प्रमाण पाकर वह क्रोध से भर उठा।

लेकिन क़रीब एकदम उसके बाद ही दूसरी और तीसरी गोली की आवाज़ आई। कप्तान पलंग से उछलकर खड़ा हो गया।

'ज़ाउस, उठ खड़े हो!'

फ़ेल्डवाबेल पहले ही उठ खड़ा हुआ था। उसकी नींद एक पल में हवा हो गई थी। खिड़की के बाहर बर्फ़ की कुचरमुचर होने की आवाज़ हो रही थी और जर्मन सैनिकों की एक टोली ने कमरे में आकर भीड़ कर दी।

'गाँव में बोलशेविक आ गये हैं !'

'दरवाज़ों की चटकनी लगाओ ! रोशनी बुझा दो !' वर्नर ने हुक्म दिया और वे भारी चिटकनी को चढ़ाने और भारी लट्ठों को दरवाज़ों पर अड़ाने के के लिए दौड़े ।

जिस कमरे में टेलिफ़ोन की घंटी लटकती थी, वह सबसे बड़ा था और रक्षात्मक कार्रवाई के सबसे अधिक उपयुक्त था । हालाँकि वर्नर के दिमाग़ में यह बात कभी नहीं आई थी कि हमले से कभी इस कमरे की रक्षा भी करनी होगी, लेकिन सब इंतज़ाम उसने तैयार कर रखा था । मोटे तख़्तों के दरवाज़ों पर उसने लोहे की चादरें चढ़वा दी थीं और ऊपर से सलाख़ें लगवाकर उन्हें और भी मज़बूत कर दिया था । दीवारें मज़बूत लट्ठों की थीं और खिड़कियों में भारी शटर्स थे । इमारत पुरानी थी और असल में गोदाम या अनाज की बखार के लिए बनाई गई थी । जिस हिस्से में सैनिक सोते थे और जहाँ ज़मानती लोग क़ैद थे वह हिस्से इसमें बाद में बढ़ाये गये थे, जब कि यह इमारत ग्राम-सोवियत, ग्राम-क्लब और ग्राम-पुस्तकालय के तौर पर काम में ली जाने लगी थी । दीवारें अपेक्षाकृत पतली थीं और दरवाज़ों के कुण्डे और ताले मामूली ।

लेकिन यह कमरा तो बिलकुल एक क़िले की तरह था ।

'दीवारों के सूराख़ खोल दो ।'

पल भर में उन्होंने दीवार के बराबर-बराबर लगे हुए लट्ठे को हटा दिया और सूराख़ खुल गये । इसके आस-पास रेत-भरे बोरे रखे थे और पतली ट्रेंचें खुद फ़र्श में भी खोद दी गई थीं । सैनिक पेट के बल जम गये । ठंडी हवा सूराख़ों में से कमरे के अन्दर आने लगी जिससे भाप के बादल पैदा होते थे । रायफ़लें भूँकने लगीं ।

'सदर दफ़्तर को फ़ोन करो, जल्दी करो ! अभी !—ये लोग छापेमार हैं क्या ?' एक हाँफते हुए संतरी से जो मशीनगन में कारतूसों की पेटी चढ़ा रहा था, वर्नर ने पूछा ।

'नहीं, बाक़ायदा फ़ौजी !'

'बहुत-से हैं ?'

'मैं जानता नहीं, वे सब तरफ़ से चढ़ आये हैं।'

वर्नर ने बुड़बुड़ाकर लानत भेजी।

'टेलिफ़ोन को मिलाओ!'

'हर-कापितान, टेलिफ़ोन बेकार हो गया है।'

वर्नर मेज़ की दूसरी तरफ़ को झुक गया और व्यर्थ टेलिफ़ोन की मुहानी में चीख़ता रहा, फिर मौन बाक्स पर अपनी मुट्ठी पटककर मारी। टेलिफ़ोन बेकार हो गया था।

'उन्होंने सिलसिला काट दिया है! जहन्नुमियों ने!'

उफनते हुए क्रोध में उसका एक ज़ोर का मुक्का उस बेकार बाक्स पर आकर पड़ा। टेलिफोन की मशीन खड़खड़ाकर फ़र्श पर गिर पड़ी। ठोकर मारकर उसने उसको कमरे के कोने में पहुँचा दिया।

'हम अपने आप इंतज़ाम कर लेंगे! मज़बूती से जम जाओ!'

सड़क पर फ़ायरिंग धड़ाधड़ शुरू हो गई और मोटी दीवार पर गोलियाँ बरसने लगीं। पास के कमरे के दरवाज़े के ऊपर रायफल के कुन्दे की चोटों की आवाज़ आ रही थी, लेकिन दरवाज़े पर उसका कुछ असर नहीं हो रहा था।

'कुन्दे मारे जाओ!' कप्तान ने बुड़बुड़ाकर कहा। वह दरवाज़े की मज़-बूती से आश्वस्त था।

× × ×

कमांडेंट के दफ़्तर की तरफ़ हमले का संचालन लेफ़्टिनेंट शालोव कर रहा था। जब तोपख़ाने पर कब्ज़ा करनेवाली टुकड़ी स्थल पर पहुँची तो उसके आदमी अभी-अभी पहला दरवाज़ा तोड़ने में सफल हुए थे।

'सेरड्यूक कहाँ है?'

'सेरड्यूक मारा गया। तोपख़ाने पर अधिकार हो गया है।'

पहले कमरे में उन्होंने सैनिकों की चारपाइयाँ और दूसरी चीज़ें उलटी-पुलटी बिखरी हुई देखीं लेकिन एक भी प्राणी वहाँ नहीं मिला।

'मालूम होता है कि इन चूहों की आँख खुल गई थी और अब वे दूसरे कमरे में घुस गये हैं। हम धूआँ पिलाकर वहाँ से उन्हें अभी बाहर करते हैं...'

'बाहर आओ, सब कोई ! हम लोग बाहर से हमला करेंगे !'

उन्होंने चारों तरफ़ फैलकर फ़ौरन उसको घेर लिया लेकिन जल्द ही उन्हें अनुभव हो गया कि यह तो एक किले की तरह सुदृढ़ है। मज़बूत लट्ठों पर गोलियों का कोई असर नहीं होता था। उसके बक्कल तो उधड़कर ज़रूर उड़ते थे, लेकिन कुल दीवार वैसी की वैसी अटूट खड़ी रहती थी। मशीनगनें क्रोध से भौंक रही थीं। दीवार के सूराख़ों में से नीले और लाल शोले जल्दी-जल्दी जल-बुझ रहे थे। इस घर के अन्दर से मौत बरस रही थी।

'उन्हें अपने कारतूसों की रत्ती-भर पर्वा नहीं' शालोव ने फुसफुसाकर कहा।

'ऐसा दिखता है कि अपनी हिफ़ाज़त के लिए ये लोग पहले से तैयार थे, साथी लेफ़्टिनेंट...'

सारे गाँव में गोलियाँ चल रही थीं। ज़ाहिर था कि अलग-अलग टुकड़ियों ने जर्मनों की अलग-अलग चौकियों को घेर लिया था। लेकिन इस घर से निकलनेवाले शोर ने और सब आवाज़ों को दबा दिया था।

'अच्छा जवानों, हमें इस क़िस्से को पूरा कर ही देना होगा। हमें सुबह होने से पहले-पहले इस पर क़ब्ज़ा कर लेना है। हमें अब यहाँ फ़ज़ूल बहुत देर करते हुए खड़े नहीं रहना चाहिए। हो सकता है कि अचानक उनका कोई दस्ता सुबह को यहाँ आ जाय, और फिर यह सब खेल ख़त्म हो जायगा।...'

वे लोग, ज़मीन के ऊँचे हिस्सों के पीछे और खाई में पड़े हुए, भूमि की ऊबड़-खाबड़ जगहों से फ़ायदा उठा रहे थे और बहुत होशियारी से निशाना लगाकर दीवार की सूराख़ों में से निकलती हुई रायफलों को ठंडा करने की कोशिश कर रहे थे। लेकिन घर के अन्दर से आनेवाली गोलियों की मार कम नहीं हो रही थी।

लेवान्युक के घर में रहनेवाले जर्मनों को तो इन लोगों ने अकाचकी में ही पकड़ लिया था। अन्दर घुसने पर लाल सैनिकों को वे सोते पड़े हुए ही मिल गये थे। चारपाइयों में जर्मन सैनिक घबराहट में कूदकर उठे और बराबर में पड़ी हुई रायफलों पर उनके हाथ पहुँचे और चारों तरफ़ अस्त-व्यस्त पड़ी फ़ौजी वर्दी और सामान में उनके पैर टकराने लगे।

'फ़र्श पर लेट जाओ !' मिचेंको ने भयभीत लेवान्युचिखा से चिल्लाकर कहा।

नन्हें बच्चे को चारपाई के नीचे छिपाती हुई वह एकदम आज्ञानुसार फ़र्श पर लेट गई। जब तक कमरे में दोबारा शान्ति नहीं हो गई, उसको अच्छी तरह समझ में नहीं आया कि यह सब क्या हो रहा है। लाल सैनिक तेज़ी से बाहर निकल गये थे, एक स्वप्न की तरह अदृश्य हो गये थे, और फ़र्श पर अपने रात के वस्त्रों में जर्मनों के शव पड़े थे।

'चलो वास्युटका, ज़रा मदद को हाथ बढ़ाओ, हमें यह गन्दगी घर के बाहर ज़रूर फेंक देनी है,' उसने अपने बेटे से कहा। वह अब भी काँप रही थी। हाँफते हुए उसने जर्मनों को टाँगे पकड़कर घसीटा। वास्या बारह ही वर्ष का था और वह स्वयं गर्भ से थी।

'इत्मीनान से, ज़रा इत्मीनान! हबड़-तबड़ क्या है!' उसने चिल्लाकर अपने बेटे से कहा।

लेकिन जल्दी करने का वास्या के पास पर्याप्त कारण था। वह एक तो लाल सैनिक के पीछे-पीछे चुपके से निकलकर नहीं जा सका था, दूसरे उसकी माँ अब उसे इस दलिद्दर में लगाकर उसे रोके हुए थी। गाँव भर में गोलियाँ चल रही थीं, हल्ले की आवाज़ें भी आ रही थीं, और बजाय इसके कि वह दौड़कर जाय और अपनी आँखों से देखे कि क्या हो रहा है, वह यहाँ जर्मन मुर्दों की टाँगें पकड़-पकड़कर घसीट रहा है। शायद वे उसके हाथ में एक बन्दूक ही पकड़ा दें। कौन जाने शायद पकड़ा ही दें!

जिस शान्ति के साथ गाँव पर हमला शुरू हुआ था, वह अब बहुत देर हुई ख़त्म हो चुकी थी : अब कोई इस डर से अपने को बचाकर, बाड़ों के पीछे छिप-छिपकर चलने की कोशिश नहीं कर रहा था कि कहीं सड़क पर उसकी परछाई से दुश्मन को पता न चल जाय।

'याद रखो, जवानों, एक आदमी भी यहाँ से निकलकर भागने न पाये, एक आदमी भी!' लेफ्टिनेंट ने उनसे गाँव में दाख़िल होने के पहले कहा था जब वे अपनी अलग-अलग टोली बना रहे थे।

और वे महसूस करते थे कि पूरे हमले की सफलता इसी पर निर्भर होगी।

जर्मनों ने भिन्न स्थानों पर अपना भिन्न-भिन्न रूप दिखाया। कुछ स्थानों में उन्होंने घरों के अन्दर जमकर मुकाबला करने की ठानी; और अन्य स्थानों में वे घबराये और बौखलाये हुए-से अपनी रात की पोशाक में ही—पर अपनी रायफ़लें और कारतूस लिये हुए—आँगनों की तरफ़ भाग निकले। पाले की कड़ाके की सर्दी में अधनंगी दशा में वे दौड़ते थे, बाड़ों के मोड़ों और कोनों के पास आकर लेट जाते थे और जी कड़ा करके फ़ायर करते जाते थे।

'रास्ते से हट जाओ, हमारे बीच में अड़गा मत डालो!' चिल्लाकर सरगेई ने उन स्त्रियों से कहा जो दोनों तरफ़ की गोलियों के बीच में मरने के लिए सब ओर सहसा इस तरह आकर फैल गई थीं, मानो ज़मीन से निकल पड़ी हैं।

'साथियो, मेरे घर में छै जर्मन हैं, छै जर्मन! जल्दी करो!' पेलचारिखा ने एक लाल सैनिक की बाँह खींचते हुए उससे अनुनय करके कहा।

'किधर है तुम्हारा घर?'

'तुम ज़रा चले आओ मेरे साथ साथ, मैं बता दूँगी। यहाँ से बिलकुल पास ही है, बस एक सेकंड लगेगा,' उसने ऐसे मिन्नत की मानो वह किराये पर उठाने के लिए अपने घर की तारीफ़ कर रही हो।

लाल सैनिकों की एक टोली उसके पीछे-पीछे लपक चली, मगर जल्दी ही उन्हें मालूम हो गया कि परिस्थिति इतनी सहज नहीं। विकट फायरिंग का सामना था। यहाँ भी दीवारों में सूराख खुले हुए थे और वह घर उनके ऊपर आग उगल रहा था।

पेलचारिखा लाल सैनिकों के बराबर में ही ज़मीन पर पड़ गई। सहसा बराबरवाला नौजवान अपनी छाती को जोर से मसोसता हुआ, एक कराह के साथ अपनी रायफल पर औंधा हो गया।

'कोई फ़ायदा नहीं इससे जवानों!' उसने चिल्लाकर कहा, 'इस तरह तो वे तुम्हें एक-एक करके मार के रख देंगे और आप मज़े से बचे बैठे रहेंगे। आग लगा दो इस घर को।'

'घर तुम्हारा ही है?'

'और होता किसका? चलो जवानो, लगाओ आग इसको!'

'कोई और भी घर में है ?'

पेलचारिखा ने मुट्ठियाँ कस लीं।

'एक बच्चा...बड़े-बड़े तो किसी तरह बचकर बाहर आ गये, लेकिन अन्दर...पालने में...'

'तुझे क्या हो गया है, औरत ! बिलकुल ही पागल हो गई है या क्या ?'

उसने लाल सैनिक की बाँह पकड़ ली।

'सुन, बेटे, मैं जानती हूँ मैं क्या कर रही हूँ...क्यों मेरे बच्चे की वजह से तुम सबके सब मारे जाओ...मैं माँ हूँ और मैं तुमसे कह रही हूँ—इस घर में आग लगा दो।'

'तू पागल हो गई है, माँ, तू एकदम बिलकुल ही पागल हो गई है।'

'आग लगा दो घर में ! जब मैं ही नहीं हिचकिचा रही हूँ, फिर तुम क्यों हिचकिचाओ ? हो सकता है बच्चे को बचा लेंगे हम लोग...यह ! समझ रहे हो ?

एक दूसरा लाल सैनिक जल्दी-जल्दी रूमाल से अपनी बाँह पर पट्टी बाँध रहा था। उसमें से सींजकर बाहर आता रक्त एक बड़े-से धब्बे के रूप में पट्टी के ऊपर दिखाई देने लगा।

उन्होंने पेलचारिखा की बात पर बिलकुल ध्यान नहीं दिया, फिर भी वह उनके पीछे पड़ी रही और लगातार अपनी प्रार्थना दुहराती रही।

'तुम्हें चाहिए कि बीच से एक तरफ हो जाओ। देखतीं नहीं, उधर से गोलियों की कैसी मार पड़ रही है।'

'किसे पड़ी है मुझ बुढ़िया को मारने की...'

सूराखों में से एक की रायफल चलना बन्द हो गई।

'वह ! देखा ! बस हमें यही करना है कि ताककर सीधा निशाना मारे जाएँ फिर उसके बाद सब ठीक हो जायगा !'

'सुनो, जवानो, छत पर से पहुँचने की कैसी रहेगी ? दूसरी तरफ़ से जाकर फिर छत के अन्दर से ?'

'हाँ, इसमें तो कुछ तुक भी मालूम होती है ! तुम लोग तो बस बराबर घर जलाने की ही बात बताते रहे ! कैसे उधर आया जाय ? अब रास्ता बताओ हमें।'

उनमें बहुत से तो वहीं डटे रहे और दूनी शक्ति से फायरिंग करते रहे। और लोग पेलचारिखा के पीछे-पीछे दौड़कर गये।

कुछ ही मिनिट बाद घर के अन्दर शान्ति पड़ गई।

'गोली मत चलाओ!' दरवाज़ा खोलते पेलचारिखा ने वहीं से चिल्लाकर कहा। 'गोली मत चलाओ!'

लाल सैनिक दौड़कर अन्दर घुस आये। जर्मन मरे हुए पड़े थे। एक अपनी मशीनगन पर ही मुँह औंधा किये था, बाक़ी औरों का किचों से काम तमाम कर दिया गया था।

'उधर देखो, सेरयोजा, ठीक माथे पर मारो उसे एक...'

उस जर्मन का उसी क्षण अन्त कर दिया गया।

उस समय पेलचारिखा पालने के पास घुटने टेके बैठी थी।

'वे उसकी हत्या कर गये' उसने निर्जीव आवेशहीन स्वर में कहा।

'उन्होंने इसकी हत्या कर डाली।'

सैनिकों ने मुड़कर देखा उस नन्हे-से शव को, जिसकी खोपड़ी चकनाचूर हो गयी थी। स्त्री ने उसे हाथों में उठाया। पालना खून से तर था।

'जरूर यह रो रहा होगा, तभी उन्होंने आकर इसके सर को चूर-चूर कर दिया...'

पेलचारिखा मृत बच्चे को हाथों में लिये यंत्रवत उसे हलकोरे दे रही थी।

'देख लो...और तुम घर में तब आग नहीं लगाना चाहते थे...एक मरे हुए बच्चे की फिक्र थी तुम्हें...इसी के कारन तो तुममें से दो घायल हुए...'

'मन को सँभालो, मा, मन को सँभालो...'

'मैं रो नहीं रही हूँ, मेरे बेटे, मैं रो नहीं रही हूँ। अगर कहीं तुम एक बंदूक मेरे हाथ में पकड़ा देते...'

गाँव के अन्दर गोलियों का चलना क्रमशः बन्द होने लगा। लड़ाई अब सिर्फ कमांडेंट के दफ़्तर के पास हो रही थी। रात फीकी हो चली थी। अपने इन्द्रधनुषी मंडल और अपने दोनों ओर के इंद्रधनुषी स्तम्भ के साथ चाँद की आभा अब मद्धिम पड़ने लगी। वायुमण्डल नीलाकाश में समाता चला

गया था और समस्त संसार मानो बर्फ़ से भरा हुआ कोई शीशे का गोला था। कमांडेंट के दफ्तर के पासवाली फायरिंग की निरंतर उठती हुई छोटी-छोटी लाल लपटें ही इस रजत और नील को भेद रही थीं।

'इस तरह तो कुछ भी काम नहीं चलेगा, जवानों...हमें एकाध दस्ती बम खिड़की पर फेंककर मारने चाहिए; उसके पट ऐसे बहुत मजबूत न निकलें शायद।'

'तुम उनके नजदीक पहुँच कैसे सकोगे? वे तो अंधाधुंध गोलियाँ बरसा रहे हैं...'

दीवारों की सूराखों से गोलियों की बौछार जमकर हो रही थी। गोलियाँ टूटकर पड़ रही थीं और सैकड़ों जगहों से एक साथ बर्फ उखड़-उखड़कर नन्हें-नन्हें बादलों के रूप में उड़ रही थी।

'आसमान साफ़ होता जा रहा है', शालोव ने चिंता से आकाश की ओर देखते हुए कहा।

दूर क्षितिज पर एक अरुण रेख फूटने लगी थी। लड़ाई उनके पूर्व अनुमान से और लम्बी बढ़ती जा रही थी। सुबह होते ही संभव था कि जर्मन दस्ते सड़क पर नज़र आने लगें, और सहायक दस्ते भी आ मौजूद हों।

रात की लड़ाई की, संभव है, किसी को ख़बर न हो। लेकिन भोर होते ही जर्मनों का अज्ञात का भय चला जाता था। और उनकी बाहर निकलकर आने की हिम्मत खुल जाती थी। अगर जर्मनों के इस दल के साथ कहीं पर किसी को ज़रा भी दिलचस्पी होगी, और इसमें संदेह नहीं कि उन्हें दिलचस्पी इस दल के साथ थी, तो टेलिफोन लाइन के कटने का पता उन्हें लग जायगा और वे इसके पीछे खोज शुरू कर देंगे। दिन में जर्मनों को अधिक सुभीता रहता था।

'तो फिर, जवानो...'

'इस तरह तो हम कब्जा करते नज़र नहीं आ रहे हैं, साथी लेफ्टिनेंट... ऐसे तो हम साल भर तक आमने-सामने बैठे रहेंगे। हाँ अगर हम हाथ से कोई दस्ती बम वहाँ तक फेंक सकते!'

'तो फिर,' एकाएक सरगेई बोल उठा, 'कोशिश से बढ़कर तो कुछ नहीं।'

'पर यहाँ तुम क्या कोशिश कर सकते हो?'

'तुम फ़िक्र न करो, मैं अपनी कोशिश कर दूँगा...'

वह फ़ासले से घूमकर मकान के दूसरी तरफ़ पहुँचा, फिर सरकता-सरकता उस तरफ़ आया जहाँ दीवारों में सूराख नहीं थे। लाल सैनिकों ने गोलियाँ चलाना बन्द कर दीं, कि कहीं उसके न लग जाय।

'वह क्या करने की सोच रहा है?' शालोव को चिंता थी लेकिन सरगेई बराबर शांत गति से सरकता हुआ बढ़ता जा रहा था।

उषा के ठिठुरते धुँधलके में काले-काले सूराखों के अन्दर से निशाना ढूँढ़ती हुई रायफल की नालों को वे इधर-उधर हिलते हुए देख सकते थे, जहाँ से कि गोलियाँ बराबर चल रही थीं। और मृत्यु के दाने बिखेर रही थीं।

और सहसा सेरगेई कूदकर खड़ा हो गया। अभी वे ठीक-ठीक समझ भी न पाये थे कि यह क्या हो रहा है कि वह उनके और मौत की फुंकार मारते हुए सूराख़ के बीच में खड़ा हो गया और हाथ घुमाकर दस्ती गोलों का एक गट्ठा ज़ोर से खिड़की पर फेंककर मारा। सभी कुछ एक धड़ाके के साथ हिल उठा और धुएँ के एक बादल में अदृश्य हो गया। लपटें जीभ-सी निकालने लगीं और खिड़की के सामने खड़ा वह व्यक्ति ऐसा लगा कि जैसे वह हलकी वायु में लटक गया हो। ऐसा लगा कि जैसे उसका ऊपर से गिरना कभी ख़त्म ही न हो रहा हो। आग की पृष्ठभूमि पर उसका लम्बा शरीर साफ़ खिंचा हुआ था। फिर वह सिकुड़ने लगा और धीरे-धीरे ज़मीन पर गिर उसका ढेर हो गया।

'बढ़ो!' शालोव ने हुक्म दिया।

वे सब इमारत की तरफ़ दौड़ पड़े। सूराखों में मशीनगनें ठंडी हो गई थीं, उनके किनारों पर रक्त बह रहा था और मशीन चालक भी ठंडे हो गये थे। दस्ती गोले अपना काम कर चुके थे।

'मेरे पीछे-पीछे आओ जवानो!'

गोलियों से उन्होंने इमारत का पलस्तर उड़ा दिया और दस्ती गोलों ने जो रास्ता खोल दिया था, उसमें होकर बाहर कूद आये, ऐसा करने में यद्यपि खिड़की के काँच के टूटे हुए टुकड़ों से उनके हाथ कट गये। आग की लपटें भारी-भारी शहतीरों को चाट रही थीं।

'अरे हमारे आदमी हैं अन्दर ! हमारे आदमी ।' माल्युचिखा दर्दभरी आवाज़ में चिल्ला उठी ।

अब जाकर कहीं उन्हें ज़मानतियों का ध्यान आया । वे अभी तक उस अँधेरे कमरे में थे और दीवार से कान लगाये खड़े हुए थे । जब पहिली गोली चली थी तब वे सो नहीं रहे थे, उनमें से हर एक ने वह आवाज़ उसी क्षण सुनी थी । जैसे वह एक ज़ोर की खटक उन्हीं के दिलों में हुई हो । कुछ क्षण तो वे साँस रोककर प्रतीक्षा करते रहे कि पहिली गोली के बाद दूसरी गोली की आवाज़ आई थी । नहीं इस बारे में कोई संदेह नहीं रह गया था—ये गोलियाँ किसी संतरी की यों ही चलाई हुई गोलियाँ नहीं थीं ।

'हमारे आदमी,' चेचोरिखा एक ऊँची पतली आवाज़ में बोल उठी ।

'हमारे आदमी' ओल्गा ने धीरे से कहा । एक मलाशा ही केवल अपनी जगह से नहीं हिली, अंधकार को उसकी शीशे की-सी आँखें उसी प्रकार घूरती रहीं ।

'वे गिरजे के पास गोलियाँ चला रहे हैं', येवडोकिम बोला ।

'और जर्मन तोपख़ाने के पास...'

एक गोली का धड़ाका ठीक दीवार के पास हुआ । ओल्गा चीख़ उठी ।

'बन्द करो यह हड़बड़ाहट ! वे यहीं आ गये हैं, यहीं...'

इस तरह, मानो किसी जाल में अंधकार से घिरे हुए, कुछ भी न देख पाते हुए, वे कहाँ बैठे थे । और दीवार के दूसरी तरफ़ गोलियाँ चल रही थीं, लोग भाग रहे थे, लड़ रहे थे, लेकिन वे कुछ नहीं देख पा रहे थे, कुछ नहीं जान पा रहे थे ।

'हमारी फ़ौजों के आने से पहिले ही जर्मन लोग हमें बाँधकर ले जायेंगे', ग्रोखाच ने सोचा, लेकिन वह मुँह से कुछ बोला नहीं, क्योंकि वह नहीं चाहता था कि स्त्रियाँ डर जायँ । दरवाज़े के उधर जो कुछ हो रहा था, उसे वह धड़कते दिल से सुन रहा था । लेकिन एक मिनिट बाद उसने रायफल की कुन्दों की चोटें बाहर से दरवाज़े पर पड़ती और बराबर के कमरे बहुत से लोगों के चलने की आहट सुनी । वह अपनी मुट्ठी से ज़ोर-ज़ोर से दरवाज़े को पीटने लगा ।

'वे लोग इमारत पर सड़क की तरफ़ से कब्ज़ा कर लेना चाहते हैं...'

'वह किसकी मशीनगन है... ?'

'जर्मनों की...वह हमारी है ; सुना उसे ?'

एक साथ मिलकर वे खड़े हुए, दम रोककर, वे सुन रहे थे। एक मलाशा ही केवल स्थिर बैठी थी, मानों जो कुछ वहाँ हो रहा था, उससे उसका कोई वास्ता नहीं था।

'ओह, मेरे परमेश्वर करुणामय परमेश्वर,' येवडोकिम ने एक साँस में कहा।

ओखाच ने एक दृष्टि उस पर डाली।

'क्या तुम प्रार्थना करने जा रहे हो ?'

'उसे प्रार्थना करने दो अगर उसकी इच्छा है तो', चेचोरिखा ने उसके पक्ष की रक्षा करते हुए कहा। 'तुम्हारा कोई नुकसान तो नहीं होता उससे, कि होता है ?'

येवडोकिम दरवाज़े के सामने घुटने टेककर बैठ गया और बुढ़ापे की काँपती आवाज़ में प्रार्थना करने लगा :

'भूख, भूचाल, संक्रामक रोग और शत्रु के आक्रमण से हमें मुक्त करो, हे परमेश्वर...'

ओखाच ने ज़रा-सा अपने कंधों को हचकोला दिया। बाहर गोलियों का चलना बराबर जारी था। सहसा एक भीषण धमाका हुआ। पूरी इमारत इस तरह हिल उठी, मानो धराशायी हो रही हो।

'ओह-ओह-ओह !' ओल्गा चिल्लाकर रो उठी।

लोगों की आवाज़ें कानों में आ रही थीं और बाहर का हल्ला बढ़ता जा रहा था। कहीं बिल्कुल पास से ही एक स्त्री की एकाएक डरा देनेवाली चीख़ सुनाई दी। लगभग तभी रायफलों के कुन्दे फिर दरवाज़े को पीटने लगे।

'दरवाज़े के पास से हट जाओ। पीछे हटो !' ओखाच ने हुक्म दिया।

प्रत्येक व्यक्ति पीछे हट गया। दरवाज़ा धड़ाम से अन्दर की तरफ़ आकर गिरा।

इन लोगों को ऐसा लगा, मानो एकाएक अंधकार में दिन के प्रकाश की बाढ़ आ गई। बराबर का कमरा ऊषा के पीले प्रकाश से, जिसे लाल लाल लपटें काट रही थीं, प्रकाशित था। सबसे पहिले जो दौड़कर अंदर आई, वह हाँफती हुई माल्युचिखा थी।

'हमारे अपने आदमी आ गये हैं। हमारे अपने आदमी यहाँ आ गये हैं!' उसने सबको पुकारा ; इस तरह शोर मचाते और हँसते हुए आकर उसने चेचोरिखा की बाँह पकड़ ली।

'तुम्हारे बच्चे मेरे घर में हैं, ज़िंदा हैं, कुशल से हैं...हमारे सैनिक गाँव में हैं। वे लोग अब गाँव में हैं।'

'इतना हल्ला मत करो, औरतो!' उनसे चिल्लाकर ग्रोखाच ने कहा। 'चलो बाहर निकलो।'

मलाशा एकाएक फ़र्श पर अपने स्थान से लपककर उठी और मुँह से बिना एक शब्द भी निकाले दौड़ती हुई बाहर निकल गई। एक नौजवान लाल सैनिक दरवाज़े पर बैठा अपने पाँव पर पट्टी बाँध रहा था। बड़े इत्मीनान से उसने जाकर पास पड़ी हुई एक जर्मन रायफ़ल उठा ली।

'अरे! क्या इरादा है।' उसने उसे रोकते हुए पुकारा। लेकिन उस अर्धविक्षिप्त-सी पागल आँखों को भयानक रूप से अपनी तरफ़ घूरते देखकर उसने शीघ्र ही हाथ खींच लिया।

'आ, पागल हो गई है...'

'ले जाने दो उसे' ग्रोखाच बीच में बोल उठा, 'यहाँ काफ़ी जर्मन रायफ़लें नहीं पड़ी हैं क्या?'

घर के पीछे से शोर उठा : 'निकल भागा वह जेरो, कायर निकल भागा।'

× × ×

धुएँ से कप्तान वर्नर का दम-सा घुटा जा रहा था। लगातार फ़ायरिंग होने से यह पूरा मुहर-बन्द कमरा अन्धकार से भर गया था। धुएँ से उसकी साँस रुक रही थी, वह उसकी आँखों में कड़क रहा था। उसके रायफ़ल की नली बहुत अधिक गर्म हो गई थी, दीवार के सहारे पड़ा ज़ख्मी सिपाही तक़लीफ़ से कराह रहा था। वर्नर के जी में तो आया था कि घूमकर ठीक

उसके मुँह पर गोली मारे, लेकिन वह अपनी आटोमैटिक रायफल को एक सेकेंड के लिए भी नहीं छोड़ सकता था। चारों तरफ़ ज़ख्मी सैनिक फ़र्श पर पड़े थे। वर्नर महसूस कर रहा था कि वह यहाँ से ज़िन्दा नहीं निकल सकेगा। ये लोग अचानक, बिना किसी भूमिका के, अकाचकी उस पर टूट पड़े थे, जब कि उनका आना उसने एकदम असम्भव समझ रखा था। और उधर सदर दफ़्तर में उन्हें चिन्ता थी केवल अनाज और चर्बी की—इन चीज़ों की माँग वे अनवरत रूप से करते रहे थे। लेकिन गाँव की तरफ़ आनेवाली सड़कों की सुरक्षा पर ध्यान देने को उन्हें कहो, तो इसकी ज़रूरत उनकी खोपड़ी में कभी आती ही नहीं थी। छापेमारों के तो नाम से ही वे खड़े-खड़े काँपते थे और उनकी चर्चा से कभी उकताते नहीं थे, लेकिन इसकी उन्हें कोई ख़बर नहीं थी कि उनके चारों तरफ़ हो क्या रहा है, और न ही उन्हें बोल्शेविकों के बारे में पता था कि वे कहाँ थे।

वर्नर के कुछ भी समझ में नहीं आया। सारी सूचनाओं से यही पता चलता था कि वे युद्ध के मोर्चे से बहुत दूर पर थे, काफ़ी दूर पर। मगर फिर एकाएक जर्मन कमांडेंट का दफ़्तर घेर लिया जाता है, छापेमारों द्वारा नहीं—वह तो एक ऐसी बात है जो मोर्चे के पीछे काफ़ी दूर पर भी हो सकती है—लेकिन बाक़ायदा लाल सैनिकों की फ़ौजों से घिर जाना! हाँ, अनाज! अनाज बेशक अब उन्हें अच्छी तरह मिल जायगा।

ज़ख्मी सैनिक की कराहें और भी दर्दनाक होती जा रही थीं। उसे पेट में चोट लगी थी। शैतान उसे उठाये! किसी-न-किसी को तो जरूर ख़बर लगेगी ही कि यहाँ पर क्या हो रहा है; कैसा नरक-काण्ड यहाँ मचा हुआ है, किसी-न-किसी को तो खबर लगेगी। उसके कान बज रहे थे, झन-झना रहे थे और उसे लग रहा था कि अब उसका सिर फटा। कितनी देर इस तरह चल सकेगा? तार काट डाले गये थे और अब सदर को सूचना देने का कोई साधन नहीं था। गाँव में गोलियाँ चलना बन्द होता जा रहा था। वह सुनता रहा, दफ़्तर के सामने और चौराहे पर शोर का बढ़ना वह सुनता रहा। साबित तो यही हो रहा था कि उसकी फ़ौजी टुकड़ी का सफ़ाया हो गया था और फ़तह करने के लिए दफ़्तर ही आख़िरी किला बचा था।

दूसरे ही क्षण उसके पाँव तले का फ़र्श हिला और उस धुएँ भरी हवा में एक ऐसे ज़ोर का धड़ाका हुआ कि जिससे कान बहरे हो गये। इस धमाके ने उसे दीवार से दे पटका, एक साथ चीखें और पुकारें उसके कानों में पहुँचीं। खिड़की के शटर्स टूटकर अन्दर को आ पड़े थे और वह समझ गया कि दस्ती बमों का एक गट्ठा फेंककर खिड़की पर मारा गया था। शोले लपकने लगे। वर्नर को अपने कन्धे में बड़ा तेज़ दर्द महसूस हो रहा था। रौंदी-कुचली लोथें, हाथ और पाँव इधर-उधर फ़र्श पर पड़े थे। बस, अब वहाँ रहने में कोई बुद्धिमानी नहीं थी। भागकर बिजली की-सी तेजी के साथ वह बराबर के मिले हुए कमरे में पहुँचा। अपेक्षाकृत यहाँ शान्ति थी। इस छोटे-से गोदाम के कमरे की दीवार में सिर्फ़ एक ही सूराख़ था और मशीनगन संचालक बराबर उसका घोड़ा दबाये जा रहा था, गोलियाँ छूट रही थीं यद्यपि उधर से जवाब देनेवाला कोई नहीं था। मालूम यही होता था कि उस तरफ़ से सब लोग चले गये थे। वर्नर ने चटख़नी को झटका देकर पीछे खिसकाया। खड़खड़ाकर यह खुले पड़े। उसके मुक्के ने खिड़की का शीशा तोड़ दिया। वह कूदकर बर्फ़ पर आ गया; वह यह देखने के लिए भी नहीं रुका कि वहाँ कोई है या नहीं, या यह कि गोलियों के निशाने में तो वह नहीं पड़ जायगा। बाहर खालिस बर्फीली हवा में वह एकाएक साँस न ले सका और सुबह-सुबह की आकाश और बर्फ़ की चमक ने उसकी आँखों को चौंधिया दिया। यहाँ से उसे अपने पीछे पैरों की चाप और शोर-पुकार सुनाई देती थी। इससे साबित होता था कि लाल सैनिक अब इमारत के अन्दर घुस आये थे। पहला सुरक्षित स्थान जो उसे दिखाई दिया यानी माल्युकों का बाड़ा। उसकी तरफ़ को बहुत लम्बे-लम्बे डग उठाता हुआ वह लपका।

एकाएक मलाशा उसके रास्ते में उभर उठी, मानों जमीन से ही निकल पड़ी हो। रायफल को नाल की तरफ़ से पकड़े हुए वह टूट पड़ी उस पर। वर्नर ने देखा कि उसका धुआँधार चेहरा और जलती हुई आँखें उसके बिल्कुल नजदीक थीं। बड़ी-बड़ी काली-काली आँखें, उसके बिखरे हुए बाल इस चेहरे के चारों तरफ़ हवा में उड़ रहे थे जो देखने में भयानक लगता था जैसे वह किसी दैवी प्रेरणा से प्रभूत हो। अपने मज़बूत हाथों को ज़ोर से घुमा कर

मलाशा ने रायफ़ल उसकी खोपड़ी पर मारी। वर्नर ने बहुत फुर्ती से निशाना लगाया। एक गोली की आवाज़ हुई, लेकिन ठीक उसी क्षण रायफल का कुन्दा उसके सर के ऊपर भयानक वेग के साथ आकर पड़ा। एक कराह के साथ वह ज़मीन पर गिर गया। उसका नाक टूट गया था, माथे की हड्डी का चूर हो गया था और खून बहकर उसके चेहरे पर आ रहा था। खून उसके गले में अटकता था। वह उसकी आँखों में भर गया था, उसके गले में भर गया था, जहाँ उसकी मोटी धार गटक-गटक कर रही थी। वर्नर की साँस घुट रही थी।

उससे दो कदम के फ़ासले पर मलाशा पड़ी थी। उसकी गोली की आवाज़ उसकी हड्डियों के कड़कने और टूटने के साथ-ही-साथ उसने सुनी थी। उसे अपने शरीर में यह गोली भाग्य के दिये हुए वरदान की तरह लगी। वह उसके पेट में जाकर बैठी थी, ठीक जहाँ उसको होना चाहिए था। वह पीड़ा नहीं पहुँचा रही थी। नहीं, वह पीड़ा नहीं थी, वह आनन्द था। एक मंगल-मुस्कान उसके चेहरे पर खेल रही थी। वह भाव जिसने पिछले महीने उसके मुख पर बुढ़ापे की रूखी छाया पोत दी थी, अब विलीन हो गया था, उसका कोई चिह्न अब वहाँ नहीं था। काँसे की-सी चमकती हुई त्वचा और काली-काली आँखोंवाली गाँव की सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी, मलाशा जमीन पर हाथ फैलाये, आकाश की ओर मुँह किये, वहाँ पड़ी थी। अब भी वह रायफल को मुट्ठी से पकड़े हुए थी, लेकिन सबसे दूर, बहुत दूर पहुँच गई थी, वह इन्द्रधनुष की आभा में तैर रही थी, वह डोल रही थी बर्फीली सुबह के नील सागर में, उस झिलमिलाते बर्फ़ की दुनिया में, जिस पर सूर्य की प्रथम किरणें पड़ रही थीं।

इन प्रथम किरणों ने इन्द्रधनुष में प्राण भर दिये थे। इसकी धुँधली पीली महराब तो रात भर दिखाई देती थी, लेकिन मात्र सिर्फ़ एक धुँधले मुक्तापट की तरह, जिसका आकाश की गहराइयों में सहज ही अन्दाज़ नहीं लगता था। किन्तु अब सूर्य ने उसे रंगों की चमक-दमक से सजीव कर दिया था और आकाश में वह निखरे हुए विविध वर्णों में और रंगीन कोमलता की अछूती और मुलायम आभा में खेल रहा था। वह गुलाब की पंखड़ियों की

द्युति से वसन्तागमन के लाल की बैंगनी चपलता से, लेट्यूस को ताज़ा हरियाली से, ब्लूबेल फूलों की छाया से, गुलाबों की सुर्ख सजीव चमक और कैम्पियन फूलों के दमकते सोने से खेल रहा था और उस सबके ऊपर एक प्राण-प्रद, पारदर्शी ज्योति, एक अमर आलोक छाया हुआ था।

मलाशा की आँखें इस इन्द्रधनुष, आकाश में फैले हुए इस अर्धवृत्त की ओर घूमी हुई थीं। उसका जीवन जल्दी-जल्दी समाप्त हो रहा था, उसके रक्त के साथ शरीर से जा रहा था। उसकी उँगलियाँ कड़ी हो गईं, पाँव ठण्डे हो गये, और शरीर जम गया।

पर इस सारे समय उसकी प्रसन्न आँखें इन्द्रधनुष को, आकाश के एक छोर से दूसरे छोर तक फैले हुए आभा के उस पथ की ओर ताकती रहीं। यह आलोकपथ अज्ञात दिशा को जाता था, यह नीलाकाश में सुख और आनन्द का एक पथ था, जिसे सूर्य और भी चमकीला बनाता जा रहा था। वह इन्द्रधनुष के यात्रापथ पर थी, वह, यानी सामूहिक खेत की सर्वश्रेष्ठ कार्य कर्त्री, गाँव की सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी। उसी के बारे में तो लोगों ने समाचारपत्रों में लेख लिखे थे, उसी के लिए तो प्रेम की ग्रीष्म की रातें आयी थीं।

बर्फ पाले की ऋतु अब बिल्कुल नहीं रही थी। उसके सर के नीचे सुखाई हुई घास खसखसा रही थी। अपनी सुगन्ध और फूलों की सुगन्ध से बसा हुआ कहीं पर पास ही मीठे पानी का एक स्रोत फूल रहा था। बातचीत, लड़कियों के गाने और लड़कों के हँसने की आवाजें दूर से उसको सुनाई दे रही थीं। एक अकार्डिएन बाजा रात की निःस्तब्धता को भंग कर रहा था। उसकी आँखें आकाश में इन्द्रधनुष को ढूँढने लगीं, लेकिन नहीं—इन्द्रधनुष यहाँ कैसे हो सकता था - यह तो गर्मियों की रातें थीं, आइवान बड़ा खुश हो-होकर हँस रहा था। वह थीं उसके मुँह के सामने उसकी आँखें, उसकी काली भवों के नीचे नीली-भूरी आँखें। तस्वीर धुँधली हो गई। उस रात्रि के अन्धकार ने उसे पोंछ दिया था। लेकिन इन्द्रधनुष अपनी उसी जगह पर था, उसी जगह पर खिंचा हुआ था।

वह उसको एक बार फिर देखना चाहती थी, चाहती थी उसकी आभा में अपनी आँखें सेंकना।

बड़ी कठिनाई से मलाशा ने कुहनी के बल अपने आपको उठाया। एक क्रूर, अमानवी पीड़ा ने उसको तड़का दिया और वह पीछे की ओर, फिर बर्फ़ पर लुढ़क पड़ी। वह महसूस कर रही थी कि अब वह मर रही है, जानती थी कि वह अब मर रही है, और उस मुस्काती हुई रंग-बिरंगी पट्टी को, आकाश में फैले उस इन्द्रधनुष को पकड़ने के लिए उसने अपने हाथ फैला दिए। लेकिन उसकी उँगलियाँ केवल अन्धकार को ही पकड़कर रह गईं। आकाश की ओर उठी हुई उसकी आँखें फिर शीशे-सी हो गईं। खुले हुए होंठों के बीच से उसके एक से बराबर उज्ज्वल दाँत झलक रहे थे। उसके चेहरे पर एक अद्भुत भाव था, पीड़ा से लिपटी हुई एक मुस्कान थी।

× × ×

घरों के पीछे शोर बढ़ता गया। यह उन स्त्रियों का शोर था, जो जर्मन कैदियों को लिये जा रही थीं। टरपिलिखा ने अपने ही बाड़े में छिपे हुए एक फ़रार को पकड़ा था। अपनी रायफल छोड़कर वह खुले दरवाज़े से भागकर अन्दर घुस आया और कोने में रखे हुए फूस के ढेर के नीचे दुबुक रहा था। बर्फ़ में उसके पाँव के निशानों से उसका पता चल गया। टरपिलिखा ने मदद के लिए लाल सैनिकों को बुलाने की चिंता नहीं की। उसने और ग्रोखाच की दोनों लड़कियों ने हथियार की जगह पचाँगड़े और जेलियाँ हाथ में ले लिये और चुपके से बखार में घुस गई।

'अबे, फ्रिट्ज निकल वहाँ से! वह है, वह, फ्रोज़्या! रेंगकर फूँस के नीचे छिप गया है...'

'उसे ढकेलो मत, मैं उसे अपने पचाँगड़े से गुद-गुदाऊँगी!'

'दालान के उधर से होकर जाओ, कहीं वह तुम्हारी तरफ़ को गोली न चला दे, कायर कहीं का...'

इस प्रकार घिरा हुआ सैनिक बिलकुल नहीं समझ पा रहा था कि वे क्या कह रही थीं, लेकिन वह पयाल के अन्दर से अपनी तरफ़ को तने हुए पचाँगड़े को देख सकता था। जल्दी-जल्दी वह पयाल को अपने शरीर से झाड़ता हुआ रेंगकर बाहर निकल आया। उसकी फटी हुई वर्दी चीथड़ों की तरह उसके

बदन पर लटक रही थी। अपने सिर पर वह दो ज़नाने 'ज़ालिम' बैंगनी रंग के रूमाल लपेटे हुए था।

'यह कोई औरतों को फँसानेवाला है! ज़रा देखो तो इसकी सूरत, लड़कियों! चल बे, आगे बढ़!'

डरते-सहमते जर्मन ने दरवाज़े की तरफ़ से घूमकर भाग निकलने की सोची। मगर वह दरवाज़े पर ही ठोकर खाकर गिर पड़ा।

'देखो उसे, कैसा रेंग रहा है...चल, अपने खुर ज़रा और ऊँचे करके उठा। फ़ोज़्या ज़रा देख तो, पयाल में रायफ़ल तो नहीं पड़ी हुई है। इस वक्त बड़ी काम आयेगी...'

लड़की ने उस कोने में अच्छी तरह तलाश करके देख लिया।

'नहीं, यहाँ कुछ नहीं है। उसने कहीं फेंक दी होगी।'

'वाह बहादुर! और इसके बूट-जूतों को तो देखो! श्येः!' टरपिलिखा के मुँह से निकला।

जर्मन के पाँव पर केवल चिथड़ों की ही पट्टियाँ बँधी हुई थीं।

'ज़रूर इसके पाँव ठंड से जम गये हैं, देखो, उन्हें कैसे घसीट रहा है!'

'उसे यहाँ तो किसी ने नहीं बुलाया था। वह अपने घर ही में बैठा रह सकता था और जितनी चाहता, आग तापता रहता। लेकिन नहीं, उसके तो दिल में हमारे देश की लौ लगी हुई थी।'

लोग सहमे दौड़ते हुए आ रहे थे।

'तुमने इसे कहाँ पकड़ा, टरपिलिखा?'

'हाँ-हाँ, ज़रा देखो तो इसको! यह!'

'हमसे तुम्हें क्या लेना है? देख नहीं रहे हो मैं एक क़ैदी को लिये जा रही हूँ। घूर घूरकर इसे देखने के बजाय तुम्हें चाहिए कि अपने अपने बखारों और बाड़ों में जाकर इन मूज़ियों को ढूँढकर निकालो! वह सभी जगह पिस्सुओं की तरह फैल गये हैं। इन सबको हमें चुन-चुनकर पकड़ना है।'

'ठीक कह रही है यह!' लँगड़े अलक्ज़ांडर ने कहा। 'चलो, देखो, इसके और भाई-बन्द कहीं और तो नहीं छिपे हुए हैं!'

सब कोई अपने पचाँगड़े फावड़े और कुल्हाड़ियाँ लेकर बढ़ चले।

'चलो, सब साथ-साथ चलें !'

'भीड़ में मज़ा रहता है।'

'ओहो फ्रोज़्या डर रही है, कहीं किसी जर्मन के ऊपर उसका पाँव न पड़ जाय...'

'परवाह मत करो, अगर मेरा पैर किसी जर्मन पर पड़ भी गया तो मैं इतनी ज़ोर से उसे कुचलूँगी कि उसे 'सी !' करने का भी मौक़ा नहीं मिलेगा।'

'अच्छा। अच्छा, औरतों,' अलाक्जेंडर ने उन्हे ठंडा करने की नियत से कहा, 'बहुत हल्ला मत करो !'

यह भीड़ की भीड़ एक मकान से दूसरे मकान को बढ़ती गई। उन्होंने भेड़ों के बाड़ों में पयालों को उलटा-पलटा और बखारों को देखा। उनके पैरों के बीच-बीच में बच्चे भी दौड़ते फिर रहे थे; एक-एक कोने में झाँक रहे थे और खुशी की किलकारियाँ मार रहे थे।

ऐन उसी वक्त साशा हाँफता हुआ दौड़ा आया।

'एक जर्मन हमारे बखार में छिपा हुआ है !'

एक दूसरे को धक्का देते हुए वे उस बखार की तरफ़ दौड़े, और बड़े फ़ख्र के साथ एक दुबके हुए कायर जर्मन को खदेड़कर बाहर निकाला। लाल सैनिक भी गाँव में से जर्मनों को ढूँढ़-ढूँढ़कर निकाल रहे थे; उन्होंने जब इन औरतों को देखा तो मुस्कराने लगे, लेकिन ये औरतें कोने-कोने से वाकिफ़ थीं, और उनकी तलाश अधिक सफल हुई।

'अच्छ, जवानो, बताओ, किसको ज़्यादा कैदी मिले !'

'तुम्हीं लोगों को मिले ! तुम्हीं लोगों को मिले !' सैनिकों ने हँसते हुए मान लिया।

'उनका कमांडेंट कहाँ है !' शालोव खीझ रहा था।

'एक बार फिर से उसकी खोज करो, जवानो ! यक़ीन है कि वह भाग-कर तो कहीं जा नहीं सकता !'

उन्होंने मरे हुए जर्मनों को एक निगाह फिर से देख डाला—फ़ेल्डवाबेल को और सब प्रायवेटों को।

'कप्तान, अरे उस कप्तान को ढूँढ़ो !'

लेकिन वर्नर बाड़ों के पीछे बर्फ़ में दबा पड़ा था। चोट से एक आँख बाहर को निकल पड़ी थी। दूसरी सीधी सिर के ऊपर आसमान को ताक रही थी। सिर का दर्द बर्दाश्त से बाहर था। उसे ऐसा लग रहा था मानो कोई घनों से उसके सर को कूट रहा है, जिसमें से लाल, नारंगी और बैंगनी चिंगारियाँ निकल रही हैं। जिस स्थान पर पहले उसकी आँख थी वहाँ एक लपट ज़ोरों से उठती मालूम हो रही थी और खून का पनारा उसके गले में चल रहा था। जितनी जल्दी-जल्दी उससे निगला जा सकता था, वह उसे निगल रहा था, वह खून को घूँटता जा रहा था और उसकी साँस घुटती जा रही थी, लेकिन खून बहता ही जा रहा था, बहता ही जा रहा था, मानों वह किसी अतल कूप से उबलकर निकलता आ रहा हो। और पूरे वक्त वह उसे घूँटता ही जा रहा था। और हर क्षण वह उससे घूँटा भी नहीं जाता था। वह जानता था कि अगर वह उसे घूँटना बंद कर दे तो उस गाढ़े द्रव्य की बाढ़ में उसका दम ही घुट जायगा। उसका गला छिलने लगा था, जिसके कारण वह अब आसानी से उसे घूँट भी नहीं सकता था, और ऐसा करने की उसकी कोशिश और ऐंठन से उसका सारा शरीर हिल उठता था। उसे लगा कि वह ठिठुरकर जमता जा रहा है, वह जानता था कि अगर तुरंत ही उसकी किसी ने मदद न की, तो वह निश्चय ही जमकर रह जायगा। वह काँप उठा। कौन यहाँ उसकी मदद को आयेगा ? 'मुज़ीक' लोग, इस कम्बख़्त गाँव के कम्बख़्त 'मुज़ीक' लोग ? उसका सारा शरीर भय से सिहर उठा। मान भी लो कि उसकी जान नहीं निकली बल्कि वह मुज़ीकों के पचाँगड़ों का शिकार हो गया या बोलशेविकों ने ही उसको कैद कर लिया... वातावरण सब ओर शांत था। गोलियाँ चलनी बंद हो गई थीं। उसने अपने आपको धोखा नहीं दिया। उसको मालूम हो गया कि उसके फ़ौजी दस्ते का सफ़ाया हो गया था और दुश्मनों को सफ़लता मिल गई थी। निराशा ने उसके हृदय में पंजे गड़ा दिये। उसको, यानी कप्तान वर्नर को, उन वर्दीवालों ने, उन पाजियों ने, अकाचकी में आकर मार लिया था। यह कैसे हो गया ?

वह अपनी अकेली आँख से सुदूर नीलाकाश को देख रहा था, मानो

वहीं अपने प्रश्न का उत्तर चाहता हो। और वहाँ उसने एक इंद्रधनुष देखा, एक विशाल अर्द्ध-वृत्त जो क्षितिज के एक छोर से दूसरे छोर तक फ़ैला हुआ था, एक चमकती हुई पट्टी, जो आकाश और पृथ्वी का संबंध जोड़े हुए थी। नाजुक झिलमिलाते रंग खूब चटकीले होकर चमक रहे थे। उसके धुँधले मस्तिष्क में एक धुँधली याद झिलमिला उठी, कहाँ उसने देखा था ऐसा इंद्रधनुष? हाँ, तो, उस बर्फ़ीली आँधी के आने से पहले तो।...क्या कहा था उस वक्त तब उस स्त्री ने? उसने कहा था कि इंद्रधनुष अच्छा शकुन है। कप्तान वर्नर ने एक आह भरी। इन्द्रधनुष आनंद का आलोक भरकर मुस्करा रहा था। वह एक अच्छा शकुन था—लेकिन उसके लिए नहीं। आनंद प्रदान करनेवाला इंद्रधनुष खिला हुआ था, लेकिन वह अब उसको नहीं देख रहा था। वह अंधकार में डूब चुका था।

१०

उन सबको गिरजे के पास ही छोटे-से चौराहे में दफ़ना दिया गया—उन्हें जो इसी रात को मारे गये थे और उनको भी जो एक महीने से खाले में बर्फ़ के अंदर पड़े हुए थे।

फ़ोड़्या क्रावचुक ने स्वयं अपने बेटे के शव को लाने में मदद दी। वह उसके निश्चेष्ट, अद्भुत रूप से हलके सिर को सहारा देकर उठाये हुए थी, उसके मुलायम बाल उसकी उँगलियों में रेशम की तरह लग रहे थे। बिना किसी दर्द या दुख के वह उसके चेहरे की तरफ़ देख रही थी जो लकड़ी का बनाया हुआ-सा लगता था। वास्या ने काफ़ी अर्से तक प्रतीक्षा की थी। भाइयों के हाथों ने उसे बर्फ़ में से निकाला, भाइयों के हाथ, सबके साथ, क़ब्र में उसे रख रहे थे।

स्लेज़ (बर्फ़गाड़ी) खाले के ढाल पर से धीरे-धीरे ऊपर आ रही थी। फ़ेडोसिया साथ-साथ चल रही थी, वह अपने बेटे का शव थामे हुए थी जिसमें वह स्लेज से खिसककर बर्फ़ में न गिर जाय। एक मा की कोमल भावना के साथ उसने उन दूसरे लोगों के शरीर भी सीधे किये जो वास्या के साथ-साथ बर्फ़ में पड़े थे।

'इस लड़की को भी इन्हीं लोगों के साथ दफ़न कर दो।'

'वह स्त्री है, लड़की थोड़े ही है,' माल्युचिखा बोल उठी।

'उसका पति फ़ौज में है।' लेकिन जब वे लोग उसका शव वहाँ लाये उसने महसूस किया कि यह उसकी ग़लत धारणा थी। वह तो केवल एक लड़की, एक जवान लड़की थी, जो बर्फ़ पर पड़ी थी। वह ऐसी लग रही थी जैसी कि एक साल पहले माल्युचिखा ने उसको देखा था, शादी की धूमधाम के पहले।

'वह एक सुन्दरी थी,' लाल सैनिकों में से एक ने धीरे से कहा।

'हाँ, वही थी यह, मलाशा, गाँव की सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी। उसकी लंबी बरौनियाँ उसके गालों पर छाया-सी किये हुए थीं। उसके बाल उसके सिर के चारों तरफ़ घनी लहरियों में लहरा रहे थे। उसकी काली भवें उसके चिकने स्निग्ध माथे पर अबाबील के पंखों की तरह लग रही थीं। उसके होठों पर एक पीड़ा की मुस्कान जमकर रह गई थी, एक ऐसी मुस्कान, जिस पर से कोई अपनी दृष्टि हटा नहीं सकता था।

उन्होंने लेवान्युक का शरीर फाँसी के तख़्ते पर से उतारा। उसकी माँ, जो गर्भ से थी, और जिसको नलों के दर्द भी शुरू हो गये थे, घर में बैठी न रह सकी। अपने बेटे के उस कड़े काले शव को थामने के लिए उसने अपने दोनों हाथ ऊँचे करके फैलाये, जो एक महीने तक आँधी और बर्फ़ में फाँसी पर ही झूलता रहा था।

'धीरे से, धीरे से,' उसने औरों को सतर्क किया, मानो उसमें अब भी जान बाकी थी और वह पीड़ा अनुभव कर सकता था।

लड़कियों ने उसकी सहायता की। वह बहुत हलका हो गया था, कुछ भी बोझ उसमें नहीं रह गया था। यद्यपि वह सोलह वर्ष का था, उसका चेहरा एक ऐसे बच्चे के चेहरे जैसा था, जो लकड़ी में किसी ने घड़कर बनाया हो।

उन्होंने एक क़ब्र खोदी, चौड़ी और फैली हुई, और उसमें उन्होंने सब मृतकों को एक साथ लिटा दिया—कड़े होकर जमे हुए उन वीरों के काले शव, जो एक महीने पूर्व मारे गये थे; सरगेई रोचेंको का शव और सारब्यूक का छिन्न-भिन्न शरीर; और साश्ड्यु का, जो मालूम होता था जैसे सो रहा

है ; वह सैनिक जो कमांडेंट के दफ़्तर के पास मारा गया था ; और मलाशा। शालोव ने अपने सब साथियों की तरफ़ से कुछ शब्द कहे। उसके गंभीर सीधे-सादे शब्द दूर-दूर तक उस खुली साफ़ हवा में फैल गये—उस शीशे के-से निर्मल आसमान तक जहाँ इंद्रधनुष एक बहुमूल्य सुंदर करधनी के समान फैला हुआ था।

सारा गाँव, औरतें, बूढ़े और बच्चे, उस क़ब्र के किनारे खड़े थे और सुन रहे थे और वहाँ आराम करते हुए मौन लाल सैनिकों और मलाशा की ओर देख रहे थे। फेड़ोसिया क्रावचुक ने अपने एक मात्र बेटे की मिट्टी, स्वदेश की मिट्टी के हवाले कर दी थी। और दूसरे लोग अज्ञात थे ; लेकिन हरेक के लिए उस क़ब्र में लेटे हुओं के शव उनके अपने ही बेटों, पतियों और भाइयों के शव के समान थे। उस दिन कोई इतना निकट संबंधी और प्रिय नहीं था जितना कि वे लोग जो यहाँ प्राण दे चुके थे और अपने मृत चेहरे आकाश की ओर किये हुए यहाँ पड़े थे। वे लाल सेना के सैनिक थे। अपनी ही लाल सेना के।

'हमारा देश उन्हें कभी नहीं भुला सकता,' शालोव ने ऐसे स्वर में कहा जो भाव के अतिरेक से काँप रहा था।

हाँ, वे जानते थे कि वे भूलेंगे नहीं। वे जानते थे कि इन शहीदों के चेहरों को और इस दिवस को वे कभी नहीं भूलेंगे। उन सबों की उस एक क़ब्र ने उन सबों को एक कर दिया था जो शत्रु के तूफ़ानी आक्रमण का सामना करते हुए पीछे हट गये थे, वे, और जो गाँव को आज़ाद करने आये थे, जिन्होंने शत्रु के हाथों से उसे छीनकर वापिस ले लिया था।

हरेक की दृष्टि शांत और स्थिर थी। हाँ, यह युद्ध था। हाँ, रक्त और आग और लोहे की वर्षा करते हुए वह इस गाँव पर फट पड़ा था। लेकिन सबों के दिलों में वही दृढ़ विश्वास जमा हुआ था, जिसने गाँव को उसके अत्यधिक भीषण दिनों में सहारा देकर अब तक जीवित रखा था,—यह विश्वास कि उनकी अपनी फौज लौटकर वापिस आयेगी और उनका आक्रमण शत्रु का अंतिम फ़ैसला कर देगा।

शालोव झुका, जमी हुई मिट्टी का एक ढेला उसने उठाया और उसे

क़ब्र में डाल दिया। और एक के बाद एक क़ब्र के पास खड़ा हुआ हरेक व्यक्ति झुका और अपने स्वदेश की मुट्ठी-भर मिट्टी उस क़ब्र में डाल दी, और उनकी आत्मा की शांति के लिए प्रार्थना की—कि वे अपने स्वदेश की मिट्टी का अनुभव हृदय पर लिये रहें, अपने स्वदेश की आज़ाद मिट्टी को अपने हृदय पर अनुभव करते रहें।

'तुम भी थोड़ी-सी मट्टी छोड़ दो, न्यूरा,' उसकी मा ने अपनी दो साल की लड़की से कहा।

उस छोटे-से बच्चे ने एक मुट्ठी मिट्टी उठाई और बड़ी एहतियात से क़ब्र में छोड़ दी। बच्चों के हाथों ने बर्फ़ के नीचे से काली मिट्टी खोदकर निकाली और उसे क़ब्र में छोड़ दिया। सैनिक अपने फावड़ों से उठा-उठा कर मिट्टी डालने लगे। आख़िरकार क़ब्र ज़मीन के बराबर हो गई। उसके ऊपर एक चबूतरा बना दिया गया।

'जब वसंत आयेगा, हम लोग इस पर फूल लगायेंगे।'

'और हरी-हरी दूब,' फ्रोज्या ने जोड़ा। 'और हरेक व्यक्ति अपने अपने बगीचे में से पौदे लायेगा।'

धीरे-धीरे भीड़ छँट गई। उनके हृदयों में कोई शोक या दुःख नहीं था। थी केवल एक पवित्र गुरु गंभीरता। मृतकों ने स्वदेश के लिए अपना सब कुछ दे दिया था। पहले भी ऐसा हो चुका था। सन् १६१८ में, और हरेक को उन दिनों की याद हो आई। उन दिनों भी कुछ कम लोग इस गाँव से नहीं मरे थे। ऐसा ही हुआ करता है। देश को उन्हीं का रक्त और जीवन देकर बचाना होता है जो उसकी मिट्टी में पैदा होते, वहाँ बढ़ते और बड़े होते हैं। यह एक साफ सीधी बात है।

चुपचाप वे सब वहाँ से बिखर गये, लेकिन एक मिनट बाद ही सारा गाँव शोर और बातचीत से उबला पड़ रहा था। ऐसी कोई भी स्त्री नहीं थी जो किसी लाल सैनिक को अपने ही यहाँ ठहराने के लिए ज़िद न कर रही हो। हरेक उनको आमंत्रित करना चाहती थी और जो कुछ भी उसके पास था, उससे उसकी ख़ातिर करना चाहती थी।

शालोव के पास तो एक पूरा जत्था का जत्था ही आ पहुँचा।

'साथी कमांडर हमें आपसे एक प्रार्थना करनी है,' टरपिलिखा कहने लगी। 'हम आप सब लोगों की एक अच्छी-सी दावत करना चाहते थे, लेकिन हमारे पास एक भी चीज़ नहीं...'

'तो मैं किस तरह आप लोगों की मदद करूँ?' वह हँसा।

'हम लोग कुछ न कुछ ढूँढ़ने का इंतज़ाम कर लेंगे; आप हमारी जरा-सी मदद कर दें। अपना सब कुछ हम लोगों ने छिपा दिया है—धरती के अंदर छिपा दिया है। जब जर्मन लोग आये तो हम लोगों ने सब छिपा दिया था। सवाल यह है कि हम सब कैसे उसे खोदकर निकालें? उसे निकालने के लिए हमारे पास कुछ है भी नहीं, और अब ज़मीन भी इतनी सख़्त हो गई है जैसे पत्थर, लेकिन आप लोगों के पास औज़ार है। अगर आप अपने दो लाल सैनिक हमारे साथ कर दें तो सामान निकालने में देर नहीं लगेगी।'

'बहुत अच्छी बात है, हम लोग जुट जाएँगे, उधर भी, अरे! कहाँ हो, लोगो! कौन-कौन इसमें मदद देना चाहता है?'

बहुत से स्वयंसेवक मौजूद हो गये। स्त्रियाँ कमर-कमर तक बर्फ़ में धँसती हुई, खेतों की ओर चलीं।

'यहाँ इस झाड़ी के पास है...'

'क्या बात कर रही हो, मम्मा! वह तो इस तरफ़ को था, इधर!'

'तुम किसलिए अपनी टाँग इसमें अड़ा रहे हो? बच्चे बोलते नहीं अच्छे लगते, काम करते अच्छे लगते हैं। तुम समझते हो, मुझे याद नहीं है?'

और इधर लँगड़ा अलेक्ज़ांडर अपने मेहमानों को राज़ी कर रहा था:

'बस तुम लोग चलो और उस भेड़ को ज़िबह कर लो। वह ऐसी बुरी नहीं। फिर हाँडी में डाल देना, खाने को कुछ हो जायगा।'

'लेकिन वह तो तुम्हारी एक ही भेड़ है, है कि नहीं?'

'एक ही है...मेरे पास और बहुत-सी थीं, लेकिन जर्मनों ने उन्हें हलाल कर डाला। सिर्फ़ यही एक रह गई।'

'तुम सोचते हो कि तुम्हारी आख़िरी भेड़ हम ले सकेंगे। नहीं, नहीं, ऐसा कभी नहीं हो सकेगा।'

उसने अपने दोनों हाथ जोड़कर विनती की।

'मुझे शर्मिन्दा मत करो, भाइयो। मैं यह तुम्हें पूरे हृदय से भेंट करना चाहता हूँ। और मैं क्या हाज़िर कर सकता हूँ। बस एक यही भेड़ मेरे पास है...तुम्हें एकदम इन्कार नहीं करना चाहिए, इससे सचमुच मेरे हृदय को चोट लगती है...'

और स्त्रियाँ, वे तो छिपी हुई जगहों में जो कुछ भी उनके पास रखा था, टाँडों पर से, और ज़मीन के नीचे से निकाल-निकालकर ला रही थीं। उन पालतू सूअरों का गोश्त जो पिछले पतझाड़ में ही जिबह किये गये थे, लहसुन के गुच्छे जिन्हें जर्मनों ने नहीं छुआ था, शहद के मर्तबान, यहाँ तक कि सूर्यमुखी के फूल के बीज भी निकाल लाईं। जल्दी-जल्दी उन्होंने जो भी थोड़ी-सी गायें रह गई थीं, उन्हें दुहा, ताकि घायलों के लिए दूध का प्रबंध हो सके। घायलों को ग्राम-सोवियत के कमरों में रख दिया गया था। फ्रोज़्या ने किसी ज़माने में नर्सिङ्ग की ट्रेनिंग ली थी। अस्तु, वह पहले ही से जाकर वहाँ व्यस्त हो गई थी। और सबों को उससे ईर्ष्या हो रही थी। वह सबके बीच बहुत महत्त्वपूर्ण लग रही थी। वह एक सफ़ेद एप्रन पहने हुए, अपने बालों को एक सफेद रूमाल से अच्छी तरह बाँधे, कमरे-कमरे जा रही थी। स्त्रियों और लड़कियों ने दरवाज़े पर भीड़ लगा रखी थी।

'कहिए मैं आप लोगों की क्या मदद कर सकता हूँ?' उनके पास से गुज़रते हुए हँसमुख नौजवान डाक्टर ने पूछा। जब पिछली रात को लाल सैनिकों ने कमांडेंट के दफ़्तर पर क़ब्ज़ा किया था, तो वह उनके साथ-साथ था और क़रीब-करीब सब घायलों की मरहम-पट्टी कर चुका था।

'हम लोग अस्पताल के काम में...कुछ मदद देना चाहते हैं...'

'असल में अब हमें और मदद की जरूरत नहीं रह गई है। हमें दो लड़कियाँ मिल गई हैं, और फिर हमारे पास हमारी अपनी स्टाफ़ की नर्सें हैं...'

'हम लोग फ़र्श को ही धो डालतीं, काफ़ी गन्दी हो रही है...'

'फ़र्श? हाँ, हाँ, क्यों नहीं। ख़याल बुरा नहीं है।'

वे लोग दौड़कर घर गईं और जल्दी ही एक पूरी भीड़ के साथ बाल्टियाँ और फ़र्श धोने के चीथड़े लिए हुए आ मौजूद हुईं।

'क्या तुम सारी दर्जन की दर्जन भर फ़र्श को धोने जा रही हो!'

एक अच्छी-ख़ासी बहस उनमें शुरू हो गई, हालाँकि वेलोग एहतियात से फुस-फुसाकर ही बोल रही थीं, जिसमें घायलों को तकलीफ़ न हो। आख़िरकार उन्होंने फ़र्श को हिस्सा करके बाँट लिया, और हरेक अपने छोटे-से हिस्से को धोने बैठ गई।

'मरीज़ के ऊपर के कम्बल खिसका जा रहा है। और तुम इधर ध्यान भी नहीं दे रही हो,' पिज़िचिखा ने फ्रोज़्या से कहा।

'गिर रहा है तो उसे सीधा कर दो,' फ़ौरन उस लड़की ने जवाब दिया, वह हाथ में ख़ून के पानी से भरा तसला लिये जा रही थी।

पिज़िचिखा पलंग के पास गई और बड़ी एहतियात से कम्बल को ठीक करके मरीज़ के पाँवों को ढक दिया।

'यहाँ तुम क्या कर रही हो?' डाक्टर ने पूछा।

'मैं कम्बलों को ठीक कर रही हूँ। वे बार-बार खिसक-खिसक जाते हैं,' उसने गम्भीरता से उत्तर दिया। वह उस समय एक मरीज़ के तकिए की शिकन ठीक कर रही थी।

उसने अपना हाथ उसकी तरफ़ हिला दिया।

'अच्छी बात है। अगर तुम्हें इसकी फ़िक्र है तो सीधा करती रहो।'

हाँ, इसकी सचमुच ही उसको इतनी फ़िक्र थी। सबके सब कुछ न कुछ सहायता वहाँ करना चाहते थे। छोटे से छोटा भी कोई काम हो, बस किसी तरह उन्हें सहायता करने भर दिया जाय, पीने को पानी देना, ताम-लोटों को खँगालना, साफ़ करना, मरीज़ों के मोज़े धोना, माथे पर से कंघा करके उनके बाल पीछे कर देना, इस बात की निगहदारी करना कि कोई दरवाज़ा तो कहीं ज़रा-सा भी खुल नहीं रह गया, जिससे ठण्डी हवा अन्दर आ रही हो।

ठीक उसी समय लीडा ग्रोखाच ने सकुचाते हुए अपना सिर कमरे के अन्दर किया।

'तुम भी क्या यहाँ कुछ मदद देना चाहती हो?' डाक्टर ने उससे पूछा। उसने सिर हिलाया।

'हमारी स्त्रियों में से एक के बच्चा हो रहा है...अगर आप चल सकें... आप डाक्टर हैं...'

'वेल, मैं ...मैं...कभी नहीं। लेकिन, हाँ, मैं सर्जन तो हूँ...'

'कोई हर्ज नहीं, डाक्टर तो आप फिर भी हैं ही। उसके ज़ोर का दर्द उठ रहा है। आज सुबह वह जर्मनों को पाँव से घसीट-घसीटकर अपने घर से उन्हें बाहर फेंकती रही, और मुझे लगता है, उसी से यह दर्द शुरू हो गया है...'

'ख़ैर इसमें और कोई चारा नहीं। मालूम होता है, मुझे जाना ही पड़ेगा,' प्रसन्नमुख डाक्टर ने कहा। 'एक नया नागरिक जन्म ले रहा है, मुझे इसमें मदद करनी होगी। मैं घायलों को तुम्हारे सिपुर्द करके जा रहा हूँ, कुज़्मा। तो अब किधर चलें हम?'

लीडा तुरंत उसे लेवान्युकों के घर ले चली। अपने ठिठुरते हाथों को मलता हुआ वह उनके पीछे-पीछे तेज़ कदम बढ़ाता हुआ चला।

'ऐसे पाले में तो आपको अपने दस्ताने पहन लेने चाहिए थे।'

'बात यह है कि मेरे पास दस्तानों की एक जोड़ी थी, लेकिन रात को वे ढीले होकर कहीं गिर गये; ... कहीं जरूर मैंने उन्हें गिरा दिया है। और कोई दस्ताना अब मेरे पास नहीं है।'

उसने शर्माते हुए उसकी तरफ़ एक नज़र देखा और फिर जल्दी से अपने मोटे खुरखुरे दस्ताने उतार दिये जिसे उसने खुद ही लाल और नीले फूल निकालकर बुना था।

'यह तुम क्या कर रही हो!' वह कह उठा, 'तुम क्या पहनोगी?'

'ओह, मेरे पास दूसरी जोड़ी है!' वह दिलेरी से झूठ बोली। 'मैंने उन्हें एक सुरक्षित जगह पर छिपाकर रख दिया था। जर्मनों को वह मिल नहीं सका। और आप डाक्टर हैं, आपके हाथों को तो इसकी ज़रूरत है।

यह देखकर कि उसके होंठ काँप रहे हैं और उसके आँसू निकलने ही वाले हैं, वह मुस्कराया।

'ख़ैर अगर तुम नहीं मानती हो तो मैं पहने लेता हूँ!'

लेवान्युकों के द्वार पर स्त्रियों की एक भीड़ जमा होगई थी। उन्होंने तुरंत डाक्टर को रास्ता दे दिया। वे सब उसे पहचानती ही थीं।

'तो अब मेरी ज़रूरत नहीं रह गई है?'

'बच्चा तो हो भी गया।' उनमें से एक ने कहा।

'नहीं, आपकी ज़रूरत है। उसकी हालत आप फिर भी देख ही लें। वह सारे वक्त बेहद दर्द और तकलीफ़ में थी। वह थककर बिलकुल हार गई है।'

'यह देखो, चाची, मैं तुम्हारे लिए डाक्टर को बुला लाई हूँ' लीडा ने घोषणा की।

'अरे, यह तुमने आख़िर क्यों किया? मुझे डाक्टर की ज़रूरत भला किस लिए होगी? बिलकुल नौजवान है यह तो।' बीमार स्त्री ने आश्चर्य से कहा। 'हाँ, अच्छा है, आप बच्चे को एक नज़र देख लें। मेरे लिए तो आप कुछ नहीं कर सकते। भला हो तुम्हारा! यह पहला ही बच्चा तो नहीं जो मैं जन रही हूँ!'

वह पालने की तरफ़ झुका।

'लड़का?'

'लड़का, हाँ, लड़का! मेरी एक ही लड़की हुई न्यूरका, बाक़ी सब लड़के ही हुए.. हमारे खान्दान में लड़के ही होते आये हैं...'

'बड़ा खूबसूरत लड़का है! अच्छा, क्या नाम रखने जा रहे हैं आप इसका?'

'मैं अभी इन बहनों से इस बारे में बात कर रही थी... मैं इसका नाम मिट्या रखना चाहती थी, इसके बड़े भाई के नाम पर, लेकिन ये लोग कहती हैं कि यह नाम बुरा है...'

'क्यों, क्या हो गया था इसके भाई को?'

'देखिए न, इसका भाई, मेरा सबसे बड़ा लड़का, आज के दिन सबों के साथ दफ्न किया गया...पूरे महीने भर वह फाँसी पर लटका रहा, मेरा वह बेटा, और आज ही के दिन, खुद, मैंने अपने हाथ से उसे सूली से उतारा,' उस स्त्री ने शांत स्वर से उसको कारण समझाया।

'अच्छा, मुझे नहीं मालूम था कि वह आप ही का बेटा था...'

'हाँ, मेरा पहलौठा बेटा—वह छापेमारों के दस्ते से मिलने जाने की कोशिश कर रहा था, मगर जर्मनों ने उसे पकड़ लिया। मैं उसी के नाम पर बच्चे का नाम मिट्या रखना चाहती थी। लेकिन इन लोगों की सलाह है

है कि नहीं, यह नाम मुझे नहीं रखना चाहिए ; और मेरी समझ में नहीं आता कि उसका क्या नाम रखूँ ...'

'आप विक्टर रखिए उसका नाम' डाक्टर ने सलाह दी। 'यह अच्छा नाम है। वह आज के दिन पैदा हुआ, इसलिए उसे पूरा अधिकार है विक्टर कहलाने का ...'

वह कुछ क्षण तक इस पर ग़ौर करती रही।

'नाम कोई बुरा नहीं। तुम्हारा क्या ख़याल है, लिडा ?'

'अगर यह उनकी सलाह है...'

'खैर, इसमें ज़्यादा सोचने-साचने की कोई ज़रूरत नहीं है। सारे गाँव में इस नाम का कोई भी आदमी नहीं है। विक्टर ही नाम रखो इसका। लेकिन बैठिए, बैठ जाइए थोड़ी देर हम लोगों के साथ।'

'आपका शुक्रिया, लेकिन मुझे वापिस जाना ज़रूरी है। मेरे मरीज़ मेरी राह देख रहे होंगे।'

'लेकिन उनकी तो आपने मरहम-पट्टी कर दी है, ये औरतें बता रही हैं। एक मिनट के लिए ज़रा बैठ जाइए। सबों के घरों में कोई न कोई मेहमान है, लेकिन चूँकि मैं ज़च्चा थी, कोई भी...और तुम लीडा आल्मारी से वोड्का तो ले आओ, एक बोतल वहाँ रखी है।

'आप अभी न पीएँ तो अच्छा है,' डाक्टर ने कुछ सकुचाते हुए कहा।

वह मुस्कराई।

'क्यों नहीं ? आप घायलों को अच्छा करने के बारे में काफ़ी जानते हैं, लेकिन मेरा खयाल है कि औरतों की अंदरूनी दुनिया से आप बिलकुल नावाक़िफ़ हैं। थोड़ी सी वोड्का पीकर कोई भी गिरता हुआ आदमी खड़ा हो जायेगा।'

इसके बाद उसने कोई एतराज़ नहीं किया। लीडा ने शराब एक मोटे हरे से गिलास में डाली।

'नये बच्चे की तंदुरुस्ती के लिए, वह खूब बलवान और स्वस्थ हो...'

'और वह अपने घर में जर्मनों को न देखे !'

'उसका जन्म रोज़ एक नई विजय की याद दिलाये !'

'वह बड़ा होकर जैसा मिट्या था वैसा हो...'

डाक्टर थकान से चूर था। उसे बहुत कम नींद मिली थी, अस्तु मदिरा ने उसके शरीर में एक मज़े की गर्मी भर दी, और वह काफ़ी सरूर में हो गया। वह बेंच पर बैठा हुआ था और उसको ऐसा मालूम हो रहा था जैसे युद्ध और संघर्ष कहीं दूर, बहुत दूर, रह गये हैं। कमरे की दीवारों का सफ़ेद रंग भला लग रहा था; उस पर फूलों के डिज़ाइन और कोने में लटके हुए पर्दे पर कशीदे की बेलें उसकी दृष्टि में उभर उठीं। सुंदरी लीडा उसकी ओर देखकर मुस्करा रही थी। बिलकुल ऐसा मालूम हो रहा था, जैसे यहाँ से कुछ मकानों की दूरी पर कोई भी घायल कहीं पड़ा हुआ नहीं है—जैसे गिरजे के सामनेवाले चौराहे पर क़ब्र का कोई चबूतरा नहीं बनाया गया था, जैसे मानों युद्ध के शुरू दिन से जिस कठिन परिश्रम के रास्ते पर वह चलता रहा है, वह कभी कहीं था ही नहीं।

'लीडा, डाक्टर को वह फ़ोटो दिखाओ, वह उस मूर्ति के पीछे है। दिखाओ तो उन्हें।'

डाक्टर ने हाथों में उस धुँधले फ़ोटोग्राफ़ को लिया। एक उद्दण्ड खिलाड़ी लड़का उसकी तरफ़ मुँह किये हुए उससे आँखें मिला रहा था, वह एक सीधे-सादे गाँव के लड़के का चेहरा था।

बर्फ़ और पाले ने उसको इतना बदल दिया था कि उसे पहचाना ही नहीं जा सकता था। 'पहले वह ऐसा था,' मा ने शांत भाव से बतलाया।

डाक्टर को अपनी मा याद आ गई। उसके काँपते सफ़ेद चिट्टे हाथ, जब वह उसे बिदा दे रही थी, उसकी खड़खड़ाती आवाज़, उसकी बड़ी-बड़ी आँखें भावों के आवेश से भारी, उसे पीड़ापूर्ण विचारों और उस भय और शंका से भरी रातें याद आईं जिसे वह अपने अन्दर दबा नहीं पाता था, वह भय जो उसे घायलों के प्रत्येक जत्थे के आने के पहले महसूस होता था, खून, दुःख और मृत्यु का भय। 'स्नायु-दुर्बलता है', वह अपने आपको समझाता; लेकिन इससे कोई लाभ न होता। उसके स्नायु वही स्नायु रहे और उनकी दुर्बलता वह पहले से और भी अधिक महसूस करता था।

उसने बिस्तर में पड़ी हुई स्त्री की तरफ़ देखा। वह एक गुलाबी ख़ानेदार तकिये पर सर रखे पड़ी थी। उसके कंघी किये हुए बालों के बीच में, तस्वीर की तरह, उसका चेहरा शांत लग रहा था। पूरे महीने भर तक यह स्त्री आँधियों के सर्राटों का स्वर सुनती रही थी जो कि फाँसी पर लटके हुए उसके पहलौठे बेटे को झुलाती रही थी। पूरे महीने भर तक वह और उसके बच्चे भूख और आतंक की पीड़ाएँ सहते रहे थे। गर्भ से रहते हुए भी वह अपने उस सोलह वर्ष के बेटे को क़ब्र तक स्वयं ले गई थी, जिसको उसने अपने ही हाथों फाँसी की रस्सी काटकर उतारा था। और फिर घर आकर उसने नये बच्चे को जन्म दिया था। और अब कितनी शांत वह पड़ी थी और उस मदिरा की अंतिम बूँद भी वह उसको भेंट कर रही थी जो उसने जर्मनों के पंजों से बचाकर छिपा रखी थी।

स्त्रियाँ बाहर से आ-आकर बेंचों और स्टूलों पर उसके चारों तरफ़ बैठी हुई थीं। उसने उड़ती नज़रों से उनकी तरफ़ देखा। सभी की गर्दनें जर्मन जूए के नीचे रह चुकी थीं, सभी पर जर्मन शासन की मार पड़ चुकी थी। उनके पति और बेटे बहुत दूर मोर्चों पर थे। उनमें से कोई भी नहीं जानती थी कि उनके प्रिय-जन जीवित थे कि नहीं। वे सभी उस भीषण जाड़े और पाले में अपना गुज़र कर चुकी थीं और उस भूख की पीड़ाओं को भोग चुकी थीं जो कि जर्मन अपने साथ लाये थे। फल-स्वरूप उनमें बहुतों के शरीर पर रायफ़ल के कुन्दों की मार के घाव थे। लेकिन उनके व्यवहार से इस सब का पता किसी को नहीं लग सकता था; ये बातें मालूम करने पर ही मालूम होती थीं। उनके चेहरे शांत, चिंता-मुक्त थे; और उन पर एक ऐसा सौम्य भाव था जो उनकी छिपी हुई अंतर शक्ति में उन्हें प्राप्त हुआ था, जो उनके हृदयों की अंतरतम गहराइयों से निकला था।

'किसान स्त्रियाँ,' उसने विचारा, और इन शब्दों में उसके लिए अब एक नया अर्थ छिपा हुआ था, एक महत्व।

'अगर हमारे पास और वोडका होती तो हम एक बार फिर मिट्या की याद में अपने प्याले भरते!' लेवान्युचिखा धीरे से बोली।

'किस लिए!' बीच ही में एकाएक टरपिलिखा बोल उठी, 'उसको हमें

याद दिलाने के लिए किसी बहाने की ज़रूरत नहीं। उसको तो हम सब लोग ऐसे ही याद रखेंगे। मैं सही कह रही हूँ कि नहीं बहनो ?'

'कैसे भूलेगा वह हमें ?'

'उसकी जगह पर अब विक्टर है। वह बड़ा होकर मित्या की तरह हो जाएगा, और जैसा उसको करना चाहिए अपना कार्य करेगा और अगर कोई वैसा मौका आया तो वह अपनी जान भी दे देगा, जैसे मित्या ने दे दी।'

मदिरा के धूएँ ने उसके मस्तिष्क को एक हलके सुखद धुँधलके में लपेट लिया। वह उन स्त्रियों से कोई बड़ी अच्छी बात करना चाहता था, कोई आनन्द की बात लेकिन उसका हृदय फाँसी पर मरनेवाले लड़के के लिए दुःख से भारी हो उठा था, उस मा के लिए जिसने स्वयं उसका फन्दा ढीला किया था, उन सबों के लिए दुःख से भर आया था जो इन सब यातनाओं को सहन करते रहे थे।

'तुम नशे में हो गये हो,' उसने सख़्ती के साथ अपने आप से कहा। लेकिन इससे उसे सहारा नहीं मिला, और उसकी आँखें भर आईं।

'आपको क्या हो गया है ?' लिडा ने चिन्तित होकर पूछा।

'मुझे दुःख होता है,' किसी तरह अपने को ज़ब्त करते हुए उसने कहा।

लेवेन्युचिखा ने ग़ौर से उसकी तरफ़ अपनी अनुभवी गहरी आँखों से देखा।

'दुःख करने की कोई बात नहीं है,' उसने शान्त स्वर में कहा। 'मित्या चला गया, लेकिन विक्टर तो है। हम लोग मज़बूत आदमी हैं। मिट्टी ने हम लोगों को जन्म दिया है। अगर तुम नाशपाती की डाल काट दो, तो उसमें से नई कोंपल फूट पड़ती है और तुम्हारे देखते ही देखते सूर्य की रोशनी में बढ़ आती है...मित्या चला गया है, और दूसरे लोग भी चले गये हैं, लेकिन यह पृथ्वी रह गई है और उस पर रहनेवाले रह गये हैं...कितनी ही बार हमें ऐसा लगता था कि हम कुछ भी देखने को जीते न बचेंगे; वे लोग पहले ही हमें ख़त्म कर देंगे। लेकिन फिर भी हम इसको देखने के लिए जिन्दा बच रहे हैं, जिसका हम इन्तज़ार कर रहे थे।...जनता तो सब तरह की परिस्थितियों में ज़िन्दा रह सकती है...नहीं, जर्मनों के लिए उसे यानी हमारे राष्ट्र को कुचलना लोहे के चने चबाना है।'

उसके आँखों की धुंध हलकी होकर छँट गई। इस किसान स्त्री ने उन सब उलझी हुई कठिन शङ्काओं का समाधान कर दिया था, जिनके कारण उसका हृदय इतना व्यग्र था। उसने अपने गाँव के तरीके पर उसके प्रश्नों का सीधा, सरल, शान्त उत्तर दे दिया था।

'बेशक, बेशक...'

'तुम अभी जवान हो—इसी लिए तुम्हारे लिए इसको सहना कठिन है। लेकिन चिन्ता मत करा। इस सबका अन्त होगा और तुम फिर अपना जीवन, बीमारों को अच्छा करते हुए बिताओगे। और जहाँ तक हमारा ताल्लुक है, हम लोग अपना काम आगें बढ़ाते हुए चले जाएँगे।'

वह उठ खड़ा हुआ। उसे याद आया कि उसे बैठे बैठे ज़रूरत से ज़्यादा देर हो गई है।

गाँव में हर तरफ़ से लोगों के प्रसन्न स्वर सुनाई देते थे। कहीं पर घरों के पीछे से, ठण्ड और पाले के बावजूद लड़कियाँ गीत गा रही थीं। आदमियों के स्वर भी उनके साथ शामिल हो गये। वह गीत हिम-शीतल आकाश में गूँज रहा था, वायु का कोई हलका-सा झोंका भी उसे अस्थिर नहीं कर पाता था। वह लार्क चिड़िया के गीत की तरह ऊँचा उठ रहा था, मानो वह महीने भर के उस मौन का बदला चुका रहा था जो महीने भर तक अपना कफ़न सारे गाँव पर डाले रहा था। लड़कियों की पतली आवाज़ों को लाल सैनिकों के गहरे स्वरों का साथ मिल गया था।

गाँववाले बचपन से गीतों के आदी थे। वे प्रभात का स्वागत गीत से करते, गीत से ही वे अस्त होते, दिन को विदा देते, और गीत गुनगुनाते हुए ही वे सोने जाते। गीतों की लहरें गेहूँ काटने में सहायता देती थीं सौंधी-सौंधी सूखी घास को समेटने में सहायता देतीं, बच्चों को ढोर चुगाने और मर्दों को अनाज निराने में सहायता देतीं। लड़कियाँ गीत गाती हुई विवाह में भाग लेतीं, और मुर्दों को दफ़नाकर जब वे उनसे विदा लेते तो भी गीत उनके होंठों पर होते। दुःख के गीत भी थे—पुराने गीत, जो सड़क के किनारे किनारे लगे हुए नीबू के बागों से भी पुराने थे; और सुख और आनन्द के गीत भी थे—नये गीत, जो जीवन वे बिता रहे थे, उस जीवन के गीत। इन

लोगों की परम्परा बन गई थी गीत को जीवन से मिलाने की और जीवन को गीत से।

पूरे महीने वे मौन रहे थे। पूरे महीने एक भी गीत उनके कण्ठ से नहीं निकला था, गाँव में एक भी गीत नहीं गाया गया था। नीरव थे सब घर, सड़कें और बाग़।

लेकिन अब वे फिर गीत गा सकते थे। और लड़कियों का गीत सारे गाँव पर छा गया, सारे बर्फ़ पर पटे हुए मैदानों पर छा गया। एक के बाद एक वे अपने प्रिय गीतों को गाती जा रही थीं, जो सीधे उनके हृदय से उठते थे और सड़क के बाद चौराहे से होते हुए ग्राम सोवियत् तक पहुँच रहे थे जहाँ लँगड़ा अलेक्जेंडर उस बड़े-से साइन-बोर्ड पर कीलें ठोंक रहा था जिस पर 'ग्राम-सोवियत्' लिखा हुआ था। बच्चे भीड़ बनाकर वहाँ खड़े थे और ऊपर को गर्दनें लम्बी कर-करके उस परिचित लिखावट को देख रहे थे। स्त्रियाँ घृणा से थूकती हुई फ़र्शों पर से जर्मनों का ख़ून धो रही थीं।

'शाम तक इनका एक निशान भी न रह जाय,' उनमें से एक ने कहा, और जी-जान से काम में जुट गई।

यही तो उनमें से हरेक की हार्दिक इच्छा थी कि सूर्यास्त होते-होते रात होने से पहले, इसी पहले दिन एक भी निशान जर्मनों के तीस दिन के शासन का कहीं न रह जाय। एक ने जाकर चौराहे से फाँसी के तख़्तों को उखाड़ दिया और जमी हुई बर्फ़ में से सीधे खम्भों के उखाड़ने की कोशिश में लगा। दूसरे ने उसे इस तरह जुटे हुए देखा तो अपनी आरी ले आया और काटकर उन्हें ज़मीन से बराबर कर दिया। स्त्रियाँ जल्दी-जल्दी अपने ख़राब हालत में पड़े हुए घरों में सफ़ेदी कर रही थीं और फावड़े और पचांगड़े लेकर उस गन्दगी को बाहर फेंक रही थीं जो जर्मनों ने बरामदों और ज़ीनों और बाहर के कमरों में फैला रखी थी। सब तरफ़ काम पूरे उत्साह से हो रहा था जैसे फ़सल की कटाई पर हुआ करता है।

उन मरदूदों का एक भी निशान कहीं न रह जाय, स्त्रियाँ फ़र्श को खुरचकर साफ़ करती और दीवारों पर सफ़ेदी करती हुई कह रही थीं।

'जिसमें उनका एक निशान तक भी कहीं न रह जाय!' कमांडेण्ट के

दफ़्तर में बच्चों ने धात के टुकड़ों, ख़ाली कारतूस के डब्बों और जर्मन वर्दियों के फटे चीथड़ों को इकट्ठा करते हुए दुहराया। लाल सैनिक कमर-कमर तक गहरी बर्फ़ में काम करते हुए जल्दी-जल्दी टेलिफ़ोन के तार बिछा रहे थे। लेफ्टिनेएट शालोव तार-सम्बन्ध स्थापित कर रहे थे। स्कूल की इमारत के अन्दर जर्मन सैनिकों से जिरह की जा रही थी। गाँववाले सुनने को अत्यधिक उत्सुक थे लेकिन वे समझते थे कि यह मामला फ़ौज के अधीन है और उन्हें उसके बीच में बाधा नहीं डालनी चाहिए।

'उन लोगों को मुँह लगाया जा रहा है!' टरपिलिखा ने उत्तेजित स्वर में कहा। 'उनसे सवाल और जिरह की जा रही है! उन्हें चाहिए शेड के पीछे ले जाँय उन्हें और एक एक की खोपड़ी गोली से उड़ा दें!'

'बहुत तुम समझती हो! जो कुछ भी जानकारी हमें उनसे मिल सकती है, हमें ले लेनी है; फिर उनको मार डालने से क्या फ़ायदा है?'

'अच्छी बात है, मगर फिर बाद में उनकी खोपड़ियों को गोलियों से उड़ाया ज़रूर जाय!'

'क़ैदियों की? क़ैदियों की जान कौन लेता है?'

टरपिलिखा ऐसे चौंकी जैसे उसे किसी ने भाला मार दिया हो। 'बड़ा अच्छा ख़्याल है! क़ैदी! तुमने देखा किस तरह वे हमारे क़ैदियों के साथ बर्ताव कर रहे थे, देखा था कि नहीं? क़ैदी! मैं तो उन्हें तेल के कड़ाह में पकवा दूँ और ज़िन्दा ही उनकी खाल उतरवा लूँ। मगर हम लोग करते क्या हैं? बहुत आराम से और प्यार से उन्हें जेल में बन्द कर देते हैं—बस!'

'यह हमारे सोचने-विचारने की बात नहीं है!' पेलचारिखा ने ज़ोर देकर कहा। 'क़ायदा यही होता है—क़ैदियों को ज़रूर ज़िन्दा रहने देना चाहिए...'

"अच्छे क़ायदे हैं! कौन-से क़ानून-क़ायदे रह गये हैं आजकल? हो सकता है, पिछली लड़ाई में ये बातें रही हों, लेकिन अब नहीं हैं। और यह भी क़ानून में है क्या कि बच्चों की हत्या की जाय, और लोगों पर ज़ुल्म तोड़े जाँय?'

दूसरी स्त्री ने एक आह भरी:

'तुम मुझे बता रही हो ? तुम खुद जानती हो, उन्होंने मेरे साथ क्या किया !'

'इसी से तो मुझे और भी ताज्जुब होता है, यह देखकर कि तुम इतनी बढ़-बढ़कर इस मिटे क़ायदे की हिमायत कर रही हो । क़ायदे होते हैं सैनिकों के लिए ! तुम उन्हें सैनिक कहती हो ? चीलरिये हूण हैं ये लोग तो !'

पेलचारिखा ने जवाब नहीं दिया वह हृदय में यही सोचती और समझती थी—सबों के विचार ऐसे ही थे । केवल वे यही महसूस करते थे कि जर्मनों की तरह कोई काम करना हमारे लिए शर्म की बात होगी ।

'वे लोग यहाँ आकर बैठेंगे, हमारी रोटियाँ तोड़ेंगे और फिर मौज से सही-सलामत अपने घर को चल देंगे । जैसे बाक़ी लड़ाई तक के लिए सेविंग्स बैंक में जमा हो गये !' टरपिलिखा ने खीझकर कहा ।

'तुम फ़िक्र मत करो; जो होना ज़रूरी है, वही सब होगा,' अलेक्ज़ेंडर ने स्त्रियों की बहस में दख़ल देते हुए कहा ।

'क्या उसके ख़िलाफ़ मैं कुछ कह रही हूँ ? क्या मैं सलाह देना चाहती हूँ लेफ्टिनेण्ट को, कि उसे क्या करना चाहिए ?'

'बड़े ताज्जुब की बात है !' अलेक्ज़ेंडर बुड़बुड़ाया और लँगड़ाता हुआ घर की तरफ़ को चल दिया । उसे एक दूसरा साइनबोर्ड पेण्ट करना था : 'स्कूल !' यह उतना अच्छा तो नहीं लिखा जायगा जितना कि पहलेवाला था, पर अगर वह जर्मन दरिद्रों के पंजों के निशान मिटाकर गाँव को देखने में फिर वैसा ही बना सकता था जैसा वह पहले था, तो उसमें कोई हर्ज नहीं था ।

एकाएक गीत से मस्त हवा में, स्वच्छन्द, खुले नीलाकाश को भेदती हुई एक घन-गरज सुनाई पड़ी । गीत थम गया, मानो किसी ने उसे पृथ्वी पर दे पछाड़ा हो । अपने घरों के आगे खेलते हुए बच्चे मूर्तिवत् जैसे के तैसे खड़े रह गये ।

'क्या था वह ?'

गरज फिर सुनाई दी, कानों को बहरा करती, घनघनाती हुई । सारा आकाश तोपों की गरज से काँप रहा था ।

'भारी तोपें छूट रही हैं...'

'वह तो ओख़ावी में होंगी, उस तरफ़ को।'

'यह तोप ज़ालेंट्सी में...'

'वह हमारे आदमी गोलाबारी कर रहे हैं!'

वे सब ध्यान से सुनने लगे। गरजती हुई तोपों की मार हो रही थी और फटते हुए गोलों की दड़दड़ाती प्रतिध्वनि वे लोग सुन रहे थे।

'उधर क्या हो रहा है?'

'लड़ाई चल रही है...'

'वे हमारी ही तोपें हैं, वे ज़रूर हमारी ही तोपें हैं...'

'यह कब से तुम्हें तोपख़ाने का इतना ज्ञान हो गया कि तुम यह फ़र्क़ बता-लेने लगीं?'

'मैं सुन सकती हूँ कि नहीं सुन सकती? यह शोर हमारी ही तोपों की तरफ़ से आ रहा है।'

उन्होंने लाल सैनिकों के चेहरों से उनके भाव पढ़ने की कोशिश की। लेकिन वे बिलकुल शान्त थे।

'हाँ वे हमारी ही तोपें हैं। हमें इस दरार को चौड़ा करना है।'

'दरार से तुम्हारा क्या मतलब है?'

'देखो न, यह इस तरह है: हम यहाँ तक घुस आये, लेकिन जर्मन हमारे पीछे भी हैं और हमारे अगल-बगल भी।'

'ठीक! वही तो मैं शुरू से कह रही थी—दरार।' टरपिलिखा बोल उठी। उसका चेहरा खिल उठा।

'तुमने ऐसी तो कोई बात नहीं कही थी।'

'क्या! तुमने जब सुना ही नहीं, तो फटाक् से तुम्हें बीच में बोलने की ज़रूरत नहीं। मैंने छूटते ही कहा था, दरार...साफ़ ज़ाहिर है, इसे कोई भी समझ सकता है, जब कि हम जानते हैं कि जर्मन लोग ओख़ावी में हैं...'

'अब तुम देखना ये जेरी-कायर भागते हुए इधर को आयेंगे...'

'यहाँ!' ओल्गा पलानचुक घबराकर बोल उठी।

'और अगर आयेंगे तो क्या!' टरपिलिखा ने कूल्हों पर दोनों हाथ

धरते हुए कहा। 'हम सब उनके लिए तैयार रहेंगे, अच्छी तरह उनका सामना करेंगे!'

'वे किस लिए आयेंगे इधर टहलने? सीधी पच्छिम को दूसरी सड़क जो है।'

'अगर उनमें से कोई ज़िन्दा बच गया, तो...'

वे लोग खड़े सुन रहे थे। कहीं दूर पर लड़ाई हो रही थी। तोपें छूट रही थीं। जर्मन सफ़ों के अन्दर दरार चौड़ी की जा रही थी।

लेफ्टिनेंट शालोव जर्मन क़ैदियों से जिरह कर रहा था। कमरा गर्म था मगर वे लोग खड़े-खड़े काँप रहे थे, उन सबको झुरझुरी छूट रही थी। उन खड़े-खड़ों को उसने देखा—हड्डहे जिस्म, फटे-हाल, जिस्म पर बदबूदार सड़े हुए ज़ख़्म। कमरे में गर्मी थी और जूएँ इस तरह काट रही थीं कि असह्य था। वे चुपके-चुपके कमांडर से आँखें चुराकर खुजाते जा रहे थे। कप्तान वर्नर के दस्ते में से कुल पाँच आदमी ज़िंदा बचे थे।

'इन सबको हमें पिछावे की तरफ़ भेज देना होगा। यहाँ इनके साथ हम कुछ नहीं कर सकते, शालोव ने निश्चय किया।

'उनको भेज दें!' एक हट्टा-कट्टा नौजवान बोला और अपनी भवें तान लीं। 'हमें उनका फ़ैसला यहीं, ऐन मौके पर करना चाहिए, साथी लेफ्टिनेंट।'

'यह तुम क्या बक रहे हो!'

'यह तो बड़ी ज़िल्लत की बात है कि हमारे आदमी इनके साथ इन्हें पहुँचाने जायँ, बर्फ़ में उनके साथ-साथ घिसटें और सब तरह से मुसीबत उठायें...'

'सार्जेंट को यहाँ भेज दो,' शालोव ने हुक्म दिया। वह इस विषय पर और बहस नहीं करना चाहता था।

वह उठा और एक क्षण ज़रा साँस लेने के लिए बाहर चला गया, कैदियों के साथ कमरे में पूरा एक घंटा बिताने के बाद उसे ऐसा मालूम हुआ, मानो खुद उसके जिस्म पर जूएँ रेंग रही हों, मानो उसके शरीर को खुद उनकी छूत लग गई हो, मानो उसकी वर्दी तक में उनके गंदे, बिना नहाये ख़ारिश-भरे जिस्मों की सड़ी हुई बदबू बस गई हो।

उसने बर्फ़-पाले की ठंडी हवा में एक गहरी साँस अपने सीने में भरी। नीलाकाश धूप की चमक से मुस्करा रहा था, लगातार गहरा पाला पड़ने की वजह से झिलमिल कर रहा था। यह किस गीत का स्वर दूर घरों से आ रहा था, कोमल, हृदय में बस जानेवाला, वह राग जिसने स्टेपीज़ मैदानों की हवाओं में जन्म लिया था, जिसमें झाग-भरी उन लहरों का शोर था जो समुद्र से मिलने जा रही हैं, चौड़े फैले हुए मैदानों की स्वतंत्रता थी। उसमें नीपर नदी के झीलों पर कज़ाकों की युद्ध-घोषणा के सुदूर-स्वर की प्रतिध्वनि थी, उसमें युक्रायना के नवयुवकों की, तुर्की गुलामी के ज़माने में वतन की तड़प थी, और सुदूर पथों पर घोड़ों के टापों की आवाज़ आ रही थी। लड़कियाँ गा रही थीं और ऐसा लगता था मानों गाँव का गाँव पाले की ठंड से भरे आकाश में झिलमिलाते सुनहरे सूर्य को देखकर, गीतों में फूट पड़ा था।

लाल सैनिक क़ैदियों को इमारत से बाहर ला रहे थे। ठीक उसी समय एक बड़ी भीड़ वहाँ इकट्ठा हो गई। स्त्रियों की दृष्टि अपने ऊपर पड़ते ही जर्मन कानों तक अपने कन्धे उठाते हुए, ठण्ड से काँपकर, दुबक-से जाते थे।

'इन्हें भेजे दे रहे हो, क्यों?' टरपिलिखा ने तीखे स्वर में पूछा।

'मैं उन्हें सदर दफ़्तर को भेज रहा हूँ,' शालोव ने हरे-हरे से फटे हुए लम्बे ओवरकोट पहने हुए उन मुट्ठी भर जर्मनों की ओर देखते हुए उत्तर दिया।

'वह है, वह, वह है, जिसने नौजवान लेवान्युक को फाँसी पर चढ़ाया था,' पेलचारिखा एकाएक चीख़ उठी।

सब औरतें दौड़कर आईं।

'कौन था वह, कौन था?'

'वह, वह, जिसके लाल-लाल बाल हैं! वह देखो! उस दिन सबने उसे देखा था। तुममें से हरेक ने उसे देखा था। वह लमठिंगा!' वह चिल्लाकर बोली।

'ठीक, ठीक, वही है, बिलकुल वही!'

भीड़ ने कैदियों को आकर और नज़दीक से घेर लिया। स्त्रियाँ आगे को गिरी पड़ती थीं, और जिस जर्मन के बाल उसकी टोपी में से बाहर को निकले

हुए थे, उसकी ओर इशारा करती जा रही थीं। वह समझ गया कि वे उसं के बारे में बातें कर रही हैं, और वह दुबककर अपने साथियों के पीछे हो गया।

'वह देखो उसे, कैसा छिपा जा रहा है। साथी लेफ्टिनेंट, वही है वह जिसने हमारे एक नौजवान को फाँसी पर चढ़ाया था!'

'क्या मतलब तुम्हारा नौजवान कहने से! मिटका सोलह से ज़्यादा का नहीं था! एक बच्चे को फाँसी पर चढ़ाया, उस चूहे, उस कायर ने!'

'सुनो लड़कियो, कुछ भी हो, इस बहस से आख़िर क्या निकलेगा? हमें अपना काम तो अपने ही हाथों करना चाहिए!' टरपिलिखा ने उन्हें आदेश किया।

लाल सैनिकों ने मुड़कर सन्देहात्मक दृष्टि से देखा।

'थोड़ा पीछे हटो, नागरिको, क्या सलाह हो रही है?' शालोव ने क्रोध में टरपिलिखा से पूछा। 'पीछे हट जाओ मैं कहता हूँ!'

'साथी कमांडर, वह यहाँ से ज़िन्दा नहीं जा सकता! हम लोग उसे यहीं ख़त्म करेंगे! और उसके बाद सब ठीक हो जाएगा' टरपिलिखा ने अकड़-कर कहा।

मालूम होता था कि जर्मन समझ गया, क्या होने जा रहा है, उसे बड़े जोरों की कँपकँपी चढ़ आई और उसके दाँत बजनें लगे।

'मैं तुम्हें यह बात समझा देना चाहता हूँ कि यहाँ अमन क़ायम रखने के लिए मैं ज़िम्मेदार हूँ, न कि तुम!' शालोव ने कठोरता से कहा।

फेडोसिया क्रावचुक भीड़ से निकलकर आगे आई।

'तुम किस लिए दूसरे लोगों के मामले में अपनी टाँग अड़ा रही हो, गोरपीना? किसने तुमसे इसमें कूद पड़ने के लिए कहा? तुम बूचरख़ाना यहाँ खोल देना चाहती हो, क्यों? काफ़ी ख़ून-खच्चर यहाँ नहीं हो चुका अभी? क्या तुम सोचती हो कि तुमसे ज़्यादा अक़्लमंद जज यहाँ कहीं नहीं है?'

टरपिलिखा एक कदम पीछे हटकर एकटक फेडोसिया को घूरने लगी; उसकी समझ में नहीं आया कि वह आख़िर क्या चाहती थी।

'तुम एकदम उसे ख़त्म कर देना चाहती हो? उसे आराम की मौत

मरने दें, क्यों ? एक या दो मिनट—और बस, ख़तम ! लेवान्युक और जो बच्चे और लोग यहाँ मारे गये हैं, उनके बदले में बस दो मिनट की तकलीफ़ ! अरे, उसे ज़िंदा ही रहने दो, उसे अपनी किस्मत के फ़ैसले का इन्तज़ार करने दो, उसे अपनी मुसीबत का प्याला धीरे-धीरे आख़ीर तक पीने दो ! उसे अपने देश को जाने दो और वहाँ जाकर उन्हें देखने दो कि सब बातों के लिए, एक-एक बात के लिए—और सिर्फ़ एक लेवान्युक के लिए ही नहीं, किस तरह कैसा बदला चुकाना पड़ता है !'

'ठीक कहती है !' पेलचारिखा बोली।

'बिलकुल ठीक कह रही हो तुम, फ़ेडोसिया,' दूसरी आवाज़ों ने समर्थन किया।

'मुझे एक बात कहने दो, गोरपिना ! इनमें जो भी आज मर जाते हैं, बड़े भाग्यवान हैं ! ज़िंदा ही रहने दो उन्हें और देखने दो कैसे उनकी फ़ौजें पीछे हटती जाती हैं, अपनी जान बचाने के लिए भागती हैं, भूखे तड़प-तड़पकर मरती हैं, स्टेपीज़ पर अपनी हड्डियों के पंजर छोड़ती जाती हैं। उन्हें देखने दो कैसे एक-एक झाड़ी, एक-एक पेड़ के पीछे से निकलकर लोग पचांगड़े और कुल्हाड़ियाँ लिये हुए उनके आगे आते हैं ! कैसे खाइयों में पड़कर वे मरते हैं और उन्हें वहाँ पानी की एक बूँद देनेवाला कोई नहीं होता है ! वह दिन देखने के लिए उन्हें जीने दो जब उनके शहर और गाँव धूल में मिला दिये जायँगे, यहाँ तक कि सिवाय राख और सूखे झाड़-झंखाड़ के कुछ नहीं रह जाएगा। उस दिन के लिए उन्हें ज़िंदा रहने दो जब खुद उनकी पत्नियाँ उन्हें कोसेंगी और उनके अपने बच्चे उन्हें बाप कहने से इन्कार करेंगे। और इधर तुम उस जर्मन को एक आसान मौत का तोहफ़ा देना चाहती हो ! बूढ़ी तुम हो गईं गोरपिना, मगर तुम्हारे अन्दर अक़ल नहीं आई। मरना तो बहुत आसान है, उसे ज़िन्दा रहने दो, उसे सौ साल तक ज़िन्दा रहने दो ! उसे मौत के लिए गिड़गिड़ाने दो जो उसके लिए नहीं आयेगी—मौत तक को इस जर्मन गन्दगी से मुँह फेर लेने दो !'

अपने ही शब्दों के आवेश से उसका गला बन्द होने लगा और वह चुप हो गई और अपने हाथों से सीने को दबाने लगी।

'जो कुछ तुम कहती हो, बिलकुल ठीक है, फ़ेडोसिया,' उसकी हिमायत में आकर पेलचारिखा ने कहा। स्त्रियों का दल बिखर गया।

दो लाल सैनिक कैदियों को लेकर सड़क पर आ गये। टरपिलिखा जहाँ थी वहीं खड़ी रही और एक-टक उनको जाता हुआ देखती रही।

'एख़!' निराश भाव से उसने आह खींची, 'तुम्हें देखकर तो कोई यही कहेगा कि तुम्हारे अन्दर बड़ा जोश है, लेकिन तुम्हारा जोश जल्दी ठएडा पड़ जाता है।'

'और तुम क्या सोचती हो कि फ़ेडोसिया क्राव्चुक के अन्दर जोश नहीं है?'

'मेरी समझ में नहीं आतीं उसकी ये बातें। मेरा तो अपना सीधा-सा उसूल है।'

सहसा वह वहाँ से हट गई और कान लगाकर सुनने लगी।

'मुझे ही ऐसा लग रहा है या कि सचमुच उन्होंने तोपें चलानीं बन्द कर दिया है?'

पुज़ीरिखा के भी कान खड़े हुए।

'सचमुच, तोपें तो बन्द हैं! वे बड़ी देर से बन्द हैं! लेकिन हमीं लोगों ने इन क़ैदियों के बारे में ऐसा झगड़ा उठाया कि कुछ मालूम ही नहीं हुआ।'

'मुझे ताज्जुब हो रहा है कि वे क्यों बन्द हो गईं? लड़ाई ख़त्म हो गई है क्या? हमें पता लगाना चाहिए। मगर किससे मालूम होगा?'

'मैं समझती हूँ कि कमांडेंट को मालूम होगा।'

जहाँ जंगल है, वहाँ दूर पर, एकाएक उन तोपों का बन्द होना इन स्त्रियों ने ही महसूस किया। शालोव खुद मिनट-मिनट पर दौड़कर कमरे में जाता था और ड्यूटी पर बैठा हुआ अर्दली टेलिफ़ोन पर लगा बैठा था।

'घएटी बजाये जाओ! बजाये जाओ! क्या वे जवाब नहीं देते?'

'मुझे कुछ भी सुनाई नहीं आता!'

'किसी को भेजो मालूम करे, कहीं टेलिफ़ोन की लाइन बिगड़ तो नहीं गई है? और तुम उन्हें घएटी बजा-बजाकर खुटखुटाते रहो...'

आख़िरकार टेलिफ़ोन की घंटी बजी।

लाल सैनिक ने कुछ जल्दी-जल्दी लिख लिया।

'वेल, क्या कहते हैं वह ?'

'हम लोगों ने ओखाबी और जेलेंट्सी फ़तह कर लिया है।'

शालोव कमरे से निकलकर सड़क पर आ गया। पहला व्यक्ति जिस पर उसकी दृष्टि पड़ी, टरपिलिखा थी।

'हम लोगों ने ओखाबी और ज़ेलेंट्सी फ़तह कर लिये हैं।'

उसने ज़ोर से तालियाँ बजाईं।

'तो इसी लिए तोपें वहाँ बंद हो गई हैं ?'

'इसी लिए तो।'

वह अपना पल्ला उठाये-उठाये मुज़िरीखा के पीछे-पीछे दौड़ गई।

'तुमने सुना पेलागेया, हमारी फ़ौजों ने ओखाबी और ज़ेलेंट्सी ले लिया है ? लेफ़्टिनेंट ने ख़ुद बताया है...जैसे ही टेलिफ़ोन की घंटी बजी, वह दौड़ा हुआ बाहर आया और मुझसे कहा : 'हम लोगों ने ओख़ाबी और ज़ेलेंट्सी फ़तह कर लिया है !' उसने कहा।

'हम लोगों ने फ़तह कर लिया है उन्हें !' पुज़िरीखा ऊँची गूँजती हुई आवाज़ से बोली।

'मैंने कहा था तुमसे, कहा था कि नहीं ? जैसे ही वहाँ सन्नाटा छा गया, मैंने कहा था कि मालूम होता है कि लड़ाई ख़त्म हो गई।'

'हाँ, लेकिन तुम यह नहीं जानती थीं कि उसका नतीजा क्या रहा...'

'कैसे नहीं जानती थी ? और क्या नतीजा रहता ? उन्होंने जर्मनों को मारकर भगा दिया है, दरार को और चौड़ा कर दिया है। समझीं ?'

'तेरा भला हो, सचमुच तुझे फ़ौजी मामलों के बारे में बहुत कुछ पता होने लगा !'

सदर दफ्तर में टेलिफ़ोन की घंटी बराबर बजती रही। शालोव ने मुँह-नाल के अंदर पुकारकर पूछा:

'कहाँ ? किस तरफ़ को ?'

सारे गाँव में शोर हो गया। लाल सैनिक चौराहे पर जमा हो रहे थे।

'किधर चल पड़े ? कहाँ जा रहे हो तुम लोग ?' स्त्रियों ने उद्विग्न स्वर में पूछा।

'हमें आगे बढ़ने का हुक्म मिला है।'

'किधर आगे बढ़ने का ?'

'पच्छिम की तरफ़, मा।'

स्त्रियों के सारे मनसूबे ही उलटे हो गये, उन्हें यह संभव-सा नहीं लग रहा था। फेडोसिया क्रावूचुक लेफ्टिनेंट के पास गई।

'यह क्या है ? सूप लगभग तैयार भी हो गया और तुमने अच्छी तरह अभी एक वक्त हमारे यहाँ खाना भी नहीं खाया...'

'फ़िक्र मत करो, मा। हमें भूख नहीं है। हमें आगे बढ़ने का हुक्म मिला है। और दूसरे लोग मेरा सूप आकर खाएँगे—एक दूसरा फ़ौजी दस्ता यहाँ आ रहा है। उनका यहीं पड़ाव पड़ेगा। तुम खूब जी भरकर उनकी दावत कर सकती हो !...'

सैनिकों को चल पड़ने की बेहद जल्दी थी। उन्होंने सूप के कटोरों में अपने चम्मच और आधी तोड़ी हुई रोटियाँ वैसी की वैसी छोड़ दीं।

'एख नौजवानो, अगर कहीं तुम हमारे यहाँ बस दो दिन और रुक जाते।' स्त्रियों ने आहें भरीं।

'शुक्रिया, लेकिन हमारे पास वक्त नहीं है। और लोग यहाँ आ रहे हैं, लेकिन हमें चल ही देना है। वे लोग वहाँ हमारे लिए इंतज़ार कर रहे हैं।'

'बेशक इंतजार कर रहे होंगे,' स्त्रियों ने आह भरी, और सड़क पर निकल आईं, जहाँ फ़ौजी दस्ता लाइन बनाकर खड़ा हो रहा था। बूढ़े और जवान सब देखने के लिए निकल आये। स्त्रियाँ आहें भर रही थीं। उनमें कुछ तो रोने लगीं। सोन्या लिमान ने एक जवान लाल सैनिक के गले में बाहें डाल दीं और आँसू आँखों में भरकर उससे लिपट गई।

'ज़रा सोंका को तो देखो ! उसने अभी से अपने लिए एक ढूँढ़ लिया !' स्त्रियाँ हँसकर आपस में कहने लगीं।

'फ़ारवार्ड, मार्च !'

'विदा जहाँ जाओ, फ़तह हो ! राज़ी-खुशी लौटकर आओ ! उन्हें खूब करारी मार दो !' भीड़ ने चिल्ला-चिल्लाकर नारे लगाये।

बढ़ते हुए सैनिकों के पावों के नीचे बर्फ़ कचर-मचर हो रही थी। सड़क

के किनारे-किनारे सैनिकों के साथ चलने की कोशिश करते हुए गाँव के लड़के-बच्चे दौड़ रहे थे, और स्त्रियाँ अपने दामन उठाये पीछे-पीछे तेज़-तेज़ चल रही थीं। दस्ता एक नीची पहाड़ी तक गया और वहाँ जाकर रुक गया।

पश्चिम में दूर-दूर तक चमचमाती हुई बर्फ़ का मैदान फैला हुआ चला गया था। धूएँ की एक पतली रेखा दूर पर शुभ्र आकाश को गँदला-सा कर रही थी, जहाँ अभागा लेवानेव्का, वह गाँव जिसमें जर्मनों ने आग लगा दी थी, अभी तक सुलग रहा था। उसकी ऊँची-ऊँची लपटें तो कई बार सुलग-सुलगकर ठंडी हो चुकी थीं, लेकिन राख में छोटी लपटें अब भी बार-बार जग जाती थीं, और स्निग्ध नीलाकाश को मटैले धूँए से धुँधला कर देती थीं। पहाड़ी चोटी से लेफ्टिनेंट शालोव ने पश्चिम की ओर देखा। उसके सामने बर्फ़ीला मैदान पड़ा हुआ था, युक्राइना स्टेपीज़ का अंतहीन मैदान, जो अब भी जर्मनों के अधिकार में था। पश्चिम की ओर वह फैला चला गया था, युक्राइनप्रांत, आग और रक्त से लाल, जिसके गीत गानेवालों के होंठो पर जमकर रह गये थे, जिसको जर्मनों के भारी जूतों ने रौंद डाला था, पीस दिया था, गंदा कर दिया था, जंजीरों से कस दिया था—लेकिन निर्भय युक्राइना, जिसको कोई झुका नहीं सकता, जो अब भी बराबर संघर्ष किये जा रहा था।

और उसने देखा इंद्रधनुष को जो आकाश में फैला हुआ था, एक चमकते हुए विमल पथ के समान, झिलमिलाते हुए रंगों के वैभव से भरा हुआ, जिसमें फूलों से उड़ा हुआ रंगीन पराग था—जिसमें जगली गुलाबो का पीला-गुलाबी, उद्यान की रानी गुलाब का चटक लाल, लिलैकपुष्प का नारंगी और उडलैंड का बैंगनी पराग झलक रहा था; और उसमें बर्च के घूमे हुए दलों की मुलायम हरियाली का कंपन था। और वह समस्त एक कोमल शुभ्र आभा में नहाया हुआ था। पूर्व से पश्चिम तक इन्द्रधनुष की घूमी हुई महराब अपनी झिलमिल पट्टी से पृथ्वी और आकाश का संबंध जोड़ रही थी।

शालोव अपने आदमियों की तरफ़ मुड़ा।

'फ़ारवर्ड, मार्च!'

लंबे-लंबे मिले हुए क़दम रखते हुए वे आगे बढ़ गये। गाँववाले इसी टीले पर खड़े रह गये। किसी के मुँह से कोई शब्द नहीं निकला, फ़ौजी दस्ता सड़क से होता हुआ उस अछोर चमकते मैदान की ओर, इन्द्रधनुष के वैभव की ओर, बढ़ गया।

दूरी पर धूँए के उन उड़ते हुए हलके बादल के टुकड़ों की ओर लाल सैनिक मार्च करते जा रहे थे जो भस्मीभूत लेवानेव्का की ओर इंगित कर रहे थे, उन गाँवों की ओर जो बर्फ़ीले ढूहों के बीच में दुबके पड़े थे। अपनी रायफ़लें मज़बूती से पकड़े हुए वे युक्राइना की उस धरती पर मार्च करते चले जा रहे थे जिसे जर्मनों ने रौंद दिया था, और जो जर्मनों के शिकंजे में कस चुकी थी—फिर भी जो अजेय थी, जिसे कोई दबा नहीं सकता था, और जो अब भी संघर्ष किये जा रही थी।

गाँववाले सैनिकों को अपनी आँखों पर ज़ोर देकर दूर, और दूर, जाते देख रहे थे, जिसके कारण उनकी आँखों में आँसू भी आ गये थे; पर वे मौन थे, वेदना से परिपूर्ण, मौन। तब तक वे वहीं खड़े रहे जब तक वे सैनिक नील सुदूर में फैले हुए बर्फ़ में इन्द्रधनुष की विविध वर्णों की आभा में लीन नहीं हो गये।